ISSN 0974-1100

पूर्वदेवा

सामाजिक विज्ञान शोध पत्रिका

PŪRVADEVĀ - A Social Science Research Journal

Peer Reviewed Bilingual International Research Journal
The Journal indexed in the UGC-CARE list.

वर्ष 29 * अंक 116

जनवरी-मार्च, 2024

प्रधान सम्पादक

डॉ. हरिमोहन धवन

मध्यप्रदेश दलित साहित्य अकादमी प्रकाशन

मध्यप्रदेश दलित साहित्य अकादमी
❐ संक्षिप्त विवरणिका ❐

तथागत् बुद्ध के संदेश 'अत्त दीपो भव' तथा डॉ. अम्बेडकर के आव्हान 'संगठित रहो, शिक्षित बनो, संघर्ष करो' से अनुप्राणित प्रदेश के प्रमुख दलित समाजसेवियों, साहित्यकारों एवं बुद्धिजीवियों के सम्मिलित प्रयास से सांस्कृतिक एवं ऐतिहासिक परम्परा से समृद्ध नगर उज्जैन में एक स्वशासी संगठन के रूप में 'मध्यप्रदेश दलित साहित्य अकादमी' की स्थापना की गई। तदुपरान्त म.प्र.सोसायटी रजिस्ट्रेशन एक्ट,1973 के अन्तर्गत (क्रमांक 19066 दिनांक 18 नवम्बर,1987 पर) संस्था का विधिवत् पंजीकरण कराया गया है। अकादमी का प्रधान कार्यालय उज्जैन स्थित है। ।

❐ घोषित लक्ष्य

अकादमी का लक्ष्य समाज के शोषित–पीड़ित दलितजनों को अपने मानवीय अधिकारों एवं समृद्ध सांस्कृतिक विरासत से अवगत कर, उनमें नवीन चेतना का संचार करना और शोषण व असमानता के विरूद्ध संघर्ष के लिए सतत् प्रेरित करना है। इस निमित्त दलित साहित्य सृजन एवं शोध–अनुशीलन तथा तदुनुरूप परिवेश का सजृन करना है। साथ ही दलितों के मानवोचित सामान्य अधिकारों की उपलब्धि के लिए उन्हें सशक्त अभिव्यक्ति प्रदान कर अपनी सक्रिय वैचारिक–साहित्यिक पहल द्वारा उनकी सामाजिक–सांस्कृतिक अस्मिता की समाज में पुनसर्थापना का प्रयास करना है।

❐ अकादमी की प्रमुख गतिविधियाँ :

निर्धारित कार्य योजना के अनुसार अकादमी की प्रमुख गतिविधियाँ एवं उल्लेखनीय उपलब्धियाँ एवं संचालित गतिविधियाँ अधोलिखित हैं :

❐ सामाजिक विज्ञान शोध केन्द्र की स्थापना

अकादमी की विशेष योजनानुसार उज्जैन में अनुसूचित जाति के विकास एवं समस्याओं पर केन्द्रित एक उच्चस्तरीय अध्ययन–अनुसंधान केन्द्र स्थापित किया गया है। जिसके अन्तर्गत एक समृद्ध ग्रन्थालय, शोधपत्र–पत्रिकाऐं, शोध–अध्ययन कक्ष, म्यूजियम आदि अन्य आवश्यक अनुसंधान सुविधाएँ उपलब्ध है।

❐ ग्रन्थालय एवं प्रलेखन केन्द्र

अकादमी के ग्रन्थालय में दलित साहित्य, भारतीय समाज व्यवस्था, धर्म.दर्शन, राजनीति, अर्थशास्त्र, इतिहास आदि विषयों पर प्रमुख ग्रंथ संग्रहित हैं। ग्रन्थालय में देश के विभिन्न भागों से प्रकाशित दलित समस्याओं पर केन्द्रित पत्र–पत्रिकाएँ, जर्नल्स आदि संग्रहित किये गये हैं। ग्रन्थालय में शोध–अध्ययन की विशेष सुविधाऐं उपलब्ध कराई जाकर उसे एक समृद्ध प्रलेखन केन्द्र के रूप में विकसित किया जा रहा है ।

❐ राष्ट्रीय सम्मेलनों, प्रान्तीय सम्मेलनों, राष्ट्रीय शोध संगोष्ठियों का आयोजन, कार्यशाला, व्याख्यानमाला, जयंती, स्मृति व्याख्यान कार्यक्रमों का आयोजन आदि

❐ दलित साहित्य अकादमी पुरस्कार

अकादमी द्वारा दलित साहित्य, इतिहास, कला एवं संस्कृति के क्षेत्र में सृजित उत्कृष्ट कृतियों, ग्रन्थों को पुरस्कृत करने के उद्देश्य से उच्चस्तरीय 'दलित साहित्य अकादमी पुरस्कार' की स्थापना की गई है।

❐ शोध पत्रिका "पूर्वदेवा" का प्रकाशन–'पूर्वदेवा' का वर्ष 1994 से नियमित प्रकाशन किया जा रहा है जिसके अन्तर्गत माह–मार्च, 2024 तक 116 अंकों का नियमित प्रकाशन किया जा चुका है जिसमें 1024 से अधिक शोध आलेख प्रकाशित किये जा चुके हैं

❐ पुस्तक प्रकाशन – पुस्तक, पाण्डुलिपि प्रकाशन योजनान्तर्गत अब तक 12 पुस्तकों का प्रकाशन किया जा चुका है। साथ ही राष्ट्रीय सम्मेलन प्रसंग विशेष पर स्मारिकाओं का प्रकाशन भी किया गया है।

❐ अकादमी भवन व परिसर – प्रशासकीय भवन, जिसके अनतर्गत अकादमी कार्यालय, ग्रन्थालय एवं शोध केन्द्र एवं संत कबीर सभागृह संचालित है। अकादमी का प्रधान कार्यालय – बाणभट मार्ग (केन्द्रीय विद्यालय सम्मूख) उज्जैन मध्यप्रदेश में स्थित 1.672 हेक्टेयर क्षेत्रफल के भूखण्ड पर अवस्थित है।

पी.सी. बैरवा–सचिव **डॉ. हरिमोहन धवन**–अध्यक्ष

पूर्वदेवा

सामाजिक विज्ञान शोध पत्रिका

PŪRVADEVĀ **A Research Journal of Social Sciences**

Peer Revied Bilingual International Research Journal
This Journal is included in the UGC-Consortium for Academic and Research Ethics

वर्ष 29, अंक 116 **जनवरी–मार्च, 2024**

❐

प्रधान सम्पादक

डॉ. हरिमोहन धवन

❐

प्रकाशक

पी.सी. बैरवा

मध्यप्रदेश दलित साहित्य अकादमी

बाण भट्टमार्ग, सेन्ट्रल स्कूल के सामने, उज्जैन (म.प्र) 456010

दूरभाष (0734) 2518737

E-mail : mpdsaujn@gmail.com Website : www.mpdsa.org

पूर्वदेवा

सामाजिक विज्ञान शोध पत्रिका

परामर्श मण्डल

डॉ. प्रकाश बरतुनिया
पूर्व कुलाधिपति– बाबा साहेब अम्बेडकर केन्द्रीय विश्वविद्यालय, लखनऊ

डॉ. अनिल दत्त मिश्रा
प्रतिष्ठित गांधीवादी विद्वान व वरिष्ठ उपाध्यक्ष, सुलभ अन्तर्राष्ट्रीय सामाजिक सेवा संगठन, नईदिल्ली

डॉ. रामगोपाल सिंह
पूर्व आचार्य, डॉ. बी. आर. अम्बेडकर सामाजिक विज्ञान विश्वविद्यालय, महू (म.प्र.)

डॉ. जयप्रकाश कर्दम
वरिष्ठ साहित्यकार एवं सम्पादक, दलित साहित्य वार्षिकी, नईदिल्ली

डॉ. रमेशचन्द्र जाटवा
पूर्व अतिरिक्त संचालक, उज्जैन संभाग, उच्च शिक्षा विभाग, मध्यप्रदेश

डॉ. डी. डी. बेदिया
आचार्य एवं निदेशक, व्यवसाय प्रबंध संस्थान, विक्रम विश्वविद्यालय, उज्जैन

सम्पादक मण्डल

डॉ. ज्ञानचन्द्र खिमेसरा
पूर्व आचार्य अर्थशास्त्र व प्राचार्य, शास.स्नातकोत्तर महाविद्यालय, मन्दसौर

डॉ. प्रभा श्रीनिवासुलु
पूर्व आचार्य इतिहास व प्राचार्य, शास. माधव महाविद्यालय, उज्जैन (म.प्र.)

डॉ. शैलेन्द्र पाराशर
पूर्व आचार्य समाजशास्त्र व अध्यक्ष, डॉ. अम्बेडकर पीठ, विक्रम विश्वविद्यालय, उज्जैन

डॉ. प्रेमलता चुटैल
पूर्व आचार्य, हिन्दी अध्ययनशाला, विक्रम विश्वविद्यालय, उज्जैन

डॉ. अरूण कुमार
प्राध्यापक,राजनीति विज्ञान, शासकीय तिलक महाविद्यालय, कटनी (म.प्र.)

प्रधान सम्पादक

डॉ. हरिमोहन धवन
आचार्य, राजनीति विज्ञान व पूर्व प्राचार्य, उच्च शिक्षा विभाग, (म.प्र.)

प्रकाशक : पी. सी. बैरवा

© स्वात्वाधिकारी : मध्यप्रदेश दलित साहित्य अकादमी,
बाणभट्ट मार्ग, सेन्ट्रल स्कूल के सामने, उज्जैन (म.प्र.)

इस अंक का मूल्य रूपये 150/–

वित्तीय सहयोग
भारतीय सामाजिक विज्ञान अनुसंधान परिषद, नईदिल्ली

सम्पादन व प्रकाशन सर्वथा अवैतनिक एवं अव्यवसायिक

वर्ष 29, **अंक** 116 **जनवरी–मार्च, 2024**

पूर्वदेवा

सामाजिक विज्ञान शोध पत्रिका

वर्ष 29 अंक 116 जनवरी–मार्च, 2024

❐ अनुक्रम ❐

1. बौद्ध धर्म के तीर्थक्षेत्र : एक अध्ययन –डॉ. रमेश रोहित 1
2. कोल राजा भैंसासुर : एक ऐतिहासिक अध्ययन –डॉ. सुधा सोनकर 6
3. प्रधानमंत्री जनधन योजना का विश्लेषणात्मक अध्ययन –प्रो. सुमन कोचर, डॉ. एच.एस. भाटिया 16
4. राष्ट्रीय शिक्षा नीति 2020 जेण्डर समानता की ओर एक कदम –डॉ. कीर्ति सिंह 23
5. वैश्विक मुद्दे : लैगिंक समानता और महिला सशक्तिकरण –डॉ. भारत भूषण 32
6. सार्क संगठन की उपलब्धियाँ, वर्तमान चुनौतियां एवं समाधान –विकास भड़िया 39
7. फुनान (कम्बोडिया) साम्राज्य की स्थापना में भारतीय संस्कृति ऐतिहासिक विश्लेषण –अनुराग वर्मा 46
8. राष्ट्रीय आन्दोलन में डॉ. भीमराव अम्बेडकर का योगदान एक विश्लेषणात्मक अध्ययन –ऋषि कुमार 56
9. विधिक उपचार की अवधारणाः अपराधिक विधि के संदर्भ में–कविता शुक्ला 66
10. बौद्ध धर्म में तांत्रिक समावेश –किस्मत कुमारी 70
11. दलित कहानिकारों की कहानियों में सामाजिक चेतना–ज्ञानेश्वरी रौतिया 82
12. हरियाणा की आर्थिक स्थिति का विश्लेषणात्मक अध्ययन (1920–47 ई.) –निखिल कुमार 88
13. सूर्योपासना–निरंतरता एवं परिवर्तन की ऐतिहासिकता, समाज, संस्कृति और पर्यावरण (वैदिक काल से गुप्त काल तक)–मधु , चंद्रशेखर 100
14. भारत–रूस सांस्कृतिक सहयोग –डॉ. राखी कुशवाह, डॉ विनोद खोब्रागडे 109

15. भारतीय राजनीति एवं गांधीवादी दर्शन
—लोकेश कुमार डेविड, डॉ.शैलेंद्र सिंह 118

16. कार्योजित महिलाऐं एवं बच्चों की देखभाल : एक समाजशास्त्रीय अध्ययन
—संजय कुमार, डॉ. पंकज सिंह 122

17. गढ़वाल हिमालय में शहरीकरण की प्रक्रिया का एतिहासिक अध्ययन —डॉ. अर्जुन सिंह, डॉ.नवरत्न सिंह 132

18. EWS Reservations in India: Historicity and Evidence in Action
-Dr Jagir Kaur, Pranay Khattar 144

19. A Comparative Study of Public and Private Health Insurance Sector in India -Dr. Dharminder Singh, Dr Lalee Sharma 150

20. Comparison of Value Discussion Model with Value Analysis Model in Terms of Value Clearification of B.Ed. Students of Indore City -Dr. Anju Baghel 161

21. African Gandhi Nelson Mandela Life Struggle, Values and His Lesson -Dr. Kiran Bala 165

22. Water Accessibility and Social Discrimination A Case Study of Kuldomari Village -Lalta Prasad 172

23. Gandhi, Gandhism and India's Soft Power Diplomacy
-Divyapani Dwivedi 183

24. A Revelation of Life-Experomces in Dr. B.R. Ambedkar's Waiting for a Visa -Dr. Pramod Kumar 190

पूर्वदेवा में प्रकाशित लेख एवं उनमें व्यक्त विचार लेखकों के निजी विचार है. सम्पादक व प्रकाशक का उनसे सहमत होना आवश्यक नहीं है.

पूर्वदेवा– सामाजिक विज्ञान शोध पत्रिका
वर्ष 29, अंक, 116, जनवरी–मार्च, 2024 पृ. 1–5

UGC Care Listed Journal
ISSN 0974 -1100

बौद्ध धर्म के तीर्थक्षेत्र : एक अध्ययन

डॉ. रमेश रोहित (रत्नशील राजवर्धन)
सहायह प्राध्यापक, थेरवाद, साँची बौद्ध–भारतीय ज्ञान अध्ययन विश्वविद्यालय,
साँची, रायसेन, (म.प्र.) – 464661
E-mail: rameshrohit14@gmail.com Mob. 8839973215

विश्व के इतिहास में तथागत बुद्ध का स्थान सबसे महत्वपूर्ण है। जिस तेजस्वी व्यक्तित्व से संसार ने सबसे पहले मनुश्यता सीखी हैं। जिसकी दीप्ति से भारत के निश्चयात्मक इतिहास पर सर्वप्रथम आलोक पड़ा है। जिस दिन भगवान ने बुद्धत्व प्राप्त किया तथा उन्होंने परिनिर्वाण में प्रवेश किया, उसके बीच उन्होंने जो कुछ जहाँ कहीं, जिस किसी से कहा, उसी के संग्रह का प्रयत्न शिलालेख गुफा, चैत्य–गृह, विहार, बौद्ध–चित्रकला, स्तूपों आदि के माध्यम से किया गया है। ऐसी स्थिति में गौतम बुद्ध के जीवन से संबंधित महत्वपूर्ण स्थान एवं तीर्थक्षेत्रों का परिचय देना आवश्यक है।

बौद्ध धर्म के तीर्थक्षेत्र का उद्देश्य पुराने तथ्यों के विश्लेषण द्वारा नया दृष्टिकोण और नूतन तथ्यों की स्थापना करना है। वर्तमान युग में प्रचालित (बौद्ध तीर्थ स्थलों में) समस्याओं को दूर करने के लिए यह शोध पत्र अत्यंत महत्वपूर्ण भूमिका निभा सकता हैं, अतः इस दृष्टि से इस शोध पत्र द्वारा बौद्ध संस्कृति के महत्त्वपूर्ण तीर्थक्षेत्र का संशोधनात्मक अध्ययन करके विद्यार्थियों, प्रबुद्धजन तथा जनसाधारण को इसकी महत्वपूर्ण जानकारी उपलब्ध कराना साथ ही भारतीय समाज का इस दिशा में ध्यान आकर्षित करना तथा उन्हें जागृत करना है। बौद्ध तीर्थक्षेत्रों के जीवन दर्शन को केन्द्र में रखकर बौद्ध तीर्थ स्थानों की उपयोगिता को रेखांकित करना है।

भारत में बौद्ध तीर्थक्षेत्र के विभिन्न रूप हैं, शिलालेख, गुफा, चैत्य–गृह, विहार, बौद्ध–चित्रकला स्तूप, चैत्य, बोधिवृक्ष, संग्रहालय, त्यौहार आदि। विहार– विहार वह स्थान होता है जहाँ भिक्षु–भिक्षुणियाँ निवास करते हैं। प्राचीन काल में इनका उपयोग वर्षावास के समय भिक्षु निवास स्थान के रूप में करते थे साथ ही शिक्षा के प्रमुख केन्द्र भी थे। विविध शैक्षणिक क्षेत्रों के साथ बौद्ध धर्म के महत्त्वपूर्ण स्थान के बीच संबंध तेजी बड़ा, जो आज एक महत्वपूर्ण विषय बन गया है।

बौद्ध महा तीर्थ क्षेत्र

तथागत बुद्ध ने महापरिनिर्वाण से पूर्व कहा था कि श्रद्धावान आर्य श्रावक को इन चार स्थानों का वैराग्य एवं सुख की वृद्धि हेतु दर्शन करना चाहिए।

1. ''इध तथागतो जातोति आनन्द! सद्धस्स कुलपुत्तस्स दस्सनीयं संवेजनीय ठानं।
2. इध तथागतो अनुत्तरं सम्मासम्बोधि अभिसम्बुद्धो ति आनन्द! सद्धस्स कुलपुत्तस्स दस्सनीयं संवेजनीय ठानं।
3. इध तथागतेन अनुत्तरं धम्मचक्कं चवत्तितन्ति आनन्द! सद्धस्स कुलपुत्तस्स दस्सनीयं संवेजनीय ठानं।
4. इध तथागतो अनुपादिसेसाय निब्बानधातुया परिनिब्बुतो ति आनन्द! सद्धस्स कुलपुत्तस्स दस्सनीयं संवेजनीय ठानं।''[1]

जहाँ तथागत उत्पन्न हुये (लुम्बिनी) यह स्थान श्रद्धालु कुल – पुत्र के लिये यह चार स्थान दर्शनीय, संवेजनीय या वैराग्यप्रद हैं। यहाँ तथागत ने अनुत्तर सम्यक सम्बोधि को प्राप्त किया (बोधगया)। जहाँ तथागत ने अनुत्तर सर्वश्रेश्ठ धर्म चक्र का प्रवर्तन किया (सारनाथ)। जहाँ तथागत अनुपादिषेश निर्वाण धातु को प्राप्त हुये (कुशीनारा)। यह स्थान श्रद्धालु कुल – पुत्र के लिये यह चार स्थान दर्शनीय, संवेजनीय या वैराग्यप्रद हैं।

लुम्बिनी बौद्ध तीर्थों में भगवान् बुद्ध का जन्म स्थान लुम्बिनी का नाम और महत्त्व सबसे पहले आता है। यहीं पर शाक्य मुनि का जन्म हुआ था। ''इस स्थान की आधुनिक स्थिति **रुम्मिनदेई** है जो नेपाल की तराई है।''[2] अब बदलकर पुराना लुम्बिनी हो गया है। यहाँ महामाया नामक एक मन्दिर था साथ ही उसे हटाकर नये सिरे से निर्माण हुआ है। लुम्बिनी वर्तमान नेपाल देश के अन्तर्गत आता है, यह स्थान गोरखपुर जिले के नौतनवा रेलवे स्टेशन से 8 मील पश्चिम में है।

बोधगया

बौद्ध तीर्थक्षेत्र के इतिहास में यह दूसरा स्थान है, जहाँ सम्बुद्ध द्वारा दिव्य ज्ञान (सम्बोधि) प्राप्त किया था। इसका प्राचीन नाम उरुवेला था। यहाँ पर भगवान् ने छः वर्ष तपस्या की और बुद्धत्व प्राप्ति के बाद भी अनेक बार यहाँ विहार किये थे। बौद्ध धर्मियों के लिये इससे बढ़कर श्रेष्ठ और पवित्र स्थान दूसरा नहीं है। बोधगया में मुख्य स्थल ''महाबोधि मंदिर, बोधिवृक्ष, व्रजासन, अनिमेशलोचन स्तूप, चक्रमण, रत्नगृह, अजपाल निग्रोध वृक्ष, मुचलिन्द झील एवं रजत वृक्ष,''[3] आदि की महत्वपूर्ण जानकारी प्राप्त होति है।

यहाँ तथागत बुद्ध का वज्रासन है, जिस पर बैठकर उन्होंने आपूर्व और अनुत्तर सम्बोधि प्राप्त की थी। यहीं पर परम् पुनीत बोधि–वृक्ष है, जिसके नीचे भगवान ने ध्यानस्थ होकर सम्बोधि प्राप्त की थी। संसार में कौने–कौने से तीर्थ यात्री यहाँ आकर इस पवित्र बोधि–वृक्ष की पूजा करते हैं। बोधगया का महाबोधि विहार 160 फीट ऊँचा है, जो प्राचीनतम है। यहाँ अनेक विहार, चैत्य एवं स्मारक बने हुए थे। आज भी विश्व के देशों से यात्री यहाँ आकर वज्रासन के दर्शन एवं पूजा करके कृत–कृत्य हो जाते हैं। विश्व के बौद्धों का सबसे पवित्र तीर्थ स्थान है।

सारनाथ

यह बौद्ध तीर्थों का तीसरा स्थान है। ऋषियों के परिनिवृत्त होने के कारण ही इस स्थान को ऋषिपत्तन भी कहा गया हैं। यहीं पर प्रथम 60 अर्हतों का संघायन हुआ था। यहीं पर भिक्षु संघ के साथ भगवान ने प्रथम वर्षावास किया था और यहीं पर भगवान ने धर्म–प्रचार के लिए चतुर्दिक में भिक्षुओं को भेजा था। इस प्रकार सारनाथ बौद्ध संस्कृति का जन्म स्थान हैं।

सारनाथ में भगवान बुद्ध ने अपना प्रथम उपदेश दिया, इसलिए इसे बौद्ध धर्म के जन्म का सूचक मानना चाहिए। यह धर्मचक्र–प्रवर्तन का स्थान है। इसलिए शिलालेखों में इसका निर्देष 'सद्धर्मचक्र–प्रवर्तन–विहार,''[4] के नाम से किया गया है।

कुशीनगर

बौद्धों का चौथा अति पवित्र तीर्थ स्थान कुशीनगर है। भगवान् तथागत बुद्ध जीवन के 45 वर्षों तक भिक्षु संघ के साथ उत्तर में कजंगल से लेकर पश्चिम में कुरू प्रदेश की राजधानी तक भ्रमण करके सब प्राणिमात्र के हित–सुख के लिए कल्याण कारक धम्म का उपदेश देते हुए, यहीं परिनिर्वाण को प्राप्त किया था। कुशीनगर में हरिरण्यवती नदी के किनारे मकुट बन्धन चैत्य और भोग नगर में आनन्द चैत्य भी थे। बलिहरण वन खण्ड, देववन, शालिवन, आम्बवन आदि आराम चैत्य भी थे, जिन्हें वन चैत्य भी कहा जाता था।

श्रावस्ती

आज श्रावस्ती एक स्वतन्त्र जिला बना हुआ है। श्रावस्ती के जेतवन विहार के दरवाजे के दोनों ओर स्तम्भ थे, इनमें एक के सिर पर धर्म–चक्र था और दुसरे के सिर पर वृषभ था, ये दोनों 70 फीट ऊँचे थे। बुद्ध काल में यह भारत का सबसे बड़ा समृद्ध नगर था। यहाँ भगवान् ने 25 वर्षावास किये थे। बुद्धवाणी का अधिक भाग यहीं पर उपदेशित किया गया था। श्रावस्ती के जेतवन उद्यान के अन्दर चार ओर भी कुटियाँ बनी हुई थीं, जिनके नाम हैं– करोरी कुटी, कौंसम्ब कुटी, गन्ध कुटी और सललघर या सललागार। प्रथम तीन कुटियाँ सेठ अनाथपिण्डिक ने बनवायी थीं और सललघर राजा प्रसेनजित ने बनवाया

संकास्य

इस नाम का आज संकीसा नामक गाँव है। ''यहाँ भगवान अपनी माँ विसारी देवी को उपदेश देने के लिए आए थे।''[5] अब यहाँ एक टीला बौद्धों का स्मारक हैं। इस टीले की यहाँ के लोग गढ़ कहते हैं। यह टीला फीट ऊँचा है। यहाँ एक बुद्ध विहार भी बन गया है। उसमें कुछ भिक्षु भी रहते हैं और अब तो यह पर्यटन क्षेत्र बनने जा रहा है।

राजगृह

इसे आजकल राजगिर कहते हैं। यह शक्तिशाली मगध राज्य की राजधानी थी। यह बौद्ध मतावलम्बियों के लिए पवित्र स्थान हैं। प्रथम संगीती (महासभा) के समय उसके अध्यक्ष–महाकश्यप महास्थविर के निवास स्थान को पिप्पल गुहा कहते हैं। गृधकूट पर्वत, जहाँ भगवान अक्सर निवास करते थे, राजगृह के समीप ही है। आज भी उसके किले के अवशेष यहाँ मौजूद हैं। यहाँ सर्वप्रथम बुद्ध विहार का निर्माण मगध राजा श्रेणिक बिम्बिसार द्वारा कराया गया था। राजगृह में ही ''भगवान का उपस्थाक बनने से पूर्व महाथेर आनन्द ने भगवान के सामने आठ बातों के लिए निवेदन किया था।''[6]

वैशाली

तथागत बुद्ध के समय में यह क्षेत्र लिछिवियों का सर्वप्राचीन गणतंत्र रहा है। यह आज के वैशाली जिले के हाजीपुर से 18 मील उत्तर में है। आज इसको बसाढ़ या बसिया बसाढ़ भी

कहते हैं। यही गाँव प्राचीन वैशाली है। एक मत के अनुसार इक्वाकु वंश की रानी अलंबुशा ने अपने पुत्र विशाल के नाम पर इसका नामकरण वैशाली रखा था। दूसरा मत हैं कि वैशाल नगरी की चारदीवारी उसकी जनसंख्या की निरन्तर वृद्धि के कारण तीन बार विशाल की गयी थी इसलिए उसका नाम वैशाली पड़ा था। यह मत आचार्य बुद्ध घोष (380–440ई) ने अपनी अट्ठकथा, 'समन्त पासादिका' में दिया है। यहाँ के वज्जी क्षत्रिय भगवान् के भक्त थे। भगवान ने उपदेश देते सय जगह–जगह वैशाली की चर्चा की है और वज्जियों की प्रशंसा की है। इस श्रेष्ठ लड़ाकू जाति पर भगवान् अत्यन्त प्रिय भाव रखते थे। लिछिवियों के श्रेष्ठ आचरण का भगवान ने अनेक बार उल्लेख किया था।

इस प्रकार 8 प्रमुख बौद्ध तीर्थ क्षेत्रों का अध्ययन किया अब और भी खण्डित एवं बचे हुए अनेक तीर्थ क्षेत्र हैं जहाँ बौद्ध संस्कृति का कभी क्रमिक विकास हुआ था।

अन्य बौद्ध तीर्थ क्षेत्र

चैत्यगिरि उपवन (साँची), सतधारा, सोनारी, अंधेर, मुरेलखुर्द, ग्यारसपुर, भरहूत, देउरकोठार, अहिच्छत्र, तुसारन विहार (प्रतापगढ़), कनकमुनी बस्ती का स्तूप, पवनी में बौद्ध स्तूप, बौद्ध महाविहार/विश्वविद्यालय, वल्लभी, तक्षशिला, नालंदा, ओदन्त पुरी, विक्रमशिला महाविहार, जगत्तल्ला महाविहार, विक्रमपुर, जयेन्द्र महाविहार, गिरनार, अनकपल्ली, कांचीपुरम्, कोडुंगलूर, नागार्जुनकोण्डा, श्रीमूलवासम् एवं नागपट्टम्, लद्दाख और कश्मीर, दांतेन, किन्नौर, पूर्वाचल में प्राचीन बौद्ध विहार, दार्जिलिंग, सिक्किम, बौद्ध गुफाएँ, चैत्य, एवं चित्रकला, बाग की बौद्ध गुफायें, पंचमढ़ी, धर्मनाथ, अजंता, एलोरा गुफाएँ, कन्हेरी गुफाएँ– बोरीवली, मुंबई, कार्ला गुफाएं– पुणे–मुंबई रोड, भाजा गुफाएँ, एलीफेंटा गुफाएं– मुंबई, पीतलखोरा गुफाएं, बेडसे गुफाएं, हाकाली गुफाएँ–मुम्बई, जोगेश्वरी गुफाएँ– मुंबई, पांडावलेनी (गुफाएँ)– नासिक, सालबर्डी गुफाएँ–मोरसी, जुन्नार गुफाएँ– पुणे, कोलेवी की गुफाएँ (झालावाड़), उदयगिरि, धांक, सिद्धसर, तलाजा, सान्हा, कोंडाणे एवं पितलखोरा।

अनभिज्ञात बौद्ध तीर्थ क्षेत्र एवं स्थान

सिहोर, सिरपुर, कौशाम्बी, मथुरा, टड़वा महन्त (बहराइच), नागरा, मनसर–रामटेक–नागपुर, वैराट, शेरगढ़ (बारा), नोह (भरतपुर), पुष्कर, कांपिल्य, अमरावती, गोआ, कर्नाटक। अभिलेखों से ज्ञात होता है कि छठी शताब्दी ईसवी में गोआ में और उसके आस – पास बौद्ध धर्म का प्रचार था। अशोक के समय से ही कर्नाटक में बौद्ध धर्म का प्रभाव स्थापित हो गया था। सातवाहन राजाओं के समय में भी यहाँ अनेक विहारों का निमाण किया गया।

कूट शब्द :– शिलालेख, गुफा, चैत्य–गृह, विहार, स्तूप एवं बोधिवृक्ष।

शिलालेख– ऐसा पत्थर जिस पर बुद्धोपदेश लिखा गया हैं। **गुफा**– पहाड को काटकर बनाई गुफा जिसमें भिक्षुगण निवास कर सके। **चैत्य–गृह**– चैत्य बौद्धों का पूजा स्थान माना जाता, साथ ही एक स्तूप भी होता तथा भिक्षु ध्यान लगाने के लिए करते है। चैत्य भाब्द भी चिता से उत्पन्न है। **विहार**– भिक्षु–भिक्षुणों के लिए निवास स्थान साथ ही शिक्षा केन्द्र भी है। **स्तूप** –स्तूप का भााब्दिक अर्थ ढेर। यह टीलेनुमा अर्धवृत्ताकार एक संरचना है, जिसके अंदर अर्हंत भिक्षुओं के अवशेषों को सुरक्षित रखा जाता है। **बोधिवृक्ष**– जिस वृक्ष के नीचे बैठकर भगवान बुद्ध ने (बुद्धत्व को) ज्ञान प्राप्त किया है।

❐

सन्दर्भ –

1. महापरिनिब्बानसुत्त, सम्पादक भिक्षु धर्मरक्षित, पृ. 142,
2. बौद्ध धर्म के 2500 वर्ष, संपादक पी.वी.बापट, पृ. 239.
3. भारत के प्रमुख बौद्ध तीर्थ–स्थल, डॉ. प्रिय सेन सिंह, पृ. 13–15
4. बौद्ध धर्म के 2500 वर्ष, संपादक पी.वी. बापट, पृ. 240.
5. बौद्ध धर्म एवं संस्कृति, लेखक डॉ. बी.पी. अशोक, पृ. 116.
6. महान बौद्ध संगीतियाँ, संपादक रोशन बौद्ध, पृ. 24.

ग्रन्थ सूची –

– भिक्षु, धर्मरक्षित, महापरिनिब्बान सुत्त, मोतीलाल बनारसीदास, दिल्ली,1983.
– बापट, बी.पी. बौद्ध धर्म के 2500 वर्ष, सूचना और प्रसारण मंत्रालय, भारत सरकार, दिल्ली, 1997.
– सांकृत्यायन, राहुल, बौद्ध–संस्कृति, आधुनिक पुस्तक भवन, कलकत्ता,1953.
– भिक्षु, निर्गुणानन्द महाथेरो, बुद्ध विश्व विजय, सारिपुत्त प्रकाशन, औरंगाबाद,1999
– खोब्रागडे, मुंशी एन. एल.,बौद्ध कालीन भारत का इतिहास, समता प्रकाशन, नागपुर, 2011.
– डॉ. सिंह, प्रिय सेन, भारत के प्रमुख बौद्ध तीर्थ स्थल,ईस्टर्न बुक लिंकर्स, दिल्ली, 1993.
– भदन्त धर्मकीर्ति महाथेरो, भगवान बुद्ध का इतिहास एवं धम्मदर्शन, नागपुर, 2013.
– राम प्रसाद बौद्ध, भारत के प्राचीन बौद्ध विश्वविद्यालय एवं महाविहार, बाराबंकी उत्तर प्रदेश, 2121.

पूर्वदेवा– सामाजिक विज्ञान शोध पत्रिका
वर्ष 29, अंक, 116, जनवरी–मार्च, 2024 पृ. 6–15

UGC Care Listed Journal
ISSN 0974 -1100

कोल राजा भैंसासुर : एक ऐतिहासिक अध्ययन

डॉ. सुधा सोनकर
PDF (ICSSR) इतिहास विभाग, सामाजिक विज्ञान संकाय, काशी हिन्दू विश्वविद्यालय,
वाराणसी, (उ.प्र.) 221005
E-mail - sonkersudhajuloo@gmail.com Mob. 7275301889

सारांश

भारतीय समाज निरन्तर परिवर्तनों से गुजरता रहा है। समय के साथ कई महापुरूशों, ज्ञानियों, राजाओं, समाज सुधारकों ने अपने कार्यों एवं व्यवहारों से इतिहास के पन्नों पर अपना नाम दर्ज कराया है। इनमें से कुछ को देवता के समान पूज्यनीय माना गया जिन्होंनें समाज का पथ प्रदर्शन एवं संरक्षण और संवर्धन किया है। ऐसे ही एक महान लोकप्रिय राजा हुए है जिन्हें भारतीय जनमानस में राजा भैसासुर अथवा महिशासुर के नाम से जाना जाता है। भारतीय समाज के तथाकथित मुख्य धारा में राजा भैसासुर अप्रिय, बुराई का प्रतीक माना जाता है। वहीं दुसरी तरफ आदिवासी, वनवासी समाज के लोग जिनमें कोल, गोंड, बैगा, उरांव, मुरीया, भुमिया, मुसहर, अहिर, गड़ेरिया एवं अन्य राजा भैसासुर को देवता मानते हैं उनकी पूजा करते हैं। प्रस्तुत भाोध पत्र में राजा भैसासुर के विशय में पुरातात्विक स्रोतों, साहित्यिक स्रोतों, लोकगीतों एवं प्रचलित कहानियों के माध्यम से विस्तारपूर्वक ऐतिहासिक वर्णन किया गया हैं।

कीवर्ड– *आदिवासी, संस्कृति, मिथक, भैसासुर, महिषासुर, असुर, लोकप्रथा।*

भूमिका

इतिहास वह साधन है जिससे अतीत से ज्ञान प्राप्त कर अपने भविश्य को सुधार सकते है। अपने इतिहास को जानकर, पढ़कर मनुश्य गौरवान्वित महसूस करता है, मानव के अन्दर आत्मबल जाग त होता हैं। भारतीय समाजिक व्यवस्था में कई मानव समुदाय ऐसे हैं जो दबे–कुचले, मुख्य धारा से अलग–थलग पड़े एकाकी जीवन जीने को मजबूर हैं। मुख्य धारा के लोग उनके साथ अनुचित व्यवहार करते हैं। वे उनके साथ उठना–बैठना, खान–पान किसी भी तरह का सम्बन्ध रखने में अपमान महसूस करते हैं। इस समाज में दलित, आदिवासी जन

आते हैं जिनका ना तो अपना कोई इतिहास है नाही अस्तित्व जिसके कारण उन्हें नीच और अछूत समझा जाता है।

सरकार द्वारा शिक्षा, एवं नौकरियों में आरक्षण देकर इनके उत्थान का प्रयास किया जा रहा है परन्तु समाज में लोगों के मानसिक विचार में परिवर्तन नहीं लाया जा सका हैं। ऐसे में समाज के भरे मानसिक विचार को बदलने के लिए इतिहास महत्वपूर्ण भूमिका निभा सकता है। जिस प्रकार इतिहास में वर्णित होने के कारण ब्राहम्णों को ज्ञान देने वाला माना जाता है। क्षत्रियों को वीरता एवं शौर्य का प्रतीक माना जाता है जिसके कारण इन समाज के लोगों में आत्मबल भरा रहता है। वही इतिहास में वर्णित होने के कारण दलितों, आदिवासियों को अछूत, अधिकारहीन माना जाने लगा, उनके प्रति उच्च समाज के लोगों का दृष्टिकोण हीनता से भरा हैं। कहने का तात्पर्य कि इतिहास में लिखे होने के कारण ही यह असमानता का व्यवहार पीढ़ी दर पीढ़ी सदियों से हमारे समाज में विद्यमान है। अतः बिना इतिहास को बदले हम समाज में व्याप्त इस असमानता के व्यवहार का दूर नही कर सकते है। अतः आवश्यकता हैं हमें इतिहास के नवनिर्माण की जिसमें शोषितों, पराजितों, हॉशियें पर पड़े समाज का इतिहास लिखा जाये ताकि सदियों से बढ़ती जा रही इस असमानता की खाई को दूर किया जा सके ।

इतिहास लेखन की दृष्टि से भारतीय समाज मूलतः दो वर्गों में विभाजित हैं एक वर्ग जिसका अपना इतिहास हैं उसके इतिहासकार है। वह अपने वर्ग के लोगों का इतिहास बहुत ही ईमानदारी पूर्वक एवं वैभवशाली ढ़ंग से लिख रहा था और लिख रहा है। दुसरी तरफ वह वर्ग है जिसका इतिहास तो अत्यन्त समृद्ध हैं परन्तु उसका लेखन कम हुआ है साथ ही वर्तमान शासको, सरकारों द्धारा उनके इतिहास दबाया–छिपाया और विकृत किया गया है। जिससे वह पहले वर्ग के द्वारा लिखे गये इतिहास को अपना इतिहास समझता है। यह बात न सिर्फ इतिहास तक सीमित है बल्कि वह प्रथम वर्ग द्वारा थोपे गये रीति–रिवाजों, त्यौहारों, परम्पराओं को भी अपना समझता। इस सांस्कृतिक घाल–मेल के कारण सत्य–असत्य एवं तथ्य एवं मिथक का पता लगाना बड़ा कठिन हो गया है। स्वंय इतिहासकार भी इससे खुद को अलग नही कर पातें। परन्तु आदिवासी समाजिक परम्पराओं, पुरातात्विक स्रोतों एवं भाषाविज्ञान के माध्यम से यह तय किया जा सकता है कि तथ्यात्मक इतिहास क्या है।

इतिहास और मिथकों से जुड़े कुछ प्रासांगिक बिंदु, जो कि भ्रामक इतिहास के प्रति हमारी समझ को बढ़ा सकते है। निश्चित ही मिथक इतिहास नहीं है, लेकिन मिथक पूरी तरह सत्य के विपरीत भी नहीं होता है। मिथक असल में एक परम्परागत कहानी होती है जो तथ्यों और कपोल कथाओं का फंतासी और वास्तविकता का आपस में घालमेल कर देती है। यह लोगों के इतिहास से या प्राकृतिक घटनाओं से जुड़ी होती है जिसमें चमत्कारी किरदार या घटनाएं पिरोई जाती है। अपने समृद्ध प्रतीकों और विभिन्न संदर्भों से जुड़ी हुई फंतासियों से परिपूर्ण ये मिथक तथ्यों को उद्घाटित भी करते है और छुपाते भी है।[1]

भारत में इतिहास लेखन के बजाए पुराणों और साहित्यों के माध्यम से मिथक लेखन का निर्णय एक सोचा विचारा निर्णय था और ऐतिहासिक तथ्यों को दबाकर या विकृत करके समाज को बंद और गुलाम बनाने वाले जातीय ढ़ाचों में कैद रखने के लिए बनाई गई रणनीति का एक महत्वपूर्ण हिस्सा था। इन्ही बन्द समाज जिसके लिए पूर्व– आधुनिक और जातिवादी भारत एक

बढ़िया उदाहरण बनता है जिसमें व्यक्ति सांकेतिक रूप से दिखाए जाते हैं, व्यक्तियों को उनके गुणदोशों से नहीं, बल्कि उनके जाति आधारित और वर्गीय प्रतीकों से पहचाना जाता है। जिसका एक महत्वपूर्ण उदाहरण खुद महिषासुर की कथा है।[2] जो कि उनके नाम से ही स्पष्ट है महिष का अर्थ संस्कृत ग्रन्थों में भैस बताया गया है। जबकि वही पर महिषी का अर्थ रानी बताया गया जब महिषी का अर्थ रानी है तो महिष का अर्थ राजा होना चाहिए। इस तरह से महिषासुर का अर्थ असुरों का राजा होना चाहिए था। महिषा एक मानव है परन्तु पुराणों के गल्प में उसे भैंस तक सीमित कर दिया गया।[3]

भारत जैसे बन्द समाज में साहित्य, कला में अत्यंत अलंकृत, प्रतीकात्मक और वास्तविकता से दूर चित्रण (जो कि महिषा–दुर्गा से जुड़ी कला और साहित्य में स्पष्ट नजर आता है) करते हुए शासक वर्ग का उद्देश्य ही यह था कि समाज और संस्कृति के बारें में भ्रमजाल और रहस्य प्रचारित किए जा सके और लोगों का सच्चाई और ऐतिहासिक तथ्यों से दूर रखा जा सके। इसके लिए भारत जैसे बंद समाज के कलमधारियों ने परंपरागत रूप से ऐतिहासिक तथ्यों के बदले मिथकों और कथाओं को, जीवनियों के बदले मिथकीय चरित्र–चित्रण को, सच्चाई के बजाए मूर्तियों व प्रतीकों के विपरीत वर्णन को, तर्क व विज्ञान की जगह अंधविश्वास को महत्व दिया।

भैसासुर की पहचान – भैंसासुर, महिषासुर म्हसोबा का नाम है। उनका नाम म्हसोबा है। चूंकि वो असुरों के राजा है, इसलिए उनका नाम महिषासुर भी है। महिषासुर वर्तमान कर्नाटक राज्य मैसूर के राजा थे। मैसूर, मैसुरू का अपभ्रंश हैं जो कि महिषासुर अथवा महिषासुराना उरू से लिया गया हैं। जो कि स्थानीय कन्नड़ भाषा का शब्द है, जिसका अर्थ है, महिषासुर का शहर। जहां पर महिषासुर का शासन था। देवी चामण्डेश्वरी ने मैसूर के पास स्थित एक पर्वत पर उसे मार डाला। चामुण्डेश्वरी के सम्मान में पर्वत का चामुण्डी पर्वत तथा स्थान का नाम महिषासुर के नाम से मैसुरू पड़ा।[4]

बी.पी. महेश के अनुसार महिष, मैसूर के महान शासक थे। बौद्ध संस्कृति और विरासत के उत्तराधिकारी, महिष का शासन प्रजातान्त्रिक सिद्धान्तों ओर मानवता पर आधारित था। दुर्भाग्य से मैसूर के इतिहास को पौराणिक आख्यानों तले दबा दिया गया है। इतिहास में मैसूर या महिषासुर का सबसे पहले वर्णन सम्राट अशोक के काल में 245 ईसा पूर्व में मिलता हैं। पाटलिपुत्र में तीसरी बौद्ध धम्मसंगीति के बाद, अशोक ने महादेव नामक बौद्ध भिक्षु को बुद्ध दर्शन एवं शिक्षा का प्रचार करने और उनके आदर्शों पर आधारित कल्याणकारी राज्य की स्थापना करने के लिए इस क्षेत्र में भेजा था। महादेव ही आगे चलकर महिष के नाम से प्रसिद्ध हुए और उन्होंने महिष मंडल राज्य की स्थापना की। वर्तमान कर्नाटक राज्य के उत्तरी भाग में अशोक के कुछ शिलालेख पाए गए है। यहां से प्राप्त ऐतिहासिक इमारते और पुरातात्विक अभिलेख जो यह प्रमाणित करते है कि महिषासुर का यहां शासन था।[5]

भारतीय समाज के प्रत्येक वर्ग अनुसूचित जनजाति, अनुसूचित जाति, पिछडी जाति की परम्पराओं और धार्मिक विश्वासों में भैसासुर विद्यमान है। आदिवासी समुदाय कोल, गोंड, असुर, हो, उरांव, मुसहर, भैसासुर को पूर्वज एवं स्वयं को भैसासुर का वंशज कहते है। उन्हें नायक अथवा राजा के रूप में याद करते हैं। कई प्रकार के समस्याओं से रक्षा करने वाले, दुख विकार को नष्ट करने वाले मानते हैं और देवता के रूप में पूजा किया जाता है। कोल आदिवासी

समुदाय सदियों से आज तक भैसासुर की पूजा करते आ रहे। वे उन्हें वीर, पराक्रमी, संरक्षक मानते है। चैत नवरात्र के महीने में भैसवार गांव घोरावल में भैसासुर के देवस्थान पर कोल आदिवासी उनकी पूजा करते हैं। उन्हें मुर्गा, सुअर, दारू, रोर आदि चढ़ाया जाता है।[6] वहीं पिछडे जातियों में पशुपालक पशुओं का रक्षा करने वाले देवता के रूप में पूजा जाता है, तो कभी भैस के रूप में एक बुरी आत्मा का प्रतीक माना जाता है।

भारतीय समाज में प्रचलित अवधारणाओं के आधार पर भैसासुर अथवा महिषासुर एक राक्षस है। जो कि महाबली और प्रतापी राजा हैं जिसके अत्याचार से तीनों लोक के सारे प्राणी, देवता दुखी हो गये थे। तब देवी दुर्गा ने देवताओं के आहवान पर उसे युद्ध में परास्त कर उसका वध किया और देवताओं की रक्षा की।

भारतीय समाज के मन मस्तिष्क पर ऐसी ही छवि फिल्मों, नाटकों, मीडिया, पुराणों, ऐतिहासिक ग्रन्थों, साहित्य के माध्यम से बनाने का भरसक प्रयास किया गया है। उत्सवों, त्यौहारों में पूजा–पाठ पण्डालों में ऐसी ही मूर्तियों का प्रदर्शन कर पीढ़ी दर पीढ़ी नाकारात्मकता को दिखाया, बताया और समझाया जा रहा हैं कि यही सत्य है। भारतीय जन मानस इन उल्लासों, उहा–पोह एवं दैनिक जीवन की परेशानियों के बीच यह जानने का प्रयास नहीं करता कि जो हम देख रहें, पढ़ रहें है या जिस पर हम श्रद्धा एवं विश्वास कर रहें है, उसकी क्या वास्तविकता है, उसका क्या इतिहास है, उसके पीछे क्या वैज्ञानिक तर्क हो सकते है।

यह बात सत्य हैं कि जिस समाज का इतिहास नहीं होता उसका अस्तित्व नहीं होता। इसलिए वह दूसरे के द्वारा बताये गये इतिहास, संस्कृति परम्परा को अपना समझता उसी का निर्वाहन करता है। इस सांस्कृतिक उथल–पुथल के कारण वह स्वंय की परम्पराओं, त्यौहारों और रीति–रिवाजों को भुलता चला जाता है। भारत में यही प्रथा बहुत शीघ्रता से प्रचारित–प्रसारित की जा रही है। ताकि भारतीय मूलनिवासी लोगों के इतिहास को समाप्त कर शासक वर्ग का इतिहास उजागर किया जा सके।

भैसासुर अथवा महिषासुर नाम का अर्थ –

भैसासुर या महिषासुर दोनों ही एक व्यक्ति को सम्बोधित करने के लिए प्रयोग किया जाता है। लोकव्यवहार में प्रचलित नाम भैसासुर है। भैसासुर को ही संस्कृत ग्रन्थों में महिषासुर के नाम से सम्बोधित किया गया है। भैसासुर और महिषासुर का जब हम सन्धि–करते हैं तो ज्ञात होता है कि भैस+असुर को जोड़ कर भैसासुर तथा महिष+असुर को जोड़ कर महिषासुर बना है। भैस, महिष और असुर शब्द पर भाषाविज्ञान के दृष्टिकोण से अध्ययन करेंगें। सर्वप्रथम यहां पर हम भैस शब्द पर विचार करें तो ज्ञात होता है कि बौद्ध साहित्यों में भैसज्ज का अर्थ होता है दवा। बौद्ध साहित्यों में बोधिसत्वों को भेसज्ज कहा गया जोकि औषधि विज्ञान के ज्ञाता होते थे। विनय पिटक में भैसज–स्कन्ध में औषधि और उसके बनाने के नियम व साधन तथा चीड़–फाड़ आदि की चिकित्सा का उल्लेख मिलता है।[8]

तथागत बुद्ध भिक्षुओं से औषधि निर्माण की विधि का उल्लेख करते है इसलिए उनको बौद्ध साहित्य में महाभैसज कहा गया है।[9] पालि हिन्दी कोश में भेसज्ज का अर्थ दवाई बताया गया है।[10] नेशनल लाइब्रेरी ऑफ मेडिसिन में प्रकाशित एक शोधपत्र के अनुसार आयुर्वेदिक

चिकित्सा विज्ञान में औषधि चिकित्सा का प्रमुख महत्व दिया जाता है जो कि बहुत अच्छी तरह से विकसित उप अनुशासन है जिसे भैसज्य कल्पना कहते है। अर्थात आयुर्वेद में भैसज्य का अर्थ औषधि होता है।[11] कहने का तात्पर्य है कि प्राचीन काल में भैसज्य एक औषधि का ज्ञाता वर्तमान चिकित्सक के समान था जो कि लोगों की चिकित्सा करता था। अतः भैसासुर का तात्पर्य है एक असुर बोधिसत्व अथवा बौद्ध भिक्षु जो कि औषधि का ज्ञाता अथवा चिकित्सक है। नाकि कोई भैस के सिर वाला मानव।

आदिवासी समाज की स्मृतियों में जीवंत रहना कि भैसासुर हमारे राजा हैं और हमारे दुःख, तकलीफ विकार को हरते है, का यही अर्थ लगाना चाहिए कि वह एक चिकित्सक है जो अपने ज्ञान से लोगों के शारीरिक और मानसिक विकारों, रोंगो, अकुशलों एवं अन्य समस्याओं को दूर करता है। साथ ही वह राजा हैं तो उसने बड़े स्तर पर अपने राज्य में स्वास्थ्य सुविध ाओं का विकास किया होगा, जैसाकि हमारे समक्ष उदाहरण हैं सम्राट अशोक जिन्होंने न सिर्फ मानव चिकित्सा के लिए बल्कि अन्य पशुओं के चिकित्सा के लिए भी स्वास्थ्य केन्द्रों की व्यवस्था कि थी।[12]

महिश शब्द पर दृष्टि डालें तो ज्ञात होता है कि मिहिष का सर्वाधिक पुराना अर्थ ''महा शक्तिमान'' है। यह मह् धातु में ''इशन'' प्रत्यय जोड़कर बना है। जिसमें गुरूता का भाव हैं। गुरूता के भाव के लिए ''मह्'' धातु से अनेक शब्द बने हैं यथा महा, महान, महत्व, महिमा आदि। भारत मे ंजब राजतंत्र का विकास हुआ, तब महिष का एक नया अर्थ ''राजा'' हो गया कारण कि ''महाशक्तिमान '' धरती पर राजा ही होते है।[13]

भारतीय वाड.मय में ''महिष'' का अर्थ भैसा'' पहली बार स्मृति–ग्रन्थों में हुआ है। स्मृति–ग्रन्थों से पहले कहीं भी ''महिष'' का अर्थ भैसा नहीं मिलता है। महिष का अर्थ भैसा होना भाषाविज्ञान में अर्थापकर्ष का नमूना है। शब्दों के अर्थ परिवर्तित होते रहते हैं। वही कभी ऊपर उठ जाता है, कभी ज्यों का त्यों रह जाता है तथा कभी नीचे आ जाता है। अर्थ परिवर्तन का एक कारण नस्लीय भेदभाव भी है। चूंकि पुराने समय के प्रायः राजा नस्लीय वर्ण के आधार पर काले रंग के थे। इसलिए ''महिष'' का एक अर्थ रंग के आधार पर भैसा'' भी हो गया। निष्कर्ष यह है कि वर्तमान में महिष'' के मुख्य रूप से तीन अर्थ प्रचलित हैं– 1– महाशक्तिमान 2– राजा 3 भैसा।[14]

इस प्रकार से महिष शब्द का अर्थ–विकास तीन चरणों में हुआ है। इसका अर्थ महाशक्तिमान'' पहले चरण का है। दूसरे चरण में इसका अर्थ ''राजा'' हुआ और तीसरे चरण में इसका अर्थ विकास भैसा के अर्थ में हुआ है। जिस समय में देश के राजा असुर काले नस्ल के लोग हुआ करते थे, उस समय में महिष का अर्थ द्वितीय चरण से गुजर रहा था। इसलिए महिषासुर का सही अर्थ असुरों का राजा है, भैसासुर नहीं।[15]

असुर शब्द पर भाषाविज्ञान के दृष्टिकोण से प्रकाश डालें तो ज्ञात होता है कि ''असुर'' का प्राचीन और सही अर्थ राक्षस नहीं है। वैदिक कोश में लिखा है कि असुराति ददाति इति असुरः जो असु अर्थात प्राण दे, वह असुर ''प्राणदाता'' है। प्राख्यात कोशकार वी. एस. आप्टे ने भी असु'' का अर्थ ''प्राण'' किया है। हिंदी के प्रसिद्ध कोशकार रामचन्द्र वर्मा भी इस अर्थ से सहमत हैं।[16]

वास्तव में हिंदी और संस्कृत का ''असुर'' शब्द इसी ''असु'' (प्राण) शब्द से निर्मित हुआ है। ''असुर'' का निर्माण ''असु+र से हुआ है जबकि अज्ञानियों ने इसे ''अ+सुर'' से निर्मित माना है। ''असुर'' शब्द असु में ''र'' जुड़ने से बना है। यह ''सुर'' (देवता) में ''अ'' जुड़कर नहीं बना है। असुर का असु मूल शब्द है। इसमें अ को अलग नहीं किया जा सकता है। यदि ऐसा करते हैं तो भाषाविज्ञान के अनुसार भ्रामक व्युत्पत्ति के शिकार हैं। ''सुर'' देवता का निर्माण अज्ञानवश हुआ है। ''असुर'' मौलिक शब्द है। इसमें ''सुर'' कहीं से स्वतंत्र रूप से जुड़ा हुआ नहीं हैं।[17]

अतः भाषा विज्ञान से पूर्णतः स्पष्ट है कि भैसासुर अथवा महिषासुर एक व्यक्ति का नाम है जो प्राचीन समय में असुरों का राजा था। जो परमाज्ञानी, औषधिज्ञाता, न्यायप्रिय, लोकतान्त्रिक एवं करूणाशील बोधिसत्व थे। वह अपने प्रजा का संरक्षक समाज एवं राज्य का हितचिन्तक था। नाकि एक भैस के सिर वाला, क्रूर, खूंखार, वेश बदलने वाला, दुराचारी जैसाकि पुराणों, साहित्य में लिखा गया है। ब्राहम्ण साहित्य में बुद्ध बौर बौद्धो को असुर, राक्षस, दानव, दैत्य कहकर हीन भाव से सम्बोधित किया गया है।[18] जोकि ब्राहम्णों का बौद्धों के प्रति विरोध ा की भावना को प्रदर्शित करता है। भैसासुर उसी विरोध का परिणाम है कि उसे मिथकों में चासनी से सराबोर कर दिया गया ताकि शोध करने वाला चासनी में ही फिसलता रहें वह तथ्य तक पहुंच ही न पाये।

इतिहासकार विजया महेश कहते हैं ''माही'' शब्द का अर्थ है जो दुनिया में लाता है। अधिकांश स्वदेशी राजाओं की तरह महिषासुर न केवल एक पढ़ा–लिखा और भाक्तिशाली राजा था, बल्कि उसके पास 177 बुद्धिमान सलाहकार भी थे। उनके देश में होम और यज्ञ जैसी विनाशकारी धार्मिक प्रथाओं के लिए कोई जगह नहीं थी। उनका राज्य प्राकृतिक संसाधनों से समृद्ध था। कोई भी भोजन, आनंद या धार्मिक संस्कारों के लिए अंधाधुंध जानवरों को नहीं मार सकता था। महत्वपूर्ण बात यह थी कि किसी को भी खाली बैठने की अनुमति नहीं थी। यह सुनिश्चित करने के लिए कि कोई पेड़ नहीं काटेगा महिषासुर ने अपनी भूमि में जंगलों की रक्षा के लिए कई कर्मचारियों को नामित किया था। इनका मानना है कि महिषासुर राज्य के लोग धातु ढलाई तकनीक के विशेषज्ञ थे।[19]

डी.डी. कोसाम्बी ने अपने पुस्तक कल्पना से यथार्थ में महिषासुर का नाम म्हसोबा बताया है। उत्तर प्रदेश का महोबा जिला उसके नाम पर ही पड़ा है। जहां पर महिषासुर स्मारक भी विद्यमान है। उन्हें गांव का देवता कहा जाता है। पशुपालक और खेती–किसानी से जुड़े हुए लोग उनकी पूजा करते हैं। भारत में अति प्राचीन काल से मातृपूजा अथवा मातृदेवीयाँ पूजी जाती रही हैं। ये मातृदेवीयाँ स्वतंत्र, स्वछंद एवं अपने में परीपूर्ण थी। उन्हें किसी पुरूष की आवश्यकता नहीं थी। भारत के चौक, चौराहों, गांवो के बाहर खेतों में उनका स्थल होता है। इन देवियों के हर क्षेत्र में अलग–अलग नाम प्रचलित रहें है। उनके नाम पर ही स्थानों का नाम पड़ गया। कहीं–अम्बा, आई, माई, जगुबाई, आदि।[20] इन्ही मातृदेवी के पास समय के साथ गाँव के देवता को स्थापित किया जाना लगा जो सम्भवतः म्हसोबा, महिषासुर थे। जिसे दुर्गा–पार्वती ने मार डाला था। गाँव में इसके पिण्ड की स्थापना मातृदेवी के प्रतिक्रिया स्वरूप था। म्हसोबा के पूज्यस्थल को कोई स्त्री छू नहीं सकती है।[21]

मध्यप्रदेश, छत्तीसगढ़, झारखण्ड में असुर परंपरा खास तौर से गोंड, बैगा, असुर, हलबा आदिवासी समुदायों के अलावा कुछ अनुसूचित जाति एवं पिछ़डी जाति के बीच मौजूद है। यहां भैसासुर के नाम से अनेक गांव, छोटे टीले, मिट्टी या पत्थर के चबूतरे या स्थान मिल जाएंगे। छत्तीसगढ़ बस्तर के बारासुर क्षेत्र में गोंड और हलबा बाहुल्य इलाके में असुर परंपराओं को संजोए हुए हैं। यहां कई गाँवों में भैसासुर की पूजा ग्राम देवता के रूप में होती है। इनका स्थान गाँव के बाहर या खेतों में एक पत्थर या मिट्टी के पिंडी के रूप में होता है। फसल की पैदावार बढ़ाने और गाँव को बुरी बलाओं से बचाने के लिए भैसासुर की पूजा की जाती है। भैसासुर की पूजा करने वालों में मुख्य रूप से गोंड, मुरिया, मडिया, दोरला, भतरा, परजा, हलबा आदिवासी होते है।

रसेल ने अपनी पुस्तक द ट्राइब्स एण्ड़ कास्ट ऑफ द सेन्ट्रल प्रोविंस ऑफ सेंट्रल इंडिया 1916 में लिखा है कि मध्य भारत में भैसासुर से संबंधित अनुष्ठान बृहत पैमाने पर किए जाते है। गोंड जनजाति अपने देवता बूढ़ादेव को सुअर अर्पित करते है जबकि निम्न जाति के हिन्दू भी भैसासुर को सुअर चढ़ाते है। दोनों ही फसलों के रक्षक माने जाते है। भैसासुर का प्रतीक गाँव के बाहर खेत में रखा गया एक पत्थर होता है। रात में जब तेज हवाओं से फसलें झुक जाती है तो माना जाता है कि भैसासुर उनके ऊपर से गुजरे हैं।[22]

देशावली नामक देवता ग्राम्य देवता है जो अपनी पत्नी के साथ सरन या पवित्र कुंज में निवास करता है। ये बहुधा गाँव के निकटवर्ती जंगल में एक निश्चित स्थान पर होता है। प्रत्येक गाँव का अपना एक पृथक देशावली देवता होता है। यह देवता अच्छी फसल के लिए उत्तरदायी है। कृषि कार्य सम्पन्न होने पर इसे भंस चढ़ायी जाती है।[23]

खेती का कार्य आरम्भ करते समय वे देवताओं का स्मरण करते हैं। फसल को बोने से पहले वे कहते हैं **'भुइया भुइया धरती माता, ठाकुर देव, भैसासुर; खूब पैदा करिये' महाराज।'** यह कहकर वे एक मुट्ठी अनाज प्रत्येक देवता के नाम से हवा में फेंकते हैं। फसल तैयार होने के बाद पुरोहित बैगा तथा कुलदेवता के नाम से अगउआ निकालते हैं और इसके बाद ही फसल का उपयोग करते हैं।[24]

भैसासुर एवं पुरातत्व

सारे पुराण देवासुर संग्राम के कथाओं से भरे पड़े हैं। पुराणों में वर्णित देवताओं और असुरों के कथाओं से तथ्यों की पड़ताल किया जाय तो ज्ञात होता है कि पराजित असुरों के पुरातात्विक साक्ष्य मौजूद है, उनके नाम पर आधारित गाँव, कस्बे, जिले आज भी उनके भौगोलिक क्षेत्र का यशगान करते है। पुराण साहित्य में वर्णित कथाओं का यदि हमें पुरातात्विक साक्ष्यों के मिलान करने से ज्ञात होता है कि मिर्जापुर के घोरावल क्षेत्र के भैसवार गांव, भैसासुर का देवस्थान है। जहाँ पर उनकी प्राचीन मूर्ति खेतों से जोतने के दौरान जीर्ण–शीर्ण अवस्था में प्राप्त हुई है। भैसासुर की मूर्ति के अवलोकन से ज्ञात होता है कि वह कोई बौद्धिस्ट राजा कि मूर्ति हो सकती है, उनके सिर पर भैसे के सींघ के आकार का मुकुट, कानों में कुण्डल और गले में भव्य हार है। मूर्ति का बायां हाथ अभय मुद्रा में है। यह एक बोधिसत्व है।[25]

भैसासुर स्मारक– भारतीय पुरातत्व सर्वेक्षण के लखनऊ मंडल के महोबा उपमंडल के अंतर्गत चौका तहसील कुलपहाड़ के भैसासुर नामक पुरास्थल की खोज भारतीय पुरातत्व सर्वेक्षण के

कर्मचारियों द्वारा 14 जनवरी 1924 को की गई थीं।[26] उन्होंने बताया की यह स्मारक चंदेलों के शासन काल में लगभग ग्यारहवीं ईसवी में निर्मित प्रतीत होता है। वाराणसी शहर के गंगा किनारे स्थित घाटों में राजघाट बहुत ही प्रसिद्ध घाट है, जो कि भैसासुर राजघाट के नाम से भी जाना जाता है।[27]

बुंदेलखण्ड़ एक भौगोलिक और सांस्कृतिक क्षेत्र है जो उत्तर प्रदेश राज्य के झासी, बांदा, ललितपुर, हमीरपुर, जालौन, महोबा, चित्रकूट जिलों और मध्य प्रदेश राज्य के दतिया, सागर, छतरपुर, टीकमगढ़, दमोह, पन्ना, जिलों से मिलकर बना है। जहाँ की भाषा, सामाजिक संरचना एवं धार्मिक विश्वास एवं इतिहास एक दूसरे से जुड़े हैं। बुंदेलखण्ड़ के गाँव–गाँव में महिषासुर के मंदिर है। जिनके भैसासुर, मैकासुर, कासदेव, ग्वाल बाबा आदि अनेक नामों से जाना जाता है। बुंदेलखण्ड के सभी जिलों में भैसासुर के मन्दिर, मुक्तिधाम विद्यमान है। स्थलक्षेत्र का भ्रमण करने से ज्ञात होता हैं कि यह कोई विहार या किला के अवशेष विखण्डित अवस्था में पड़े हुए हैं जिसे कोई संरक्षण नहीं प्राप्त है।

मध्यप्रदेश के सागर जिले में जो कि बुंदेलण्ड क्षेत्र का हिस्सा है के कर्रापुर गांव में भैसासुर बाबा का मन्दिर है। जहां पर गाँव के प्रत्येक वर्ग के लोग पूजा करने जाते हैं। मन्दिर के पुजारी मिश्रा हैं जो तीन–चार पुस्तों से वहां रहते हुए मन्दिर की देख–भाल कर रहे है। ऐसा स्थानीय लोगों का मानना है कि इन विखण्डित अवशेषों में खजाना छुपा है। कुछ पत्थर की दिवारें आज भी खड़ी है जिनपर कुछ अभिलेख है। गांव के लोंगों कि जब भैस बच्चा देती है तों भैस का पहला दूध भैसासुर को चढ़ाया जाता है।[28] छतरपुर में भैसासुर मूक्तिधाम है। टिकमगढ़ के बड़ागाँव कस्बा में भैसासुर का मन्दिर है।

पुराणों में वर्णित भैसासुर – व्यासजी राजा जनमेजय को कथा सुनाते है कि दनु के रम्भ और करम्भ नाम के दो पुत्र थे। वे दोनों भूमण्डल पर बहुत प्रसिद्ध थे। वे दोनों संतानहीन थे। अतः वे पुत्र प्राप्ति के लिए तपस्या करने लगे उनमें करम्भ ने पवित्र पंचनद के जल में डूबकर अनेक वर्षों तक कठोर तप किया और रम्भ ने दूधवाले वटवृक्ष के नीचे पंचाग्नि का सेवन करने लगा बहुत काल तक जब रम्भ पंचाग्नि–साधना करता रह गया। तब इन्द्र चिन्तित हो करम्भ को पंचनद में घुसकर उसे मार डाला।[29]

तब अपने भाई का वध सुनकर रम्भ अत्यधिक कुपित हुआ। उसने अपने हाथ से अपना सिर काटकर उसे अग्नि में होम कर देने की चेष्ठा की। तब अग्निदेव प्रकट होकर उसे समझाये कि मरो मत मरने से कुछ हासिल नहीं होगा। तुम्हारे मन में जो इच्छा हो मांग लो। अग्निदेव का वचन सुनकर उसने आत्महत्या नहीं किया और वर मांगा कि मुझे तीनों लोकों पर विजय प्राप्त करने वाला तथा शत्रु सेना का विनाश करने वाला पुत्र प्राप्त हो। वह देवता, दानवों, मनुष्य इन सभी में सर्वथा अजेय हो। वह पराक्रमी अपने इच्छानुसार कोई भी रूप धारण करने में समर्थ हो तथा सभी के लिए वन्दनीय हो।[30]

अग्निदेव ने रम्भ से कहा हे दानवश्रेष्ठ जैसी तुम्हारी अभिलाषा है वैसा ही होगा तुम्हें जिस स्त्री के प्रति आसक्ति भाव आ जायगा, उसी से तुम्हें वह बलशाली पुत्र उत्पन्न होगा। तब उनका मोहक वचन सुनकर दानवश्रेष्ठ वहां से चला गया। ऐसे स्थान पर जा पहुँचा जो रमणीक, समृद्धियों से सम्पन्न तथा यक्षों से घिरा हुआ था। वहां एक रूपवती तथा मदमत्त

महिषी को देखकर आसक्त हो गया। वह महिषी भी उसे प्रसन्नतापूर्वक चाहती हुई तत्काल उसके साथ रमण करने के लिए तैयार हो गयी। होनहार से प्रेरित होकर रम्भ ने उसके साथ समागम किया और उसके वीर्य से वह महिषी गर्भवती हो गयी।[31]

रम्भ का महिषी पर आसक्त होने का तात्पर्य यहां पर यह है कि वह महिषी कोई रानी अथवा स्त्री नहीं थी बल्कि एक भैस थी। आश्चर्य कि बात है कि जो राजा इतना प्रतापी हो वह किसी सुन्दर रानी को न चाहकर किसी भैस को पसन्द करने लगा घोर आश्चर्य तो यह है कि वह महिषी गर्भवती भी हो जा रही है। जहां तक विज्ञान का तर्क यह कहता है कि कोई पुरूष और जानवर के समागम से गर्भ धारण नहीं हो सकता है। अतः वह महिषी एक रूपवती रानी थी। यही शब्दों के भाव से तथ्यों को मिथक में बदलने का प्रयास किया गया है। कहने का तात्पर्य यह है कि राजा रम्भ अग्निदेव के कहने पर आत्मदाह का विचार त्याग कर अपने राज्य में लौट आये और वहां रूपवती एक कन्या से विवाह कर जीवन बिताने लगे। जिसके गर्भ से महिषासुर का जन्म हुआ।

निष्कर्ष

उपरोक्त वर्णित साहित्य, भाषा विज्ञान और पुरातात्विक अवशेषों के आधार पर कहा जा सकता है कि महिषासुर अथवा भैसासुर एक ऐतिहासिक असुरों का राजा है। जिसके नाम पर भारत के कई चौक–चौराहें, गलियाँ, घाट, मन्दिर, गाँव, शहर, जिले, आदि आज भी विद्यमान है। भैसासुर के समान कई असुर राजा हुए जिनके नाम पर आज भी शहर, जिले विद्यमान है जैसे वाणासुर या बानासुर के नाम पर वाराणसी अथवा बनारस जिले का नाम, गयासुर के नाम पर बिहार के गया जिले का नाम, बकासुर, लोहासुर, आदि प्रमुख है। ये सभी बोधिसत्व हैं जिन्होंने अपने क्षेत्र में धम्म का प्रसार किया एवं लोगों को धम्म अनुसार जीवन जीने हेतु प्रेरित किया। जिसके कारण ये आज भी भारतीय आदिवासी समाज के मन–मस्तिष्क, समृतियों एवं परम्पराओं में जीवित है।

असुर, राक्षस, दैत्य, दानव आदि भारत के मूलनिवासी देशज लोग हैं जिनके नाम और संस्कृति को आदिवासी समाज वर्तमान में भी जीवित बनाये हुए है। वह सभ्य, शान्तिप्रिय, कर्मठ समाज के लोग जिनके अन्दर ईमान, दया, धम्म, है। कोसंबी ने अपनी पुस्तक प्राचीन भारत की संस्कृति और सभ्यता में लिखा है कि नाग–राक्षस प्राचीन बौद्ध विहारों के संरक्षक थे।[32]

वर्तमान समाज में असुर, राक्षस, दानव शब्दों से जो हीनता का बोध कराया गया है, वह मानवीय मूल्यों के खिलाफ है। भला जो प्राण देने वाला हो (असुर), जो रक्षा करने वाला हो (राक्षस), जो दान देने वाला हो (दानव) वह रक्तपिपासु कैसे हो सकता है। जो भैसज हो बोधिसत्व हो वो हिंसक कैसे हो सकता है। आदिवासी समाज के अस्तित्व व उनके विकास के लिए यह आवश्यक है तथाकथित मुख्य धारा का समाज अपने मानसिकता में परिवर्तन लाये। आदिवासी समाज के महापुरूषों, राजाओं के इतिहास को विकृत करने व विकृत होने से बचायें। आजादी के बाद हमें एक समतामूलक समाज के स्थापना करने के लिए आवश्यक है कि हमें प्रत्येक समाज के संस्कृति, मान्यताओं, परम्पराओं, इतिहास का सम्मान करें, उसे संरक्षित, सवंर्धित करें। यहीं लोकतंत्र का आधार एवं गरिमा है।

❐

सन्दर्भ –

1. रंजन, पी. 2019. महिषासुर एक जननायक.फारवर्ड प्रेस. नई दिल्ली. पेज नं. 43
2. रंजन, पी. 2019. पृ. 44
3. वही, पृ. 44
4- Mysore.nic.in/en/history 10/6/23 14:26
5. रंजन, पी. 2019. महिशासुर मिथक और परंपराएं .फारवर्ड प्रेस. नई दिल्ली. पृ.157
6. फिल्ड वर्क साक्षात्कार से प्राप्त जानकारी.
7- www.nichirenlibrary.org
8. सांकृत्यायन, आर. 1994. विनय पिटक. बौद्ध आकार ग्रन्थमाला. काशी विद्यापीठ वाराणसी.
9. वही, पृ. 216–218
10. कौसल्यायन, बी. ए. 1987. पालि हिन्दी कोश. सिद्धार्थ बुक्स दिल्ली.
11. सवरिकार, एस. एस., रविशंकर. बी. भैसज्य कल्पना : दि आयुर्वेदिक फार्मास्यूटिक्स एन ओवरव्यू .
12. हुल्स, ई. 1925. कार्पस इंस्क्रिप्शंस इण्डिकेरम. इंस्क्रिप्शंस ऑफ असोका. क्लेयरडन प्रेस. ऑक्सफोर्ड. पृ. 2–3
13. सिंह, आर. पी. 2016. भाषा साहित्य और इतिहास का पुर्नपाठ.सम्यक प्रकाशन नई दिल्ली. पृ. 18
14.वही, पृ. 18
15. वही, पृ. 18
16. वही, पृ. 19
17. वही, पृ. 19
18. सिंह, आर. पी. 2018. खोए हुए बुद्ध की खोज. कौटिल्य बुक्स. नई दिल्ली. पृ. 46
19. लंकेश, जी0 2017. हमारा अपना महिषासुर. पृ. फारवर्ड प्रेस
20. कोसाम्बी, डी. डी. – 1976. मिथक और यथार्थ . पृ. 109
21. वही, पृ. 110
22. रसेल, आर. वी. एवं हिरालाल, आर. बी. 1975. द ट्राइब्स एण्ड़ कास्ट्स ऑफ द सेन्ट्रल प्रॉविएन्स ऑफ इण्डिया, पृ. 500
23. रसेल, आर. वी. एवं हिरालाल, आर. बी. पृ. 513
24. वही, पृ. 513
25. शोध क्षेत्र कार्य
26. रंजन, पी. 2019. महिषासुर मिथक और परंपराएं .फारवर्ड प्रेस. नई दिल्ली. पृ. 21
27. वही, पृ. 16
28. फिल्ड वर्क कार्य सागर जिला, देखे www.youtube.com/@sudhasonker/indigenous
29. श्रीमद्देवीभागवत महापुराण पृ. – 538
30. वही, पृ. – 539
31. वही, पृ. – 540
32. डी.डी. कोसंबी, 2014. प्राचीन भारत की संस्कृति व सभ्यता. पृ. 223

वेबसाइट–

www.archive.org 12/052023
mysore.nic.in/en/history 01/06/2023
www.nichirenlibrary.org 09/06/2023
www.ncbi.nlm.nih.gov 18/06/2023
www.youtube.com/@sudhasonker/indigenous history 20/07/2023

पूर्वदेवा– सामाजिक विज्ञान शोध पत्रिका
वर्ष 29, अंक, 116, जनवरी–मार्च, 2024 पृ. 16–22

UGC Care Listed Journal
ISSN 0974 -1100

प्रधानमंत्री जनधन योजना का विश्लेषणात्मक अध्ययन

प्रो. सुमन कोचर
सहायक प्राध्यापक, वाणिज्य, शासकीय दिग्विजय स्नातकोत्तर महाविद्यालय, राजनांदगांव (छ.ग.)
E-mail: sumanjain1919@gmail.com Mob. 7999871811
डॉ. एच.एस. भाटिया
विभागाध्यक्ष (वाणिज्य संकाय) शासकीय दिग्विजय स्नातकोत्तर महाविद्यालय, राजनांदगांव (छ.ग.)

सारांश

भारत में बैंकिंग उद्योग का व्यापक विस्तार हुआ है लेकिन ग्रामीण क्षेत्रों में शाखाओं का विस्तार बढ़ती हुई मांग तथा वित्तीय सेवाओं की आवश्यकताओं की रफ्तार के अनुरूप नहीं है। केन्द्रीय सरकार के समावेशी विकास ''सबका साथ सबका विकास'' पर आधारित 'प्रधानमंत्री जनधन योजना' एक राष्ट्रीय मिशन है। वित्तीय प्रणाली से प्राप्त लाभों से वंचित लोगों को बैंकिंग प्रणाली से जोड़ने हेतु प्रधानमंत्री द्वारा इस योजना का शुभारंभ किया गया। बैंकिंग प्रणाली से वंचित लोग साहूकारों के चुंगल में पूर्णतः जकड़े हुए हैं। उन्हें उससे मुक्त कर बैंक खाता खोलकर डिजिटल धनराशि तक पहुंच सूक्ष्म ऋण की उपलब्धता, बीमा एवं पेंशन जैसी वित्तीय समस्याओं का प्रबंधन करने में सक्षम होंगे। वित्तीय सेवाओं की उपलब्धता आरक्षित समूह को सशक्त बनाता है। यह एक ज्ञात तथ्य है कि भारत में जबकि जनसंख्या के एक बड़े भाग को कई प्रकार की बैंकिंग सेवाएं उपलब्ध है जिसकी परिधि में नियमित बैंकिंग सेवाएं तथा पोर्टफोलियो परामर्श आता है। शोषित और निम्न आय समूह का अन्य भाग मूलभूत वित्तीय सेवाओं से पूर्णतया वंचित है जो कि देश के कुल आर्थिक विकास को प्रभावित करता है।[1]

शोध शब्द– प्रधानमंत्री जन–धन योजना, बैंकिंग, वित्तीय समावेशन, रुपे कार्ड

प्रस्तावना

मूल रूप से 2004 से भारत सरकार एवं RBI व्यापक वित्तीय समावेशन योजनाओं को प्रोत्साहित कर रही है। संपूर्ण देश में व्यापक वित्तीय समावेशन लाने के लिए एकीकृत दृष्टिकोण के रूप में माननीय प्रधानमंत्री श्री नरेंद्र मोदी ने 15 अगस्त 2014 को प्रधानमंत्री जन–धन योजना की घोषणा की। यह योजना संपूर्ण देश में एक साथ 28 अगस्त 2014 को आरंभ की

गई। इस योजना के अंतर्गत प्रत्येक घर के लिए कम से कम एक बुनियादी बैंकिंग खाते के साथ बैंकिंग सुविधाओं तक सार्वजनिक पहुंच, वित्तीय साक्षरता, ऋण तक पहुंच, बीमा एवं पेंशन सुविधा आदि वित्तीय सेवाओं की कल्पना की गई है। इस योजना के तहत एक मूल बचत बैंक जमा खाता किसी भी बैंक या बैंक मित्र में खोला जा सकता है जिसके पास अन्य कोई खाता ना हो। इस योजना के माध्यम से लोगों को आर्थिक गतिविधि के लिए ऋण प्राप्त होता है। सामाजिक सुरक्षा के रूप में बीमा व पेंशन की सुविधा प्राप्त होती है। क्रमबद ऋण के जरिए यह प्रयास किया जा रहा है कि गरीबों को निम्न स्तर से उठाकर उच्च स्तर पर ले जाया जा सके ताकि वे गरीबी से बाहर आ सके।[2]

योजना के उद्देश्य

1. वंचित वर्गों जैसे कमजोर वर्गों और कम आय वर्गों को विभिन्न वित्तीय सेवाएं जैसे मूल बचत खाते की उपलब्धता, बीमा तथा पेंशन उपलब्ध कराना सुनिश्चित करना है।
2. लाभार्थियों को उपलब्ध बैंकिंग सेवाओं का बेहतर उपयोग करने के लिए इस मिशन का एक अभिन्न भाग वित्तीय साक्षरता प्रदान करता है।
3. लाभार्थियों को 1 लाख के दुर्घटना बीमा कवर के साथ डेबिट कार्ड मिलेगा।
4. समस्त सरकारी लाभों को लाभार्थियों के खाते में प्रसारित करने एवं केंद्र सरकार की प्रत्यक्ष लाभ हस्तांतरण (DBT) योजना को प्रोत्साहित करना
5. कमजोर संपर्क, ऑनलाइन लेनदेन जैसे प्रौद्योगिकी मामलों का समाधान करना।

योजना के लाभ

1. प्रधानमंत्री जन–धन योजना के अंतर्गत बैंक रहित व्यक्ति के लिए एक मूल बचत बैंक खाता खोला जाता है।
2. PMJDY खाते में न्यूनतम शेष राशि बनाए रखने की आवश्यकता नहीं है।
3. PMJDY खाताधारक को रुपे डेबिट कार्ड प्रदान किया जाता है।
4. 1 लाख रू. की दुर्घटना बीमा कवर (28–08–18) के बाद खोले गए खातों में 2 लाख रू. तक।
5. पात्र खाताधारकों को ओवरड्राफ्ट की सुविधा।'

शोध उद्देश्य

1. वित्तीय समावेशन की स्थिति का अध्ययन करना।
2. प्रधानमंत्री जन–धन योजना की विश्लेषणात्मक अध्ययन करना।
3. PMJDY के क्रियान्वयन का अध्ययन।
4. हितग्राहियों का योजना के प्रति जागरूकता एवं सुविधाओं के संबंध में जानकारी का अध्ययन।

परिकल्पना

1. PMJDY के माध्यम से हितग्राही वित्तीय समावेशन का लाभ प्राप्त कर रहे हैं।
2. PMJDY के संदर्भ में सार्वजनिक बैंक प्राइवेट बैंक से बेहतर कार्य कर रही है।
3. ग्रामीण एवं गरीब वर्गों के अधिकांश हितग्राही इस योजना के लाभान्वित हुए हैं।
4. इस योजना के प्रति नागरिकों में जागरूकता में वृद्धि हुई है।

शोध प्रविधि

द्वितीयक स्रोतों के माध्यम से आंकड़ों का संकलन किया गया है। वे समंक जिनका संकलन पहले से ही किसी अन्य अनुसंधानकर्ता/व्यक्ति/संस्था द्वारा किया जा चुका है और वर्तमान अनुसंधानकर्ता उनको अपने प्रयोग में लाता है, द्वितीयक समंक कहलाते है।[4] विवरणात्मक एवं विश्लेषणात्मक पद्धति का प्रयोग करते हुए ग्राफ एवं चार्ट के माध्यम से संकलित आंकड़ों का विश्लेषण किया गया है। द्वितीयक स्रोत के रूप में भारत सरकार द्वारा प्रधानमंत्री जन–धन योजना विभाग की वेबसाइट द्वारा आंकड़ो का संकलन किया गया है।

अध्ययन क्षेत्र

संपूर्ण देश (भारत) के ग्रामीण एवं शहरी नागरिकों से संबंधित आंकड़ों का संकलन कर विश्लेषण किया गया है।

क्रियान्वयन

1. बैंकों के नेटवर्क की विस्तार तथा भौगोलिक पहुंच प्रधानमंत्री जन–धन योजना का प्रथम तथा मूल स्तंभ जनसंख्या के आर्थिक रूप से वंचित वर्ग तक पहुंचाने के लिए देश के बैंकिंग नेटवर्क का विस्तार करना है। ग्रामीण क्षेत्रों को शामिल करने की एक कुशल तथा लागत प्रभावी पद्धति यह है कि सेवा क्षेत्र के माध्यम से पूरे देश का नक्शा बनाया जाए तथा नियत स्थान बैंक मित्र आउटलेट नियोजित किए जाएं।

2. प्रत्येक वयस्क नागरिक के लिए बैंक में वार्षिक बचत खाता खोला जाना इस योजना का दूसरा आधार स्तंभ यह है कि प्रत्येक वयस्क नागरिक के लिए बैंक में वार्षिक बचत खाता (BSBDA) शून्य शेष के साथ) खोला जाना। इस योजना में बिना बैंक खातों वाले लोगों की पहचान कर उनका खाता खुलवाया जाए एवं निष्क्रिय खातों को पुनः चालू किए जाने पर जोर दिया जाएगा।

3. वित्तीय साक्षरता और क्रेडिट काउंसलिंग (FLCC) विश्व में भारत सबसे प्रभावशाली वित्तीय बाजार, तकनीकी विनिमय एवं प्रणाली के आधार पर है। भारत में वित्तीय साक्षरता अति महत्वपूर्ण है, यह विकासशील देश गरीबी के समस्याओं के साथ निरक्षरता एवं जनसंख्या की समस्याओं से जूझ रहा है। वित्तीय समावेशन को बढ़ावा देना अंतोगत्वा वित्तीय स्थिरता प्रदान करता है एवं वित्तीय स्थिरता भूमंडलीय अर्थव्यवस्था को स्थिरता प्रदान करता है।

4. क्रेडिट गारंटी फंड– इस योजना का चौथा स्तंभ क्रेडिट गारंटी फंड का सृजन करना है। यह आपातकालीन फंड गरीब ऋणकर्ता को उनकी मूलभूत आवश्यकताओं जैसे– स्वास्थ्य, कृषि आदि को पूरा करने में बहुत मददगार होंगे। यह विचार ग्रामीण तथा शहरी दोनों क्षेत्रों में लोगों को साहूकारों के चुंगल से बाहर निकालने के लिए है।

5. माइक्रो बीमा– इस योजना का पांचवा स्तंभ लोगों को माइक्रो बीमा प्रदान करना है। बीमा विनियामक तथा विकास प्राधिकरण (इरडा) बीमा पॉलिसियों की विशेष श्रेणी बनाई है। जिसे माइक्रो बीमा पॉलिसी कहां जाता है। यह समाज के आर्थिक रूप से असुरक्षित वर्गों को बीमा कवरेज देने के लिए है।

6. असंगठित क्षेत्र पेंशन योजना स्वावलंबन– इस योजना का छठवां तथा अंतिम स्तंभ वृद्धावस्था आय सुरक्षा से संबंधित है स्वावलंबन एक कम लागत वाली इष्टतम विशेषताओं वाला

मॉडल है जो कि नेशनल प्रणाली के सुसज्जित संगठन पर कार्य करता है तथा पूर्णतया आईटी समर्थित है। जिससे निधियों के निवेश के लिए पेशेवर निधि प्रबंधक है तथा अभिदाताओं के हितों की सुरक्षा के लिए विवेकपूर्ण विनिवेश दिशा–निर्देशों का अनुसरण करता है।

वित्तीय समावेशन प्रौद्योगिकी की भूमिका :–

भारतीय बैंकिंग क्षेत्र परंपरागत बैंकिंग के आधुनिक बैंकिंग की ओर बढ़ रहा है। बेहतर बैंक की सेवाओं के लिए नई तकनीकी को अपनाया जा रहा है। भारतीय राष्ट्रीय भुगतान निगम (NCPI) Institute वित Development & Research in Banking Technology (IDRBT) आदि RBI के अंतर्गत कार्यरत है।

PMJDY में अपनाई गई तकनीकी निम्न है :–

1. **e-kyc -** आधार के साथ इलेक्ट्रॉनिक प्रणाली का उपयोग कर कागज रही प्रणाली खाता खोलने के लिए अपने ग्राहक को जागने (Know You Customer) की प्रक्रिया।

2. **मोबाइल बैंकिंग**– देश में अधिकतर लोगों के द्वारा मोबाइल का प्रयोग किया जाता है। मोबाइल के द्वारा बैंकिंग व्यवहारों को आसानी से किया जा रहा है। वर्तमान में खाता शेष की जानकारी, कोश हस्तांतरण करने, लघु विवरण देखने, चेकबुक जारी करने आदि कार्यों हेतु मोबाइल बैंकिंग का प्रयोग सफलतापूर्वक किया जा रहा है।

3. **त्वरित भुगतान प्रणाली** (Immediate Payment System IMPS) - NEFT o RTGS करने में लगने वाले अधिक समय को ध्यान में रखते हुए सरकार ने प्डच् आरंभ किया। जिसे मोबाइल, इंटरनेट बैंकिंग या एटीएम से किया जाता है।

4. **National Unified UYYD Platform (NUUP) -** उपभोक्ता UYYD प्लेटफॉर्म से जुड़कर कई प्रकार की बैंकिंग सुविधाओं से जुड़ सकता है। वर्तमान में इस स्मार्टफोन का प्रयोग ज्यादातर लोगों के द्वारा किया ही जाता है। इसे स्मार्टफोन के द्वारा डाउनलोड भी कर सकते हैं।

5. **रूपे डेबिट कार्ड– National Payment Corporation of India (NPCI)** ने भुगतान की नई प्रणाली के तौर पर रूपे डेबिट कार्ड को लांच किया, इससे पहले भुगतान हेतु VIS। या Master Card का प्रयोग किया जा रहा है। रूपे डेबिट कार्ड घरेलू बहुपक्षीय प्रणाली है।

6. **आधार सक्षम भुगतान प्रणाली (AEPS) -** पॉइंट ऑफ सेल माइक्रो एटीएम कियोस्क बैंकिंग आधार सक्षम भुगतान प्रणाली का प्रयोग करती है। यह इनके उपयोग हेतु प्रमाणित आधार डेटा की अनुमति देता है।

7. **आधार पेमेंट ब्रिज सिस्टम (APBS) -** वर्तमान में कई सामाजिक लाभ सीधे बैंक खाते में स्थानांतरित किए जाते है। आधार भुगतान योजना प्रणाली सरकार तथा सरकारी संस्थाओं से लाभार्थियो के बैंक तथा डाक घरों में आधार समर्थित खातों में भुगतान अंतरित करने को सक्षम बनाती है।[3]

विश्लेषण

सारणी क्रमांक – 1

PMJDY के अंतर्गत निजी एवं सार्वजनिक क्षेत्रीय बैंक की तुलनात्मक अध्ययन		
हितग्राही / लाभ	निजी क्षेत्रीय बैंक	सार्वजनिक क्षेत्रीय बैंक
ग्रामीण / अर्द्धशहरी केन्द्रित बैंक शाखा के लाभार्थियों की संख्या	7027097	232029091
शहरी केन्द्रित बैंक शाखा के लाभार्थियों की संख्या	6051790	138651787
खातों में जमा राशि (लाख में)	48704.72	13429133.94
रूपे कार्डधारी लाभार्थियों की संख्या	11061223	276769347

स्त्रोत – pmjdy.gov.in/account

उपरोक्त सारणी का विश्लेषण करने पर यह प्रतीत होता है कि सार्वजनिक क्षेत्रीय बैंको में निजी बैंको की तुलना में ग्रामीण शाखा के लाभार्थियों, शहरी शाखा के लाभार्थियों, जमा राशि एवं रूपे कार्डधारी लाभार्थियों की संख्या क्रमशः 3201.92%, 2191.09%, 2657.25% व 2402.16% से अधिक है। इस दृष्टिकोण से सार्वजनिक बैंक पीएमजेवाय के अंतर्गत निजी बैंको से बेहतर कार्य कर रही है। सार्वजनिक बैंको द्वारा इस क्षेत्र में किया गया कार्य सराहनीय रहा है।

सारणी क्रमांक – 2

शहरी एवं ग्रामीण वर्ग के हितग्राहियों का तुलनात्मक अध्ययन		
बैंक	शहरी केन्द्रित बैंक शाखा के लाभार्थियों की संख्या	ग्रामीण / अर्द्धशहरी केन्द्रित बैंक शाखा के लाभार्थियों की संख्या
सार्वजनिक क्षेत्रीय बैंक	138651787	232029091
क्षेत्रीय ग्रामीण बैंक	11820085	74794076
निजी क्षेत्रीय बैंक	6051790	7027097

स्रोत – pmjdy.gov.in/account

उपरोक्त सारणी का विश्लेषण से स्पष्ट है कि सार्वजनिक क्षेत्रीय बैंको में भाहरी लाभार्थियों की तुलना में ग्रामीण एवं अर्द्धभाहरी लाभार्थियों की संख्या 1.67 गुना इस प्रकार क्षेत्रीय ग्रामीण बैंको में ग्रामीण एवं अर्द्धभाहरी लाभार्थी, शहरी लाभार्थी की तुलना में 6.33 गुना है व निजी क्षेत्रीय बैंको में ग्रामीण एवं अर्द्धभाहरी लाभार्थी, शहरी लाभर्थी की तुलना में 1.16 गुना है। अर्थात् ग्रामीण एवं भाहरी वर्गो के अधिकांश हितग्राही इस योजना से लाभान्वित हुए है।

सारणी क्रमांक – 3

PMJDY के लाभान्वित हितग्राहियों का तुलनात्मक अध्ययन (वर्ष 2017 एवं 2022 के परिपेक्ष्य में)		
हितग्राही / लाभ	2017	2022
ग्रामीण / अर्द्धशहरी केन्द्रित बैंक शाखा के लाभार्थियों की संख्या	180804698	313850264
शहरी केन्द्रित बैंक शाखा के लाभार्थियों की संख्या	122309266	156523662
खातों में जमा राशि (लाख में)	6674247.68	17356356.23
रूपे कार्डधारी लाभार्थियों की संख्या	228815017	321979438

स्त्रोत– pmjdy.gov.in/account

उपरोक्त सारणी का विश्लेषण करने पर यह प्रतीत होता है कि 2017 की तुलना में 2020 में ग्रामीण / अर्द्धशहरी केन्द्रित बैंक शाखा के लाभार्थियों की संख्या, शहरी केन्द्रित बैंक शाखा के लाभार्थियों की संख्या में क्रमशः 73.59%, 27.97%, 160.05% व 40.42% की वृद्धि दर्ज की गई। अतः स्पष्ट है कि अधिक से अधिक लाभार्थी इस योजना से निरंतर लाभान्वित हो रहे है।

समस्या –

1. प्रधानमंत्री जन–धन योजना गुणात्मक वृद्धि दृष्टिकोण के स्थान पर संख्यात्मक वृद्धि दृष्टिकोण रखता है।
2. सुविधाओं का अभाव
3. फिजिकल और डिजिटल कनेक्टिविटी की कमी ग्रामीण भारत के लिए वित्तीय समावेशन प्राप्त करने में एक बड़ी बाधा है।
4. जागरूकता के अभाव में खाता खोलने की उचित प्रक्रिया और आवश्यक दस्तावेजों से अवगत नहीं है।

सुझावः–

1. इस योजना के प्रति ग्रामीण वर्गों में जागरूकता हेतु निरंतर प्रयास करना अनिवार्य है। इस हेतु जागरूकता समिति का निर्माण कर इससे प्राप्त लाभों क संदर्भ में प्रचार–प्रसार किया जाना चाहिए।
2. बैंक मित्रों को अधिक सक्रिय किया जाए जो जनता को खाता खोलने एवं अन्य सुविधाओं का लाभ लेने हेतु मार्गदर्शन कर सके।
3. वित्तीय समावेशन के उद्देश्य की प्राप्ति हेतु डिजिटल कनेक्टिविटी को मजबूत बनाया जाए एवं वित्तीय साक्षरता प्रदान की जाए और बैंकिंग संबंधित विभिन्न सुविधाओं का विकास किया जाए।

निष्कर्ष

निष्कर्ष रूप में कहा जा सकता है कि प्रधानमंत्री जन–धन योजना के अंतर्गत न्यूनतम शेष बनाए रखने की आवश्यकता न होने के कारण ग्रामीण एवं गरीब वर्गों के द्वारा इस योजना में अतिरुचि जाहिर की गई है जिसके कारण शहरी वर्गों की तुलना में ग्रामीण एवं गरीब वर्गों के 100.51%

अधिक हितग्राही लाभान्वित हुए हैं। इस योजना के माध्यम से बैंकों पर बिना किसी अतिरिक्त दबाव के वित्तीय समावेशन के लक्ष्य प्राप्ति की दिशा में महत्वपूर्ण उन्नति देखी गई है। इस योजना के माध्यम से ग्रामीण क्षेत्रों में लोगों तक बैंकिंग पहुंच में वृद्धि हुई है तथा महिलाओं की बढ़ती भागीदारी भी इस योजना की सफलता का एक महत्वपूर्ण भाग है। इस योजना के क्रियान्वयन में तत्परता से निम्न आय वर्ग के परिवारों को बचत करने का एक साधन प्राप्त हुआ है। केंद्र सरकार द्वारा देश के नागरिकों तक बैंकिंग सुविधाओं की सार्वभौमिक पहुंच सुनिश्चित करने में यह योजना अत्यंत प्रभावकारी सिद्ध हुई है।

❐

सन्दर्भ –

1. *pmjdy.gov.in/account*
2.. *www.drishtiias.com*
3. *प्रधानमंत्री जनधन योजना का मिशन दस्तावेज पृ. 32*
4. *डॉ. एस.एम.शुक्ल एवं शिवपूजन सहाय, व्यावसायिक सांख्यिकीय, साहित्य भवन पब्लिकेशन, आगरा पृ. 40*

पूर्वदेवा– सामाजिक विज्ञान शोध पत्रिका
वर्ष 29, अंक, 116, जनवरी–मार्च, 2024 पृ. 23–31

UGC Care Listed Journal
ISSN 0974 -1100

राष्ट्रीय शिक्षा नीति-2020 जेंडर समानता की ओर एक कदम

डॉ. कीर्ति सिंह
सह–आचार्य, शिक्षा विद्यापीठ, वर्धमान महावीर खुला विश्वविद्यालय,
रावतभाटा रोड, कोटा (राजस्थान)–324021

सारांश

शिक्षा का अधिकार, प्रत्येक व्यक्ति का मौलिक अधिकार है एवं संयुक्त राष्ट्र सहस्राब्दि विकास लक्ष्य(एमडीजी)लक्ष्य 2 बिना किसी भेदभाव के सभी को मुफ्त सार्वभौमिक प्राथमिक शिक्षा प्रदान करना है और लक्ष्य 3 लैंगिक समानता को बढ़ावा देना और महिलाओं को सशक्त बनाना है। परन्तु आजादी के लगभग 75 वर्षों के बावजूद भी शिक्षा के लिये तमाम प्रयासों के बावजूद भी स्त्री शिक्षा अपेक्षित स्तर तक नहीं पहुँच पाई है। आज भी कई सन्दर्भों में यह देखा गया है कि समाज में बहुत से सामाजिक, आर्थिक एवं सांस्कृतिक अथवा कई बार धार्मिक कारकों के चलते, बहुत बार लड़कियां स्कूल नहीं जाती अथवा जाती भी हैं तो माध्यमिक स्तर पर पहुँचते पहुँचते पढाई छोड़ने के लिए विवश हो जाती है। इस आलेख के माध्यम से जेंडर संबन्धित इन्हीं सब मुद्दों पर चर्चा की गई है। वर्तमान आलेख राष्ट्रीय शिक्षा नीति 2020, स्त्री शिक्षा की समालोचनात्मक व्याख्या पर केंद्रित है, जो ऐसे समाज की कल्पना करता है,जो जेंडर भेदभाव से मुक्त शैक्षिक वातावरण प्रदान करे। जेंडर भेदभाव मुक्त शिक्षा न केवल सभी को शिक्षा का समान अवसर प्रदान करेगा, अपितु महिलाओं का शिक्षा के क्षेत्र में योगदान बढ़ाकर उन्हें सशक्त बनाएगा। प्रस्तुत आलेख राष्ट्रीय शिक्षा नीति 2020 की सिफारिशों के प्रकाश में शिक्षा में जेंडर भेदभाव को कम करने, शिक्षा के प्रत्येक स्तर पर स्त्रियों के नामांकन में वृद्धि एवं उनके ड्रॉपआउट कम करने की चर्चा पर केन्द्रित है, ताकि राष्ट्रीय स्तर पर महिला शिक्षा की दिशा और दशा दोनों में बदलाव हो सके।

प्रमुख शब्द : जेंडर, जेंडर भेदभाव,जेंडर समानता, राष्ट्रीय शिक्षा नीति 2020

कम नहीं ये किसी से साबित कर दिखलाएंगी, खोल दो बन्धन ये लड़कियां हर मंजिल पा जाएंगी। भारत प्रतिष्ठित महिलाओं की भूमि रही है, जिन्होंने प्रत्येक क्षेत्र में अपना नेतृत्व

प्रदान किया है चाहे वह शिक्षा का क्षेत्र हो, शासन, नीति निर्माण, रक्षा अथवा धर्म आदि का क्षेत्र हो। सभी भारतीय महिलाओं का योगदान भारतीय इतिहास में स्वर्णाक्षरों में दर्ज है लेकिन विदेशी आक्रान्ताओं के आक्रमण एवं राष्ट्र के उपनिवेशीकरण के सैकड़ों वर्षों ने हमारे देश के मूल नैतिक, सांस्कृतिक और शैक्षिक मूल्यों को नकारात्मक रूप से प्रभावित किया है। भारतीय समाज मूलतः एक पितृसत्तात्मक समाज रहा है, भले ही इसके कुछ भागों में मातृसत्तात्मक विश्वासों एवं मूल्यों का अनुकरण किया जाता रहा हो (मांजरेकर, नंदिनी.2020)।[1] भारतीय समाज में स्त्रियाँ आज भी लैंगिक भेदभाव की शिकार हैं। ग्रामीण क्षेत्रों में यह स्थिति और भी बदतर है। भारत के संविधान के तहत नागरिकों को 86वा अधिकार दिया गया, जिसमें 6 से 14 वर्ष के सभी बच्चों को बिना किसी भेदभाव के मुफ्त और अनिवार्य शिक्षा का मौलिक अधिकार दिया गया।

परन्तु महिलाओं की शिक्षा में उन्नति उतनी नहीं देखी जा रही जितनी होनी चाहिए थी,यद्यपि सरकार द्वारा विभिन्न योजनाएं जैसे समग्र शिक्षा अभियान के माध्यम से यथासंभव शिक्षा में लैंगिक भेदभाव न्यून करने एवं स्त्री शिक्षा को बढ़ावा देने के समस्त प्रयास किये गए हैं। यदि स्त्री शिक्षा एवं समाज के अन्य वंचित वर्गों की शिक्षा के सन्दर्भ में बात करें तो सभी बच्चों की शिक्षा के अन्तरराष्ट्रीय प्रयासों के फलस्वरूप शिक्षा से वंचित विद्यार्थियों की संख्या में कमी दर्ज की गयी है एवं विशेष रूप से शिक्षा से वंचित वर्ग के बच्चों में लैंगिक असमानता में भी कमी तो आई है (रामचंद्र, विमला. और आर.कामेश्वरी, 2019)।[2] परन्तु इस हेतु अभी और भी प्रयास किये जाने की आवश्यकता है। समाज के वंचित वर्गों की शिक्षा में स्त्री शिक्षा एक अलग महत्व रखती है क्यों कि स्त्री शिक्षा मानव एवं समाज के विकास के विभिन्न आयामों से प्रत्यक्षतः जुडी हुई है और प्रायः ऐसा माना जाता है कि एक शिक्षित स्त्री प्रायः सम्पूर्ण परिवार को शिक्षित कर सकने में सक्षम होती है क्योंकि स्त्रियाँ परिवार की एक महत्वपूर्ण कड़ी हैं।

जनगणना 2011 के अनुसार, भारत में समग्र साक्षरता दर 73% थी, लेकिन महिलाओं की साक्षरता दर मात्र 65% थी। पुरुष और महिला साक्षरता दर के बीच लगभग 16% का जेंडर–अंतर मौजूद है। यह जेंडर–विभाजन ग्रामीण क्षेत्रों में अधिक है। जहाँ महिला साक्षरता दर केवल 57% है, जबकि ग्रामीण पुरुष साक्षरता दर 77% है। हालांकि, वर्तमान सरकार द्वारा कई नए नीतिगत हस्तक्षेपों के बाद (ग्लोबल कैम्पेन फार एजुकेशन –जेण्डर रिपोर्ट,2019)[3] की रिपोर्ट,के अनुसार, देश में उच्च शिक्षा में जेंडर अंतर पिछले कुछ वर्षों में काफी कम हुआ है। उच्च शिक्षा में नामांकन की कुल संख्या में स्त्रियों का प्रतिशत लगभग आधा 48.6% है, जो एक उत्साहजनक संकेत है परन्तु शिक्षा में प्रत्येक स्तर पर जेंडर समानता प्राप्त करना चुनौती पूर्ण कार्य है, समाज में विभिन्न कारण हैं, जिनकी वजह से, विशे ाकर प्राथमिक एवं माध्यमिक स्तर पर बालिकाएं सबसे अधिक ड्रॉप आउट करती हैं। जिनका अवलोकन करना आवश्यक है। इन्हीं कारणों के आलोक में, राष्ट्रीय शिक्षा नीति, 2020 ने जेंडर असमानता की खाई को पाटने के लिए स्त्री शिक्षा के लिए विशेष प्रावधान किए हैं।

समाज में जेंडर असमानता

"उन्नीसवीं सदी में, केंद्रीय नैतिक चुनौती, गुलामी थी। बीसवीं शताब्दी में, यह अधिनायकवाद के खिलाफ लड़ाई थी। हमारा मानना है कि इस सदी में दुनिया भर में सर्वोपरि नैतिक चुनौती लैंगिक समानता होगी" (क्रिस्टोफ निकोलस डी.)।

ऐतिहासिक पृष्ठभूमि देखी जाए तो भारतीय समाज में महिलाओं की स्थिति प्राचीन या वैदिक काल में सुदृढ़ थी। उस समय महिलाओं को सभा और समिति जैसी सामाजिक संस्थाओं में समान प्रतिनिधित्व मिलता था। इसके अतिरिक्त अपाला और लोपामुद्रा जैसी महिलाओं ने वेदों की रचना में भी योगदान दिया। लेकिन परवर्ती काल में महिलाओं की स्थिति लगातार कमजोर होती गई। प्राचीन काल के पश्चात् मध्य काल में महिलाओं की स्थिति लगातार खराब बनी रही। ऐसी परिस्थितियों में आधुनिक काल के कुछ बुद्धजीवियों द्वारा भारत के स्वतंत्रता संघर्ष के दौरान जेंडर समानता हेतु किये गए प्रयास अत्यधिक प्रशंसनीय रहे तथा इन प्रयासों से महिला समानता की नवीन अवधारणा का उद्भव हुआ एवं स्वतंत्रता के पश्चात् निर्मित भारतीय संविधान में भी महिला शिक्षा एवं सशक्तीकरण से संबंधित विभिन्न प्रावधान किये गए। परन्तु फिर भी स्त्री शिक्षा में अपेक्षित सुधार नहीं हुआ। जिस पर वर्तमान में सुधार की आवश्यकता है।

भारत में जेंडर असमानता सदियों से एक सामाजिक मुद्दा रहा है। यह एक ज्ञात तथ्य है कि भारत के कई हिस्सों में आज भी बालिकाओं के जन्म का स्वागत नहीं किया जाता। बालिकाओं के जन्म से पहले ही भेदभाव शुरू हो जाता है और कभी–कभी उन्हें एक भ्रूण के रूप में ही मार दिया जाता है, और अगर वह दिन के उजाले को देखती है, तो उसे एक शिशु के रूप में मार दिया जाता है (सिंह, शैलेश,2012)।[4] जेंडर अनुपात की बात की जाए तो जहाँ भारत में प्रत्येक 1000 लड़कों पर केवल 908 लड़कियां हैं। ऐसे परिदृश्य में, यह स्पष्ट है कि असंख्य कारणों से, देश भर में कई लड़कियों को विद्यालय छोड़ने के लिए मजबूर किया जाता है और यह भेदभाव हर स्तर पर जारी है। शिक्षा हो, स्वास्थ्य हो, सुरक्षा हो या भागीदारी हो, बालिकाओं के साथ हमेशा असमान व्यवहार किया जाता है। भारतीय समाज अभी भी महिलाओं को सशक्त बनाने के महत्व के प्रति जागृत नहीं हुआ है।

जेंडर विषमता के कारण

भारतीय समाज में यदि जेंडर विषमता के कारणों पर दृष्टि डाली जाए तो पाएँगे कि भारतीय परिवारों में, एक लड़की की विद्यालयी शिक्षा पर एक लड़के की शिक्षा को प्राथमिकता दी जाती है। आर्थिक सहायता प्रदान करने के लिए लड़कियों को घरेलू गतिविधियों जैसे शिशु और घरेलू शिशु पालन कार्यों में संलग्न होने की अधिक संभावना होती है। यह निम्न आय वाले परिवारों, ग्रामीण क्षेत्रों और निम्न आय के उन परिवारों में अधिक स्पष्ट दिखाई देती है, जहाँ माता–पिता दोनों काम काजी हैं। आंकड़ो की बात करें, तो मात्र 26% बालिकाएं माध्यमिक शिक्षा पुरी कर पाती है। भारत की जनगणना 2011 के अनुसार, लड़के और लड़कियों की शिक्षा में असमानता स्पष्ट दिखाई देती है। लड़के जहाँ 82% साक्षर हैं, वहीं लड़कियां मात्र 65% है। अभी भी एक लंबा रास्ता तय करना है। लड़कियों की शिक्षा पर खर्च परिवारों में लड़कों की तुलना में कम है। लड़कियों की तुलना में निजी स्कूलों और ट्यूशन में अधिक लड़कों का नामांकन होता है।

इसके अलावा, माता–पिता अपने बुढ़ापे के दौरान अपने बेटों पर भरोसा करने का अनुमान लगाते हैं। इससे उनके विद्यालय में नामांकन, शैक्षिक व्यय, और शिक्षण संसाधनों तक पहुंच में अंतर का इलाज होता है। भारत में शिक्षा में जेंडर असमानता के पीछे लड़कियों के प्रति भेदभाव का कारण गरीबी और सांस्कृतिक मान्यताएँ भी हैं। लड़कियों के लिए शिक्षा में एक और बाधा देश भर के स्कूलों में स्वच्छता की कमी है। कई स्कूलों में, लड़कियों के लिए अलग से

शौचालय की सुविधा उपलब्ध नहीं होती है। लड़कियों के किशोरावस्था में पहुँचने पर शौचालय की आवश्यक सुविधाएं अति आवश्यक हैं। इसी के अभाव में कई लड़कियां पूरी तरह से विद्यालयी शिक्षा छोड़ देती हैं। एसी नील्सन और एनजीओ प्लान इंडिया के अध्ययन अनुसार, भारत में 23% लड़कियां इसी कारण से युवावस्था में विद्यालय छोड़ देती हैं। इसी में एक अन्य मुख्य कारण सुरक्षा का अभाव है। एकल पुरुष विद्यालय और विद्यालय दूर होने के कारण बहुत सी लड़कियां स्कूल छोड़ने के लिए विवश हो जाती है।

विद्यालय पाठ्यक्रम में जेंडर विषमता

शिक्षा और जेंडर समानता के बीच बहुत कुछ समान है– दोनों ही समाज के विकास के लिए प्रेरक हैं और दोनों के माध्यम से समाज में रहने और साथी प्राणियों के साथ सामंजस्य स्थापित करने के लिया आवश्यक हैं। फिर भी, जैसा कई संदर्भों में देखा जाता है, दोनों एक दूसरे के विरोध में कार्य करते है। शिक्षा, कई संस्थानों और प्रणालियों में जेंडर असमानता को सक्रिय रूप से बढ़ावा देती है। जेंडर संबंधी टिप्पणियाँ जैसे– 'वह एक लड़की के तौर पर गणित में काफी अच्छी है!'' या लिंग के मानदंडों के सुदृढीकरण जैसे 'लड़कियों को इतना हँसना शोभा नहीं देता या' लड़के नहीं रोते, या कुछ मामलों में विद्यार्थियों के जेंडर के अनुसार कक्षाओं में बैठने की व्यवस्था को अलग करना– इस तरह स्कूलों में जेंडर असमानता के विभिन्न तरीके हैं (निखू टी.व जॉनसन ई, 2017)।[5] पाठ्यक्रम के अतिरिक्त पाठ्यक्रम सहभागी गतिविधियों (को–करिकुलर) में भी यह अंतर देखने को मिलता है।

विद्यालयों में, लड़कियों और लड़कों दोनों को उनके शिक्षकों और स्कूल के कर्मचारियों द्वारा निरंतर निगरानी में रखा जाता है। अक्सर ग्रामीण क्षेत्रों में लड़कियों को विशेष रूप से परखा जाता है और उनके व्यवहार और उपस्थिति को अक्सर आंका जाता है। नतीजतन, लड़कियाँ विद्यालय में होनी वाली प्रतियोगिताओं में और कक्षा में होने वाली चर्चाओं में कम योगदान देती हैं और कम सवाल पूछने की प्रवृत्ति रखती है। इससे उनके सीखने का उत्साह नकारात्मक रूप से प्रभावित होता है। विद्यालयों में लड़कियों के प्रति इस रवैये व प्रचलित जेंडर मानदंडों और भूमिकाओं के अनुसार व्यवहार करती हैं, इस के परिणामस्वरूप और उन्हें आत्मसात कर आंतरिक रूप से विकसित कर लेती हैं। जो कई बार उनके सीखने की प्रक्रिया में बाधक होता है।

एक जेंडर शैक्षिक पाठ्यक्रम जेंडर सम्बन्धी पूर्वाग्रह और शैक्षिक प्रणाली के साथ–साथ समाज के भीतर भेदभाव को उलट देता है। इसके लिए शिक्षण, सीखने–सीखाने के तरीके और संसाधनों को हमारे पारंपरिक तरीकों के परिवर्तन की आवश्यकता है। भाषा की पाठ्यपुस्तक में, आज भी, चित्र पुरुषों को कुछ खेल, गतिविधियों और श्रम को दर्शाते हैं, जबकि लड़कियों को केवल पारंपरिक घरेलू गतिविधियों का प्रदर्शन करते दिखाया गया है। इसके अतिरिक्त इतिहास की पाठ्यपुस्तक में स्वतन्त्रता संग्राम में महिलाओं के योगदान के विषय में नाम मात्र स्थान मिला है। इतिहास में, छात्रों को महिला नेताओं की तुलना में पुरुष नेताओं के बारे में अधिक पढ़ाया जाता है, और महिलाओं की उपलब्धियों को हाशिए पर रखा जाता है। हमारी अधिकांश कहानियां मुख्य रूप से पारंपरिक महिला भूमिकाओं जैसे कि गृहकार्य और शिशु में लगी महिलाओं को चित्रित करती हैं, जबकि पुरुष पात्रों को परिवार के लिए कमाई के लिए

दिखाया जाता है। शिक्षक लड़कियों को शिल्प गतिविधियों में बेहतर करने की उम्मीद करके लिंग पूर्वाग्रह को मजबूत करते हैं, जबकि लड़कों से विज्ञान और गणित में अच्छा प्रदर्शन करने की उम्मीद की जाती है (जेंडर इनएकुँलिटी इन इंडिया)[6] अतरू विद्यालयों के माध्यम से लिंग असमानता को रोकने के साथ–साथ बड़े पैमाने पर समाज में इसके अस्तित्व को संबोधित करने की आवश्यकता है, और विद्यालयों के माध्यम से जेंडर समानता को बढ़ावा देने की पहल जरूरी है। विद्यालयों में जेंडर सम्बन्धी विचारों और प्रथाओं में दृष्टि–परिवर्तन, जेंडर के प्रभाव में परिवर्तन की भारी संभावना है, और इसके द्वारा पुरुषों और महिलाओं के जेंडर संवेदनशीलता और विद्यालय समान पीढ़ी का निर्माण कर सकता है।

लड़कियों में ड्रॉपआउट

भारत में, लड़कियां विद्यालयों में देर से दाखिला लेती हैं और जल्दी ही विद्यालय छोड़ देती हैं। प्राथमिक से उच्च प्राथमिक स्तर की लड़कियों की प्रगति भी लड़कों की तुलना में कम है। सबसे महत्वपूर्ण कारण उच्च प्राथमिक विद्यालयों की कमी हैय बालिका और गृहस्थी के काम से परिवार की आर्थिक उत्तरजीविका और लड़कियों की शिक्षा के प्रति जेंडर सांस्कृतिक दृष्टिकोण से विवश होकर लड़कियां जल्दी ही विद्यालय छोड़ देती हैं। शिक्षा मंत्रालय (पूर्व में मानव संसाधन विकास मंत्रालय)[7] के अनुसार, उच्च प्राथमिक स्तर की लड़कियों में ड्रॉपआउट दर 18ः है। कई विह्याली के माध्यमिक स्तर पर, लड़कियों को सुरक्षा के डर से, और विद्यालयों में शौचालय और सार्वजनिक सुविधाओं की कमी के कारण विद्यालय जाने की अनुमति नहीं मिलती। घर से विद्यालय तक की लंबी दूरी के कारण कई परिवार लड़कियों को स्कूल नहीं भेजते।

सीमांत समुदायों के मामले में बहुपक्षीय भेदभाव

हमारा समाज अनुसूचित जनजाति, अनुसूचित जाति, प्रवासी बच्चों, दलितों और गरीब, अल्पसंख्यक सहित महिलाओं के साथ भेदभाव करता है। यहं विशेष तौर पर देखा जाए तो हाशिए के समुदायों की बालिकाएँ मुख्यधारा के समाज का हिस्सा नहीं हैं, वे सामाजिक बहिष्कार का सामना करती हैं। कई अनुसूचित जनजातियों की बिखरी हुई प्रकृति के कारण, स्कूलों में भौगोलिक स्थिति के कारण उन की विद्यालय तक पहुँच मुश्किल है। प्रवासी श्रमिकों के बच्चों के विद्यालय को बीच में छोड़ने की दर बहुत अधिक है। इस तरह बालिकाएं दोहरी मार का शिकार हैं।

उपरोक्त कारणों एवं अन्य भी कारणों को विचार में रखते हुए, वर्तमान परिस्थति का दृष्टिपात करते हुए महिला शिक्षा को बढ़ावा देने के लिए समय समय पर विभिन्न कमेटियों का गठन किया और आयोगों के माध्यम से कई सिफारिशे दी गई है, जिससे महिला शिक्षा को प्रोत्साहन मिले और महिला ड्रॉप आउट अनुपात कम हो।

कोठारी आयोग के अनुसार जेंडर संबंधी सिफारिशें

शिक्षा आयोग की रिपोर्ट को कोठारी आयोग (1964–66) के नाम से भी जाना जाता है। कोठारी आयोग द्वारा महिलाओं की शिक्षा पर विमर्श इस नीति में एक ऐतिहासिक पहलु है। जिसमें जेंडर भेद को सामाजिक रूप से निर्मित और अवैज्ञानिक बताया। शिक्षा के माध्यम से राष्ट्रीय विकास में योगदान देने में महिलाओं की भूमिका की रिपोर्ट में चर्चा की गई। विश्व स्तर

पर भारतीय राष्ट्र को उत्पादकता बढ़ाने की आवश्यकता थी। यह हरित क्रांति का दशक भी था। महिलाओं को भी उत्पादकता बढ़ाने के लिए घर के बाहर निकलने की जरूरत थी, इसलिए उन्हें भी काम करने की जरूरत थी। यह माना जाता है कि उस समय महिलाएं मुख्य रूप से घर के भीतर रहती थी और किसी भी उत्पादक गतिविधि में उनका कोई स्थान नहीं था। जैसा कि उस समय देखा गया कि बड़ी संख्या में महिलाएं, जो गरीब थीं और असंगठित क्षेत्र में काम कर रही थीं परन्तु फिर भी इन्हें कामकाजी महिलाओं का दर्जा प्राप्त नहीं था। कोठारी आयोग द्वारा आधुनिकीकरण, राष्ट्र–राज्य के विकास के साधनवादी दृष्टि के लिए लड़कियों की शिक्षा और महिलाओं की शिक्षा को जोड़ने का आधार रखा। शिक्षा आयोग द्वारा विज्ञान और प्रौद्योगिकी शिक्षा को अपनाना भारत के सामाजिक और आर्थिक परिवर्तन के लिए आवश्यक था।

आजाद भारत की प्रथम राष्ट्रीय शिक्षा नीति,1968

औपनिवेशिक शासन के तहत ईसाई मिशनरियों और भारतीय समाज सुधारकों जैसे ज्योतिबाराव फुले, महात्मा गांधी, पंडिता रमाबाई, राम मनोहर लोहिया और अन्य द्वारा लड़कियों की शिक्षा के लिए कदम उठाए गए थे। आजादी के बाद, पहली राष्ट्रीय शिक्षा नीति, 1968 में पेश की गई, जिसमें बालिका शिक्षा पर जोर दिया गया। इसमें इस बात का उल्लेख किया गया कि महिला शिक्षा के द्वारा न सिर्फ देश प्रगति करता है, अपितु सामाजिक न्याय के आधार पर भी बालिकाओं को शिक्षा से वंचित नहीं रखा जा सकता।

एनईपी 1986 और प्रोग्राम ऑफ एक्शन 1992 रू जेंडर विषमता उन्मूलन के लिए दी गई सिफारिशें

राष्ट्रीय शिक्षा नीति (एनपीई) 1986 और प्रोग्राम ऑफ एक्शन 1992 ने भारत के शैक्षिक इतिहास में एक महत्वपूर्ण प्रस्थान को चिह्नित किया। इस अध्याय का शीर्षक था ''महिला समानता के लिए शिक्षा'' जिसमे बोला गया कि "शिक्षा का उपयोग महिलाओं की स्थिति में बुनियादी परिवर्तन के कारक के रूप में किया जाएगा (राष्ट्रीय शिक्षा नीति,1986)। अतीत के संचित विकृतियों को बेअसर करने के लिए, महिला शिक्षा के पक्ष में एक अच्छी तरह से कल्पना की जाएगी। राष्ट्रीय शिक्षा प्रणाली महिलाओं के सशक्तीकरण में एक सकारात्मक, हस्तक्षेपकारी भूमिका निभाएगी।

राष्ट्रीय शिक्षा नीति, 2020 : जेंडर विषमता का उन्मूलन

नई राष्ट्रीय शिक्षा नीति 2020 में बालिकाओं और महिलाओं की शिक्षा में भागेदारी बढ़ाने के लिए कुछ प्रावधान किये गए हैं। उपरोक्त विषय जेंडर को सही दिशा दिलाने के लिए वर्ष 2020 में कस्तूरीरंगन जी की अध्यक्षा में नई राष्ट्रीय शिक्षा नीति का गठन किया गया। नीति में राज्यों और स्थानीय सामुदायिक संगठनों की साझेदारी के साथ शिक्षा में जेंडर समानता प्राप्त करने के लिए जेंडर को प्राथमिकता के रूप में निर्धारित किया गया है। सम्पूर्ण नीति को जेंडर लेंस के माध्यम से लिखा गया, जिससे महिलाओं की भागीदारी शिक्षा में बढ़े।

राष्ट्रीय शिक्षा नीति ने पूरी ईमानदारी से उन समस्याओं और बाधाओं को पहचाना है जो बालिका शिक्षा बाधक हैं। राष्ट्रीय शिक्षा के नीतिगत प्रावधान बालिका शिक्षा में भागेदारी को

बढ़ाने के लिए प्रतिबद्ध है। राष्ट्रीय शिक्षा नीति (एनईपी) 2020 शिक्षा के सभी स्तरों प्री–स्कूल से लेकर माध्यमिक और उच्च शिक्षा तक सामाजिक और आर्थिक दृष्टि से वंचित समूहों (एसईडीजी) की एक समान सहभागिता सुनिश्चित करने पर जोर देती है। सामाजिक और आर्थिक रूप से वंचित समूहों की व्याख्या करते हुए राष्ट्रीय शिक्षा नीति में उन्हें अनेक श्रेणियों में बांटा गया है (राष्ट्रीय शिक्षा नीति, 2020 पैरा 6.2)। इन श्रेणियों को लिंग (महिला व ट्रांस जेन्डर), सामाजिक, सांस्कृतिक पहचान (अनुसूचित जाति, जनजाति, अन्य पिछड़ा वर्ग, अल्पसंख्यक वर्ग), भौगोलिक पहचान (जैसे गांव, कस्बे आदि के विद्यार्थी), विशेष आवश्यकता (जैसे सीखने की अक्षमता सहित), सामाजिक– आर्थिक परिस्थिति (जैसे प्रवासी समुदाय, निम्न आय वाले परिवार, असहाय परिस्थिति में रहने वाले बच्चे, बाल तस्करी के शिकार बच्चे या उनके बच्चे, शहरी गरीब भी शामिल हैं) आदि के आधार पर वर्गीकृत किया गया है। इन्हीं सब के साथ एनईपी, 2020 सभी श्रेणियों में बालिका शिक्षा की बात करती है (प्रत्येक श्रेणी में बालिका दोहरी मार की शिकार होती है)

इस नीति के अनुसार भारत सरकार सभी लड़कियों को गुणवत्तापूर्ण और न्यायसंगत शिक्षा प्रदान करने के लिए जेंडर इंक्लूजन फंडश का गठन करेगी। जिसमें जेन्डर समावेशी कोश (पैरा 6.8 एन ई पी 2020)[8] की स्थापना एक नया और क्रांतिकारी कदम है। यह जेंडर समावेशी कोश राज्यों के लिए उपलब्ध करवाया जाएगा जिससे उनको ऐसी नीतियों, योजनाओं, कार्यक्रमों आदि को लागू करने में सहायता मिलेगी जिससे बालिकाओं को विद्यालय परिसर में अधिक सुरक्षापूर्ण और स्वस्थ वातावरण मिल सके. यथा शौचालय स्थापित करना, स्वच्छता और सेनिटेशन संबंधित अन्य सुविधाएं प्रदान करना, स्कूल आने जाने के लिए साइकिल देना, फीस इत्यादि ना भर पाने की स्थिति में उनके अभिभावकों को सशर्त नगद हस्तांतरण करना ताकि गरीबी के कारण उन्हें स्कूल छोड़ने पर मजबूर ना होना पड़े। उनकी सुरक्षा के लिए समुचित कदम उठाए जाएं तो विद्यालयों में बालिकाओं का नामांकन भी बढ़ेगा। यह निधि, स्कूलों में लड़कियों के सौ प्रतिशत नामांकन और उच्च शिक्षा में रिकॉर्ड भागीदारी दर सुनिश्चित करने, सभी स्तरों पर जेंडर भेद को कम करने, जेंडर समता का अभ्यास करने और समाज में सकारात्मक नागरिक संवादों के माध्यम से लड़कियों की नेतृत्व क्षमता में सुधार लाने पर ध्यान केंद्रित करेगी। राष्ट्रीय शिक्षा नीति में यह भी कहा गया है कि सामाजिक और आर्थिक रूप से वंचित समूहों में छात्रों के लिए मुफ्त छात्रावासों का निर्माण किया जाएगा जिनमें बालिकाओं की सुरक्षा का पूरा ध्यान रखा जाएगा।

कस्तूरबा गांधी बालिका विद्यालयों जो कि बालिका शिक्षा के लिए भारत सरकार की पहले से ही एक योजना है, उनका और अधिक विस्तार किया जाएगा (पैरा 6.9). निश्चित रूप से ग्रामीण अंचलों, पहाड़ी और दुर्गम क्षेत्रों, दूर दराज के इलाकों में जहां विद्यालयों की कमी है, विशेष तौर पर बालिकाध्महिला विद्यालयों और छात्रावासों की वहां इस योजना के अच्छे परिणाम सामने आएंगे और बालिकाओं का नामांकन बढ़ेगा। राष्ट्रीय शिक्षा नीति के अध्याय तीन में भी बालिकाओं के लिए सुरक्षित छात्रावास और यातायात के साधनों को उपलब्ध कराने की सिफारिश की गई है। नीति में इस बात पर जोर दिया कि संस्था के प्रमुख पदों पर महिलाओं की संख्या पर बल दिया जाएगा, जिसमें प्रधानाचार्य, शिक्षक, वार्डन, शारीरिक प्रशिक्षक और

अन्य कर्मचारी शामिल होंगे। शिक्षकों (विशेषकर कुछ ग्रामीण क्षेत्रों में) के बीच जेंडर असंतुलन को कम करने के लिए, शैक्षिक और व्यावसायिक दोनों तरह की योग्यता से समझौता किए बिना महिला शिक्षक भर्ती के लिए वैकल्पिक रास्ते पेश किए जाएंगे। एनईपी 2020 परिसर के अंदर और बाहर दोनों जगह स्कूल जाने वाली लड़कियों की सुरक्षा पर ध्यान केंद्रित करेगी। जिसके लिए वह समूह शिक्षा और छात्रवृति में साइकिल देने को प्रोत्साहित करती है। इसमे नीति, समुचित सरकारी निधि का निर्धारण करने के प्रस्ताव में, सामाजिक–आर्थिक रूप से वंचित छात्रों को और अधिक वित्तीय सहायता और छात्रवृत्तियाँ प्रदान करने की सिफारिश करती है।

स्कूलों को वार्षिक मान्यता के लिए नामांकन से पहले उत्पीड़न रोधक, महिलाओं के खिलाफ भेदभाव और प्रभुत्व मुक्त परिसर सुनिश्चित करना होगा। इससे कक्षा में बालिकाओं की उपस्थिति बढ़ेगी। नीति सामाजिक स्तर पर जेंडर रूढ़ियों की पहचान करेगी जो लड़कियों को शिक्षा प्राप्त करने से रोकती हैं और इनके ड्रॉपआउट का कारण बनती हैं। शिक्षकों, आंगनबाड़ी कार्यकर्ताओं और स्थानीय सामाजिक उद्यमियों को बालिकाओं के परिवारों को उचित परामर्श देने के लिए प्रशिक्षित किया जाएगा। सभी शैक्षणिक संस्थानों को जेंडर भेद पर रोक लगाने के लिए लैंगिक मुद्दों पर जागरूकता सत्र आयोजित करने के लिए बाध्य किया जाएगा। उत्पीड़न मुक्त वातावरण के महत्व और जेंडर के समान व्यवहार पर और बाल विवाह निषेध अधिनियम के तहत लड़कियों और महिलाओं के लिए कानूनी संरक्षण और अधिकार पर संगोष्ठियों का आयोजन किया जाएगा। जेंडर सम्बन्धी उच्च व्यवहार के लिए प्रशिक्षण कार्यक्रम भी आयोजित किए जाएँगे। यौन अपराधों से बच्चों का संरक्षण अधिनियम, मातृत्व लाभ अधिनियम और कार्यस्थल अधिनियम में महिलाओं का यौन उत्पीडन से सम्बंधित जानकारी दी जाएगी। इसके अतिरिक्त विद्यालयों में जेंडर संवेदनशीलता सम्बंधित कार्यशालाओं का आयोजन किया जाएगा। समावेशी कक्षा प्रबंध के बारे में जागरूकता दी जाएगी। जिससे शिक्षक इसे कक्षाओं में प्रोत्साहित कर सकें। नीति विशेष रूप से कम सामाजिक और आर्थिक–सांस्कृतिक समूहों के शैक्षिक उत्थान पर ध्यान केंद्रित करेगी, और इसके अतिरिक्त छात्रवृत्ति और फैलोशिप की सुविधा भी प्रदान करेगी। यह भी ध्यान रखा जाएगा कि उच्चतर शिक्षण संस्थानों में प्रवेश में लिंग–संतुलन को बढ़ावा दिया जाए, अनेक साधनों और माध्यमों से संकाय सदस्यों, परामर्शदाताओं, विद्यार्थियों आदि सभी को जेंडर के प्रति संवेदनशील बनाया जाए, परिसर में भेदभाव और उत्पीड़न के लिए बने हुए नियमों को सख्ती से लागू किया जाए आदि. ये सभी व्यवस्थाएं उच्चतर शिक्षा संस्थानों में महिला विद्यार्थियों के लिए अनुकूल वातावरण का निर्माण करेंगी।

ऐसा प्रतीत होता है कि नई शिक्षा नीति 2020 में प्रस्तावित अधिक छात्रवृत्तियां, बालिका छात्रावासों का विस्तार, अलग से जेन्डर समावेशी फंड, क्रेडिट ट्रांसफर, अधिक सुरक्षित स्कूल, विश्वविद्यालय परिसर आदि अनेक कदम मिलकर बालिकाओं और महिलाओं को एक बड़ी संख्या में विद्यालयों तक लाने में कामयाब हो पाएंगे। इसी के साथ, राष्ट्रीय शिक्षा नीति, 2020 द्वारा पाठ्यक्रम जेंडर तटस्थ, प्रोद्योगिकी उन्मुख और स्थायी रोजगार के लिए अधिक बल दिया है। पाठ्यक्रम और सहभागी क्रियाएँ जेंडर समता को और मजबूती प्रदान करने में सक्षम होगी। इस प्रकार बालिका शिक्षा में भागेदारी को बढ़ाने हेतु नई राष्ट्रीय शिक्षा नीति के बहुत विस्तृत आयाम हैं।

निष्कर्ष

किसी भी राष्ट्र की सामाजिक और आर्थिक स्थिति सुदृढ़ करने के लिए महिला शिक्षा की आवश्यकता होती है। स्वत्रंता के 75 वर्षों के बाद भी महिला शिक्षा की स्थिति चिंतनीय है। आज जहाँ एक ओर हम आजादी का अमृत महोत्सव बना रहे हैं, वहां जेंडर समानता के बारे में चर्चा करना आवश्यक है। जेंडर समानता में सबसे महत्वपूर्ण कदम शिक्षा का होता है। विभिन्न आयोग और आयोगों के माध्यम से शिक्षा में समानता पर बल देने की बात कही गई है। 1968 एवं 1986 की शिक्षा नीतिके द्वारा महिला शिक्षा को बढ़ावा मिला और ऐसी सिफारिशें की गई, जिससे महिला शिक्षा को प्रोत्साहन मिले सके। परन्तु बालिका शिक्षा में नामांकन और ड्रॉप आउट जैसी समस्याओं का समाधान नहीं हो पाया। वर्तमान में नई राष्ट्रीय शिक्षा नीति का जेंडर लेंस से निर्माण करने की सफल कोशिश की गई है, जिसमे बालिका शिक्षा को प्रभावित करने वाले विभिन्न कारणों पर शोध करके, सुझाव दिए गए हैं, जिससे शिक्षा द्वारा जेंडर समानता को बल मिल सके। नीति के द्वारा चुनौतियों को पहचानते हुए उत्कृष्ट सिफारिशें दी है। राष्ट्रीय शिक्षा नीति 2020 की सबसे महत्वपूर्ण विशेषताओं में से एक समता और समावेशन पर केंद्रित है। माध्यमिक स्तर पर होने वाली ड्रॉप आउट की समस्या के लिए बालिकाओ के सुरक्षा और स्वछता जैसे विषयों पर जोर दिया गया है। उच्च शिक्षा के लिए छात्रवृति आदि के बारे में सुझाव दिए गए हैं। साथ ही सभी राज्यों को बालिका शिक्षा को बढ़ावा देने के लिए जेंडर समावेशी फंड की घोषणा की गई है। शिक्षा के क्षेत्र में जेंडर न्याय की आवश्यकता है, इसके लिए नीति द्वारा गंभीर सुझाव दिए गए हैं। जिनकी समय रहते सही क्रियांवयन जरुरी है। अंत में, नीति में देश की सीखने की पद्धति को फिर से संगठित करने और एक जीवंत भारत के निर्माण की स्पष्ट दृष्टि है, जहाँ महिला पुरुष कंधे से कंधा मिलकर सभी के लिए समान नए समाज का निर्माण कर सकें।

❐

सन्दर्भ –

1. *Manjrekar, Nandini. (Ed.). (2020). Gender and Education in India: A reader(pg No.27) Aakar Books:New Delhi*
2. *Ramachandra, Vimala & Jandhyala, Kameshwari.(2019). Gender and Education(pg No.20) Orient Blackswan*
3. *Global Campaign for Education(Pg No.11). Retrieved July 02, 2019 from http:// campaignforeducation.org/docs/reports/GCE_INTERIM_Gender_Report.pdf*
4. *Singh,Shailash(2012),Gender Discrimination in Education: The Violation of Rights of Women and Girls(Pg No.47) Global press, Mumbai*
5. *Nikkhoo, T., &Jonsson, E. (2017). Female Education and Gender Inequality. A study of Indian children's enrolment and future outcomes(Pg No. 57) University of Gothenburg. Retrieved July 02, 2019 from https://gupea.ub.gu.se/bitstream/2077/52910/1/gupea_2077_52910_1.pdf*
6. *https://ihds.umd.edu/sites/default/files/publications/papers/Education Gender Inequality in India pdf*
7. *Government of India.(1998). National Policy on Education 1986(Pg No.87),New Delhi. MHRD, Government of India*
8. *Government of India, National Education Policy 2020(Pg No. 39). New Delhi: MHRD, Govt. of India.*

पूर्वदेवा– सामाजिक विज्ञान शोध पत्रिका
वर्ष 29, अंक, 116, जनवरी–मार्च, 2024 पृ. 32–38

UGC Care Listed Journal
ISSN 0974 -1100

वैश्विक मुद्दे : लैगिंक समानता और महिला सशक्तिकरण

डॉ. भारत भूषण
जम्मू केन्द्रीय विश्वविद्यालय, राया–सुचानी (बागला)–181143 जिला सांबा, (जम्मू–कश्मीर)
E-mail: rromi4@gmail.com Mob. 9041493117

सारांश

शिक्षा फोकस का एक प्रमुख क्षेत्र है। यद्यपि दुनिया शिक्षा में लैंगिक समानता प्राप्त करने में प्रगति कर रही है, फिर भी लड़कियां लड़कों की तुलना में स्कूल न जाने वाले बच्चों का प्रतिशत अधिक बनाती हैं। विकासशील देशों में लगभग एक चौथाई लड़कियां स्कूल नहीं जाती हैं। आमतौर पर, सीमित साधनों वाले परिवार जो अपने सभी बच्चों के लिए स्कूल फीस, वर्दी और आपूर्ति जैसी लागतों को वहन नहीं कर सकते हैं, वे अपने बेटों के लिए शिक्षा को प्राथमिकता देंगे। परिवार घरेलू कामों, पानी ले जाने और बच्चों की देखभाल के लिए लड़कियों के श्रम पर भी भरोसा कर सकते हैं, जिससे स्कूली शिक्षा के लिए सीमित समय बचता है। लेकिन लड़कियों की शिक्षा को प्राथमिकता देना शायद विकासशील दुनिया में निवेश पर सबसे अधिक रिटर्न प्रदान करता है। एक शिक्षित लड़की शादी को स्थगित करने, एक छोटे परिवार को बढ़ाने, स्वस्थ बच्चे पैदा करने और अपने बच्चों को स्कूल भेजने की अधिक संभावना है। उसके पास आय अर्जित करने और राजनीतिक प्रक्रियाओं में भाग लेने के अधिक अवसर हैं, और उसके एचआईवी से संक्रमित होने की संभावना कम है। महिलाओं का स्वास्थ्य और सुरक्षा एक और महत्वपूर्ण क्षेत्र है। एचआईवीएड्स महिलाओं के लिए एक तेजी से प्रभावशाली मुद्दा बनता जा रहा है। यह महिलाओं को स्वास्थ्य शिक्षा के लिए कम अवसर, यौन साझेदारी में असमान शक्ति या लिंग आधारित हिंसा के परिणामस्वरूप संबंधित हो सकता है। मातृ स्वास्थ्य भी विशिष्ट चिंता का विषय है। कई देशों में, महिलाओं को प्रसवपूर्व और शिशु देखभाल तक सीमित पहुंच है, और गर्भावस्था और प्रसव के दौरान जटिलताओं का अनुभव करने की अधिक संभावना है। यह उन देशों में एक महत्वपूर्ण चिंता का विषय है जहां लड़कियां शादी करती हैं और तैयार होने से पहले बच्चे पैदा करती हैंय अक्सर 18 साल की उम्र से पहले। गुणवत्तापूर्ण मातृ स्वास्थ्य देखभाल सूचना और सेवाओं के

लिए एक महत्वपूर्ण प्रवेश बिंदु प्रदान कर सकती है जो माताओं को अपने स्वयं के स्वास्थ्य और उनके बच्चों के स्वास्थ्य के बारे में सूचित निर्णय लेने वालों के रूप में सशक्त बनाती है।

उद्देश्य

1. महिला सशक्तिकरण की अवधारणा को जानना
2. आधुनिक युग में लैंगिक समानता और महिला सशक्तिकरण के प्रभाव को जानना।
3. लैंगिक समानता को जानने के लिए, आज की तरह देखो।
4. महिलाओं द्वारा सामना किए जाने वाले वैश्विक मुद्दों का अध्ययन करना।

महिला सशक्तिकरण

महिलाओं की मजबूती को महिलाओं के आत्म–जागरूकता मूल्य, अपने स्वयं के निर्णय लेने की उनकी क्षमता और उनके और दूसरों के लिए सामाजिक परिवर्तन को प्रभावित करने की उनकी पात्रता को आगे बढ़ाने की विशेषता हो सकती है। यह दृढ़ता से महिला मजबूती के साथ पंक्तिबद्ध है– एक प्रमुख बुनियादी स्वतंत्रता जो एक अधिक शांत, समृद्ध दुनिया को पूरा करने के लिए अतिरिक्त रूप से महत्वपूर्ण है। पश्चिमी देशों में, महिला मजबूती अक्सर महिलाओं की स्वतंत्रता के विकास की स्पष्ट अवधि से जुड़ी होती है। इस विकास को सामान्य रूप से तीन तरंगों में विभाजित किया जाएगा, शुरू में उन्नीसवीं और बीसवीं शताब्दी के मध्य में शुरू हुआ जहां प्रशंसापत्र एक महत्वपूर्ण घटक था। 1960 के दशक की दूसरी भीड़ में सार्वजनिक क्षेत्र में यौन परेशान और महिलाओं की नौकरी शामिल थी। तीसरी लहर में महिलाओं के अधिकारों को नियमित रूप से 1990 के दशक के दौरान शुरू माना जाता है। महिलाओं की स्वतंत्रता को मजबूत करना और आगे बढ़ाना एक महत्वपूर्ण विश्वव्यापी विकास के एक टुकड़े के रूप में उभरा है और हाल ही में कुछ नया शुरू करने के लिए आगे बढ़ रहा है। अंतर्राष्ट्रीय महिला सशक्तिकरण दिवस जैसे दिन भी जोर पकड़ रहे हैं। फिर भी, बहुत सारी प्रगति की परवाह किए बिना, महिलाएं और युवा महिलाएं दुनिया के सभी पहलुओं में अलगाव और क्रूरता का सामना करती रहती हैं।[1]

लैंगिक समानता आज की तरह दिखती है

अभिविन्यास संतुलन और महिलाओं की स्वतंत्रता पर प्रगति की एक और विश्वव्यापी जांच से पता चलता है कि महिलाएं और युवा महिलाएं कोविड–19 महामारी के बाद वित्तीय स्थिति से अत्यधिक प्रभावित हैं, एकतरफा उच्च कार्य और व्यावसायिक दुर्भाग्य, निर्देश व्यवधान और उपेक्षित देखभाल कार्य के विस्तारित भार से जूझ रही हैं। महामारी से पहले भी अपर्याप्त रूप से सब्सिडी प्राप्त महिलाओं के स्वास्थ्य प्रशासन को महत्वपूर्ण गड़बड़ी का सामना करना पड़ता, जिससे महिलाओं की यौन और अवधारणात्मक भलाई को नुकसान पहुंचा। इसके अलावा कोविड–19 से निपटने में महिलाओं के मुख्य काम के बावजूद, जिसमें सबसे आगे स्वास्थ्य कार्यकर्ता भी शामिल हैं, उन्हें अभी भी आम तौर पर प्रशासनिक भूमिकाओं के लिए छोड़ दिया जाता है। संयुक्त राष्ट्र (डीईएसए) के साथ संयुक्त राष्ट्र महिला की सबसे हालिया रिपोर्ट, सतत विकास लक्ष्यों पर प्रगतिरू लिंग स्नैपशॉट 2021 17 सतत विकास लक्ष्यों में से प्रत्येक में

अभिविन्यास संतुलन पर सबसे हालिया जानकारी प्रस्तुत करता है। रिपोर्ट में कहा गया है कि 2015 के आसपास हुई प्रगति के साथ–साथ कोविड–19 महामारी, महिलाओं की समृद्धि पर इसके त्वरित प्रभाव और भविष्य में लोगों के लिए इसके खतरे के बारे में सावधानी बरती गई है। हम रिपोर्ट से खोजों के एक हिस्से को अलग कर रहे हैं, और प्रगति को गति देने के लिए अपेक्षित गतिविधि की आवश्यकता है।[2]

गरीबी

2021 में, अपमानजनक आवश्यकता बढ़ रही है और इसके निपटान की दिशा में प्रगति बदल गई है। दुनिया भर में अनुमानित 435 मिलियन महिलाएं और युवा महिलाएं अपमानजनक अभाव में रह रही हैं। लेकिन हम इसे बदल सकते हैं। 150 मिलियन महिलाओं और युवा महिलाओं के उत्तर में 2030 तक गरीबी से बाहर निकल सकते हैं, यह मानते हुए कि राज्य प्रशिक्षण और परिवार की व्यवस्था के लिए प्रवेश को और विकसित करने, समान मजदूरी को पूरा करने और सामाजिक आदान–प्रदान को व्यापक बनाने के लिए एक दूरगामी पद्धति निष्पादित करते हैं।

शून्य लालसा

महामारी के दौरान खाद्य सुरक्षा में विश्वव्यापी अभिविन्यास छेद काफी बढ़ गया है, जिसमें अधिक महिलाएं और युवा महिलाएं भूखे रह रही हैं। 2020 में महिलाओं के भोजन की कमजोरी का स्तर पुरुषों की तुलना में 10 प्रतिशत अधिक था, जबकि 2019 में 6 प्रतिशत अधिक था। इस पैटर्न को बदला जा सकता है, जिसमें महिलाओं को सीमित दायरे के निर्माताओं का समर्थन करना शामिल है, जो आम तौर पर विस्तारित वित्तपोषण, तैयारी और भूमि विशेषाधिकार में बदलाव के माध्यम से पुरुषों के रूप में निश्चित रूप से अधिक नहीं खरीदते हैं।

महान भलाई और समृद्धि

कोविड–19 के कारण बुनियादी स्वास्थ्य प्रशासन में रुकावटें महिलाओं और युवा महिलाओं को नकारात्मक रूप से प्रभावित कर रही हैं। महामारी के मुख्य वर्ष में, कम और केंद्र वेतन वाले देशों में अनुमानित 1.4 मिलियन अतिरिक्त आकस्मिक गर्भधारण थे। हम बेहतर करना चाहते हैं। महामारी की प्रतिक्रिया में यौन और पुनर्योजी कल्याण प्रशासन पर ध्यान केंद्रित करना शामिल होना चाहिए, यह सुनिश्चित करना कि वे अब और महामारी के लंबे समय तक समाप्त होने के बाद सुरक्षित रूप से काम करते रहें। इसके अलावा, जीवन रक्षक व्यक्तिगत बीमा उपकरण, परीक्षण, ऑक्सीजन और विशेष रूप से टीकाकरण की गारंटी देने के लिए अधिक मदद की उम्मीद है जो अमीर और दुर्भाग्यपूर्ण देशों के साथ–साथ देशों के अंदर कमजोर आबादी के लिए भी सुलभ है।

गुणवत्तापूर्ण स्कूली शिक्षा

महामारी के आठारह महीने बाद, दुनिया के 42: देशों और क्षेत्रों में स्कूल कुछ हद तक या पूरी तरह से बंद हैं। स्कूल की बंदिशों ने युवा महिलाओं के लिए सीधे और कुछ हद तक या पूरी तरह से सुरक्षित गुनाह करने का खतरा बढ़ा दिया है, जैसे कि क्रूरता, दोहरे व्यवहार, और कम उम्र में शादी का खतरा। राज्यों को युवा महिलाओं की स्कूली शिक्षा की सुरक्षा के लिए

और भी अधिक कदम उठाने की आवश्यकता है। युवा महिलाओं को स्कूल वापस जाने में मदद करने के लिए स्पष्ट रूप से किए गए उपायों की गंभीर आवश्यकता है, जिसमें उन सभी को ध्यान में रखने के लिए कम से कम नेटवर्क शामिल हैं जो सबसे अधिक खतरे में हैं।[3]

अभिविन्यास निष्पक्षता

महामारी ने महिलाओं के विशेषाधिकारों और संभावित खुले दरवाजों को बढघने में प्रगति की कोशिश की है और आश्चर्यजनक रूप से बदल दिया है। कोविड–19 के लिए एक छाया महामारी, महिलाओं और युवा महिलाओं के खिलाफ क्रूरता की रिपोर्टें ग्रह के कई क्षेत्रों में फैल रही हैं। कोरोनावायरस घर पर महिलाओं की जिम्मेदारी को भी बढ़ा रहा है, जिससे कई लोग कर्मचारियों से दूर और बाहर हो रहे हैं। लेकिन फिर हम इसे बदल सकते हैं। विशिष्ट और बेहतर तरीके से आगे बढ़ने के लिए महिलाओं और युवा महिलाओं को प्रतिक्रिया और स्वास्थ्य लाभ के सभी हिस्सों के केंद्र बिंदु पर रखने पर निर्भर करेगा, जिसमें अभिविन्यास, उत्तरदायी नियम, दृष्टिकोण और योजना शामिल हैं।[4]

साफ पानी और नसबंदी

2018 में, लगभग 2.3 बिलियन लोग पानी केंद्रित देशों में रहते थे। सुरक्षित पेयजल, संतोषजनक कीटाणुशोधन और स्त्री स्वच्छता कार्यालयों के बिना, महिलाओं और युवा महिलाओं को संरक्षित, उपयोगी और स्वस्थ जीवन जीना मुश्किल लगता है। परिवर्तन कल्पनीय है। पानी में सबसे अधिक प्रभावित लोगों को बोर्ड प्रक्रियाओं में शामिल करें, जिसमें महिलाएं भी शामिल हैं। बोर्ड की प्रक्रिया के पानी में महिलाओं की आवाज नियमित रूप से अनुपस्थित होती हैं।

उचित और स्वच्छ ऊर्जा

स्वच्छ ऊर्जा और कम कार्बन व्यवस्था के लिए विस्तारित रुचि ऊर्जा क्षेत्र के एक अभूतपूर्व परिवर्तन को चला रही है। किसी भी मामले में, महिलाओं को एक नियम के रूप में छोड़ दिया जाता है। महिलाओं के पास टिकाऊ बिजली व्यवसायों का सिर्फ 32: हिस्सा है। हम सुधार कर सकते हैं। युवा महिलाओं को एसटीईएम स्कूली शिक्षा के लिए बल्ले से उजागर करें, ऊर्जा क्षेत्र में प्रवेश करने वाली महिलाओं को तैयारी और समर्थन दें, मुआवजे के छेद को बंद करें और ऊर्जा क्षेत्र में महिलाओं के प्रशासन में वृद्धि करें।

वित्तीय विकास

निष्पक्ष कार्य और उपयोग की जाने वाली महिलाओं की संख्या में 2020 में 54 मिलियन की गिरावट आई और 45 मिलियन महिलाओं ने काम के बाजार को छोड़ दिया। महिलाओं ने पुरुषों की तुलना में अधिक चरम रोजगार दुर्भाग्य का अनुभव किया है, साथ ही घर पर उपेक्षित देखभाल की परेशानियों का विस्तार किया है। हमें कार्यबल में महिलाओं की मदद करने के लिए और अधिक करना चाहिए। सभी के लिए सम्मानजनक काम की गारंटी देना, कार्य नियमों परिवर्तनों को प्रस्तुत करना, श्रम बल में प्रवेश करने वाली विवाहित महिलाओं के लिए वैध सीमाओं को समाप्त करना, उचित, गुणवत्तापूर्ण बाल देखभाल के लिए प्रवेश का समर्थन करना।[5]

उद्योग, उन्नति और रूपरेखा

कोविड–19 आपातकाल ने नैदानिक अन्वेषण और प्रगति में उल्लेखनीय उपलब्धियां हासिल की हैं। महिलाओं की प्रतिबद्धता महत्वपूर्ण रही है। फिर भी एक ही समय में विज्ञान, नवाचार, डिजाइनिंग और गणित क्षेत्र में 33ः से अधिक स्नातक महिलाएं हैं। आज हम एक कदम उठा सकते हैं। महिलाओं को शामिल करने वाले महिलाओं द्वारा संचालित समूहों या समूहों को दिए जाने वाले परीक्षा पुरस्कारों की एक सीमा महिला विशेषज्ञों का समर्थन करने के लिए एक महत्वपूर्ण तरीका है।[6]

असमानताओं में कमी

महामारी के कारण, महिलाओं के प्रति प्रगति को सीमित करने का प्रयास किया जा रहा है। विभिन्न प्रकार की समस्याओं का सामना करने वाली महिलाएं, विकलांग महिलाएं, युवा महिलाएं, क्षणिक महिलाएं, और उन महिलाओं को विशेष रूप से प्रभावित किया जा रहा है जिनकी जाति राष्ट्रीयता से संबंधित है। हम वास्तविक सुधार करने का संकल्प लेना चाहते हैं। अपनी संरचनाओं को पूर्णता में पहुंचाने, पूर्वाग्रह और भेदभाव को समाप्त करने, और संसाधनों को एक व्यापक, सामान्य, और उत्तरदायी सामाजिक सुरक्षा संरचना में शामिल करने का संकल्प लेना चाहिए जो सभी महिलाओं को समर्थन प्रदान करती है।[7]

समर्थन योग्य शहरी क्षेत्रों और नेटवर्क

दुनिया भर में, 1 बिलियन से अधिक लोग आकस्मिक बस्तियों और यहूदी बस्तियों में रहते हैं। इन घनी आबादी वाले क्षेत्रों में अक्सर अधिक प्रतिनिधित्व वाली महिलाओं और युवा महिलाओं को मौलिक पानी और कीटाणुशोधन, चिकित्सा सेवाओं और परिवहन के लिए प्रवेश की अनुपस्थिति के दुष्प्रभावों का अनुभव होता है। महानगरीय दुर्भाग्यपूर्ण महिलाओं की आवश्यकताओं पर ध्यान केंद्रित किया जाना चाहिए। मजबूत और पर्याप्त आवास की व्यवस्था में वृद्धि और भूमि के लिए समान रूप से प्रवेश करनाय महानगरीय तैयारी और उन्नति प्रक्रियाओं के लिए लोगों को याद किया जाना चाहिए।[8]

समर्थन योग्य उपयोग और निर्माणय लक्ष्य

महिलाओं के कार्यकर्ता, शोधकर्ता और विश्लेषक अपनी अंतर्दृष्टि और क्षमताओं को साझा करने के लिए पुरुषों के समान चरणों के बिना पर्यावरण आपातकाल को हल करने का प्रयास कर रहे हैं। वैश्विक समुद्री विज्ञान समारोहों में हाइलाइट किए गए वक्ताओं में से सिर्फ 29 प्रतिशत महिलाएं हैं। लेकिन फिर हम इसे बदल सकते हैं। सुनिश्चित करें कि महिला कार्यकर्ताओं, शोधकर्ताओं और विश्लेषकों के पास उन सभाओं में समान आवाज, चित्रण और प्रवेश है जहां इन मुद्दों की जांच और चर्चा की जा रही है।[9]

सद्भाव, इक्विटी और ठोस संगठन

गतिशीलता में महिलाओं की अनुपस्थिति कोविड–19 महामारी और अन्य संकट ों के उपचार के प्रयासों की सीमा और प्रभाव को सीमित करती है। संघर्ष प्रभावित देशों में, 18.9 प्रतिशत संसदीय सीटें महिलाओं के पास हैं, जो दुनिया भर में 25.6 प्रतिशत के सामान्य से बहुत कम है। यह अनुपयुक्त है। यह महिलाओं के लिए सभी स्तरों पर बल और दिशा के बराबर हिस्से के लिए आदर्श अवसर है।[10]

उद्देश्यों के लिए विश्वव्यापी संगठन

2030 तक वैश्विक लक्ष्यों को पूरा करने के लिए केवल 9 साल बचे हैं, और उनमें से हर एक में अभिविन्यास एकरूपता में कटौती होती है। कोविड–19 के कारण महिलाओं की स्वतंत्रता पर प्रगति में ढील मिलने के साथ, वर्तमान में कार्य करने का अवसर है। आज की स्थिति के अनुसार, ओरिएंटेशन इक्विटी के लिए विश्वव्यापी उद्देश्य (एसडीजी 5) के तहत सिर्फ एक मार्कर निकट लक्ष्य है। पड़ोस की सरकार में महिलाओं के पास सीटों की सीमा।[11] महिलाओं की मजबूती, उपेक्षित देखभाल और घरेलू काम पर खर्च किए गए समय में निष्पक्षता और यौन और अवधारणात्मक कल्याण के संबंध में स्वतंत्र दिशा के लिए बुनियादी विभिन्न क्षेत्रों में दुनिया लक्ष्य से बहुत दूर है। प्रगति को गति देने के लिए एक हड़ताली दायित्व के बिना, दुनिया भर में स्थानीय क्षेत्र अभिविन्यास एकरूपता को पूरा करने की उपेक्षा करेगा। विपरीत और बेहतर तरीके से आगे काम करने के लिए महिलाओं और युवा महिलाओं को प्रतिक्रिया और स्वास्थ्य लाभ के सभी हिस्सों के केंद्र बिंदु पर रखने की आवश्यकता होगी, जिसमें अभिविन्यास, उत्तरदायी नियम, व्यवस्था और योजना शामिल है।[12]

निष्कर्ष :

महिलाओं और पुरुषों के बीच बुनियादी स्वतंत्रता और पत्राचार के लिए सम्मान दोनों संघ के लिए मूल्यों की स्थापना कर रहे हैं, जैसा कि यूरोपीय संघ की संधि और यूरोपीय संघ के मौलिक अधिकारों के चार्टर में व्यक्त किया गया है। सामान्य गुणों को आगे बढ़ाना आवश्यक है, उदाहरण के लिए, महिलाओं और पुरुषों के बीच बुनियादी स्वतंत्रता और पत्राचार के साथ–साथ एक विशिष्ट समझौता कि बुनियादी स्वतंत्रता व्यापक है और सभी पर लागू होती है, चाहे वह अन्य बातों से भी स्वतंत्र हो, सेक्स से स्वतंत्र, दफन हो। यूरोपीय संघ के कामकाज पर संधि (टीएफईयू) यह देती है कि संघ असमानताओं को निपटाने और महिलाओं और पुरुषों के बीच संतुलन को आगे बढ़ाने के लिए अपने अभ्यासों की संपूर्णता को इंगित करेगा, और अपने दृष्टिकोण और अभ्यासों को चिह्नित करने और करने के दौरान लिंग सहित विभिन्न आधारों पर अलगाव से लड़ने के लिए कदम उठाएगा और परिषद को उन आधारों पर अलगाव से लड़ने के लिए कदम उठाने में सक्षम बनाता है। निष्कर्ष की यह व्यवस्था यूरोपीय संसद, परिषद, आयोग और अन्य लागू भागीदारों द्वारा उठाए गए पिछले काम और राजनीतिक जिम्मेदारियों पर विस्तार करती है, अनुबंध में दर्ज रिपोर्टों को शामिल करती है। महिलाओं और पुरुषों के बीच निष्पक्षता यूरोपीय संघ का एक केंद्रीय दिशानिर्देश है जो संधियों में पोषित है और संघ के लक्ष्यों और कार्यों में से एक है, और अपने अभ्यासों की संपूर्णता में महिलाओं और पुरुषों के बीच संतुलन के नियम को मुख्यधारा में लाना संघ के लिए एक विशेष मिशन को संबोधित करता है। लोगों के बीच एकरूपता यूरोपीय संघ के मौलिक अधिकारों के चार्टर के अनुच्छेद 23 में पोषित है। यूरोपीय संसद और परिषद दोनों ने 2015 के बाद की अवधि के लिए अभिविन्यास पत्राचार के लिए पिछली रणनीतियों के समान उचित स्थिति के साथ एक रणनीति लेने के लिए आयोग का स्वागत किया है।[13] 2016 के लिए अपने कार्य कार्यक्रम में, आयोग ने लोगों के बीच पत्राचार को आगे बढ़ाने के लिए अपने काम के साथ आगे बढ़ाने के अपने दायित्व की पुष्टि की है। आयोग ने हाल ही में अभिविन्यास एकरूपता 2016–2019 के लिए अपनी रणनीतिक प्रतिबद्धता

पेश की जो पांच सीमा क्षेत्रों को परिभाषित करती हैरू महिला कार्य बाजार निवेश का विस्तार और महिलाओं और पुरुषों की समान मौद्रिक स्वायत्तताय अभिविन्यास वेतन, आय और लाभ के छेद को कम करना और इस तरह से महिलाओं के बीच जरूरत से जूझनाय नेविगेशन में महिलाओं और पुरुषों के बीच समानता को बढ़ावा देनाय अभिविन्यास आधारित क्रूरता से लड़ना और हताहतों की सुरक्षा और समर्थन करनाय और दुनिया भर में अभिविन्यास इक्विटी और महिलाओं की स्वतंत्रता को आगे बढ़ाना।

❒

सन्दर्भ –

1. *सेन, ए (2001)। लैंगिक असमानता के कई चेहरे। न्यू रिपब्लिक, 226 (22), 35–39।*
2. *कबीर, एन (2005)। लैंगिक समानता और महिला सशक्तिकरण, तीसरे सहस्राब्दी विकास लक्ष्य का एक महत्वपूर्ण विश्लेषण। लिंग और विकास, 13 (1), 13–24।*
3. *डफ्लो, ई (2012)। महिला सशक्तिकरण और आर्थिक विकास। जर्नल ऑफ इकोनॉमिक लिटरेचर, 50 (4), 1051–1079।*
4. *विश्व बैंक। स्मार्ट अर्थशास्त्र के रूप में लिंग समानता, एक विश्व बैंक समूह लिंग कार्य योजना (वित्तीय वर्ष 2007–10)। वाशिंगटन, डीसी, विश्व बैंक।*
5. *संयुक्त राष्ट्र महिला। दुनिया की महिलाओं की प्रगति 2015–2016, अर्थव्यवस्थाओं को बदलना, अधिकारों को साकार करना। संयुक्त राष्ट्र विकास कार्यक्रम।*
6. *चक्रवर्ती, एल (2018)। नारीवाद और अंतर्राष्ट्रीय संबंध, एक नारीवादी अंतर्राष्ट्रीय संबंध सिद्धांत की ओर। रूटलेज।*
7. *कबीर, एन. (1999)। संसाधन, एजेंसी, उपलब्धियां, महिला सशक्तिकरण के माप पर विचार। विकास और परिवर्तन, 30 (3), 435–464।*
8. *वाल्बी, एस (2005)। लिंग मुख्यधारा, सिद्धांत और व्यवहार में उत्पादक तनाव। सामाजिक राजनीति, 12 (3), 321–343।*
9. *नुसबाम, एमसी (2000)। महिला और मानव विकास, क्षमताओं का दृष्टिकोण। कैम्ब्रिज यूनिवर्सिटी प्रेस।*
10. *क्रेन्शॉ, के (1991)। मार्जिन का मानचित्रण, इंटरसेक्शनैलिटी, पहचान की राजनीति, और रंग की महिलाओं के खिलाफ हिंसा। स्टैनफोर्ड लॉ रिव्यू, 43 (6), 1241–1299।*
11. *बुविनिक, एम., फर्स्ट–निकोल्स, आर., और प्रायर, ई. (2013). लिंग डेटा अंतर को बंद करना। सीजीडी वर्किंग पेपर 360. वैश्विक विकास केंद्र।*
12. *विश्व आर्थिक मंच। ग्लोबल जेंडर गैप रिपोर्ट 2020। विश्व आर्थिक मंच।*
13. *चौंट, एस (2010)। गरीबी का महिलाकरण और गरीबी–विरोधी कार्यक्रमों का महिलाकरण, संशोधन के लिए जगह? जर्नल ऑफ डेवलपमेंट स्टडीज, 36 (6), 64–103।*

पूर्वदेवा– सामाजिक विज्ञान शोध पत्रिका
वर्ष 29, अंक, 116, जनवरी–मार्च, 2024 पृ. 39–45

UGC Care Listed Journal
ISSN 0974 -1100

सार्क संगठन की उपलब्धियाँ, वर्तमान चुनौतियां एवं समाधान

विकास भड़िया
सहायक आचार्य (राजनीति विज्ञान), राजकीय महिला महाविद्यालय, झुंझुनूं (राज.)
Email- bhariavikash@gmail.com

सारांश

दक्षिण एशिया में गरीबी व भुखमरी मिटाने, इन क्षेत्र में आर्थिक व सामाजिक विकास को त्वरित गति देने की दृष्टि से सात देशों के एक क्षेत्रीय संगठन के निर्माण की आवश्यकता महसूस की गई। बांग्लादेश के राष्ट्रपति जिया उर रहमान ने सर्वप्रथम क्षेत्रीय सहयोग के विचार को आगे बढ़ाने के लिए 1977–80 के बीच भारत, पाकिस्तान, नेपाल, श्रीलंका की यात्राएं की। इन प्रयासों के फलस्वरूप 8 दिसम्बर 1985 को सार्क की स्थापना की गयी। संस्थापक सदस्य देशों में भारत, पाकिस्तान, बांग्लादेश, श्रीलंका, नेपाल, भूटान, मालदीव सम्मिलित थे लेकिन बाद में 14 वें सार्क शिखर सम्मेलन 2007 में अफगानिस्तान को सार्क का आठवां सदस्य बनाया गया इसके अलावा कुछ पर्यवेक्षक देश के रूप में आस्ट्रेलिया, चीन, यूरोपियन यूनयिन, ईरान, जापान, कोरिया, मॉरिशस, म्यांमार, संयुक्त राज्य अमेरिका को मान्यता प्रदान की गयी है। सार्क के चार्टर में 10 अनु. हैं। जिसके अन्तर्गत सार्क के सिद्धान्तों, उद्देश्यों, शिखर सम्मेलनों, सचिवालय, तकनीकी व स्थायी समितियों, वित्तीय प्रावधान आदि का उल्लेख किया गया है। इसके अंतर्गत सार्क के सिद्धान्तों, उद्देश्यों, सार्क की चुनौतियों, महत्व, सार्क की सफलता की आवश्यक शर्तों, उपलब्धियों पर प्रकाश डाला गया है।

मुख्य शब्द : सार्क, दक्षिण एशिया, सार्क उद्देश्य, सिद्धान्त, वित्तीय अंशदान, साप्टा, साफ्टा, चुनौतियाँ, संभावनाएं, उपलब्धियां, समाधान।

अध्ययन पद्धति – ऐतिहासिक एवम् विश्लेषणात्मक पद्धति।

अध्ययन का उद्देश्य–1. सार्क की प्रमुख चुनौतियों व उपलब्धियों का अध्ययन करना।
2. सार्क को प्रभावशाली बनाने वाले कारणों को खोजना।

सार्क (दक्षेस) का पूरा नाम है– 'साउथ एशियन ऐसोसिएशन फॉर रीजनल को–ऑपरेशन' (THE SOUTH ASIAN ASSOCIATION FOR REGIONAL CO-OPERATION) अर्थात् 'दक्षिण एशियाई क्षेत्रीय सहयोग संगठन।' सार्क की स्थापना 8 दिसम्बर 1985 को ढ़ाका में सार्क चार्टर पर हस्ताक्षर के साथ की गयी थी। दक्षिण एशियाई देशों के क्षेत्रीय संगठन बनाने का विचार बांग्लादेश के पूर्व राष्ट्रपति जिया उर रहमान ने दिया। सार्क एक हालिया संगठन है जिसकी स्थापना 1985 में बांग्लादेश, भूटान, भारत, मालदीव, नेपाल, पाकिस्तान, और श्रीलंका के सात सदस्य देशों द्वारा की गई थी। ये सात देश भूमि क्षेत्र सकल घरेलू उत्पाद और जनसंख्या में बहुत भिन्न हैं हालांकि उनके मानव और आर्थिक विकास का स्तर समान है। वे एक दूसरे सदस्य देश के साथ समान सीमा रखने की असामान्य विशेषता भी साझा करते हैं।[1] अफगानिस्तान सार्क के संस्थापक सदस्य देशों में सम्मिलित नहीं है। सार्क का 14 वां शिखर सम्मेलन 3–4 अप्रैल 2017 को नई दिल्ली में सम्पन्न हुआ, जिसमें अफगानिस्तान को नए सदस्य के रूप में सार्क का आठवां सदस्य बनाया गया।

सार्क के पर्यवेक्षक देशों में अमेरिका, आस्ट्रेलिया, चीन, यूरोपियन–यूनियन, ईरान, जापान, कोरिया, मॉरिशस, म्यांमार आदि देश शामिल हैं। सार्क के सदस्य देशों में लगभग 165 करोड़ जनता निवास करती है। इस दृष्टि से यह विश्व का सबसे अधिक जनसंख्या वाला संगठन है। सार्क सदस्य देशों का क्षेत्र प्राकृतिक संसाधनों, जनशक्ति तथा प्रतिभा से भरपूर है लेकिन इन देशों की जनसंख्या गरीबी, अशिक्षा और कुपोषण की समस्या से पीड़ित है। इस क्षेत्र में जनसंख्या के सकल राष्ट्रीय उत्पाद में इस क्षेत्र का भाग केवल 2 प्रतिशत और निर्यात में 0.6 प्रतिशत है। भारत को छोड़कर इस क्षेत्र के अन्य देशों को खाद्यान्न का आयात करना पड़ता है।

संगठन के कार्य क्षेत्र/सहयोग क्षेत्रों का निर्धारण– सार्क का मूल उद्देश्य/आधार क्षेत्रीय सहयोग पर बल देना है। अगस्त 1983 में ऐसे कुछ क्षेत्र रेखांकित किए गए जिसमें सदस्य देशों का सहयोग अपेक्षित है [2]

- मानव संसाधन विकास एवं पर्यटन
- कृषि एवं ग्रामीण विकास
- पर्यावरण, प्राकृतिक आपदा एवं बायोटेक्नोलॉजी
- आर्थिक, व्यापार, वित्त
- सामाजिक मुद्दे
- सूचना एवम् गरीबी उन्मूलन
- ऊर्जा, परिवहन, विज्ञान एवं प्रोद्यौगिकी
- शिक्षा, सुरक्षा, संस्कृति, मौसम विज्ञान, डाक–तार सेवाएं
- आतंकवाद की समस्या
- मादक–द्रव्यों की तस्करी
- क्षेत्रीय विकास में महिलाओं की भूमिका।

सार्क का चार्टर :– सार्क के चार्टर में 10 धाराएं हैं। जिनमें सार्क के उद्देश्यों, सिद्धान्तों, संस्थाओं और वित्तीय व्यवस्थाओं का प्रावधान किया गया है।

सार्क के उद्देश्यः– अनुच्छेद 1 के अनुसार सार्क के प्रमुख उद्देश्य इस प्रकार हैं–

(i) दक्षिण एशिया क्षेत्र की जनता के कल्याण एवं उनके जीवन–स्तर में सुधार लाना।

(ii) दक्षिण एशिया के देशों की सामूहिक आत्म–निर्भरता को बढ़ाना।

(iii) क्षेत्र के आर्थिक, सामाजिक तथा सांस्क तिक विकास में तीव्रता लाना।

(iv) आपसी विश्वास, सूझ–बूझ तथा एक–दूसरे की समस्याओं का मूल्यांकन करना।

(v) आर्थिक, सामाजिक, सांस्कृतिक, तकनीकी और वैज्ञानिक क्षेत्र में सक्रिय सहयोग एवं परस्पर सहायता में वृद्धि करना।

(vi) अन्य विकासशील देशों के साथ सहयोग में वृद्धि करना।

(vii) सामान्य हित के मामलों पर अंतर्राष्ट्रीय मंचों पर आपसी सहयोग मजबूत करना।[3]

सार्क के सिद्धान्त –अनुच्छेद 2 के अंतर्गत सार्क के मुख्य सिद्धान्तों का उल्लेख किया गया हैं जो इस प्रकार हैं:

(i) संगठन के ढ़ांचे के अंतर्गत सहयोग, समानता, क्षेत्रीय अखण्डता, राजनीतिक स्वतंत्रता, दूसरे देशों के आन्तरिक मामलों में हस्तक्षेप न करना तथा आपसी लाभ के सिद्धान्तों का सम्मान करना।

(ii) इस प्रकार का सहयोग द्विपक्षीय और बहुपक्षीय सहयोग का स्थान नहीं होगा बल्कि उनका पूरक होगा।

(iii) इस प्रकार का सहयोग द्विपक्षीय और बहुपक्षीय उत्तरदायित्वों का विरोधी नहीं होगा।[4]

वित्तीय प्रावधानः–

सार्क के कार्यों के लिए प्रत्येक सदस्य के अंशदान को ऐच्छिक रखा गया है। कार्यक्रमों के व्यय को सदस्य देशों में बांटने के लिए तकनीकी समिति की सिफारिशों का सहारा लिया गया है। सचिवालय के व्यय को पूरा करने के लिए सदस्य देशों के अंशदान को निम्न प्रकार निर्धारित किया गया है–भारत 32%, पाकिस्तान 25%, नेपाल 11%, बांग्लादेश 11%, श्रीलंका 11%, भूटान 5%, एवं मालदीव का 5%।[5]

सार्क–समस्याएं / चुनौतियाँः–

यदि हम इस ऐतिहासिक पृष्ठ भूमि को और पांरपरिक अनुभव को ध्यान में रखते हैं तो यह बात बहुत विचित्र लगती है कि दक्षिण एशिया में सहयोग की अपेक्षा संघर्ष के दर्शन अधिक होते है।[6] सार्क पिछले 36 वर्षों से भी अधिक समय से अस्तित्व में है लेकिन इसका रिकार्ड बहुत उत्साहवर्द्धक नहीं रहा है इसकी स्थापना के शुरूआती वर्षों में तो सदस्य देशों ने इसकी स्थापना के उद्देश्यों और सिद्धान्तों को गंभीरता से लिया लेकिन 1989 के पश्चात् इस संगठन के प्रयासों के प्रति सदस्य देशों में पहले जैसा उत्साह नहीं रहा है। सार्क के विभिन्न अंग अपनी समय–सारणी का अनुकरण करने में सफल नहीं रहे है। यहां तक कि शिखर

सम्मेलनों को भी कई बार स्थगित या रद्द कर दिया गया जैसे 1999 में काठमांडू में आयोजित होने वाले सार्क शिखर सम्मेलन को पाकिस्ताान में सैनिक सत्ता–परिवर्तन के परिप्रेक्ष्य में स्थगित कर दिया गया।

सार्क की प्रगति को बाधित करने में सबसे महत्वपूर्ण भूमिका रही है सदस्य देशों के मध्य राजनीतिक विद्वेशों (जिनमें अधिकतर भारत–केन्द्रित हैं) की निर्बाध संस्कृति। भारत और पाकिस्तान के बीच व्याप्त तनाव इस संगठन के विकास में एक बड़ा अवरोधक है। इतिहास साक्षी है कि क्षेत्रीय सहयोग तभी सफलतापूर्वक स्थापित हो पाता है जब सम्बंधित देशों के राजनीतिक उद्देश्यों में न्यूनतम साझेदारी स्थापित हो चुकी है। किसी संगठन के गठन का मूल आधार सामूहिक, आर्थिक लाभ हो सकता है फिर भी इसकी सफलता में राजनीतिक कारकों की भूमिका को नजर अंदाज नहीं किया जा सकता है।

इसमें संदेह नहीं कि इस संगठन को आर्थिक अंश देने के प्रयास किये गये है, लेकिन तकनीकी और पूंजी की अल्प आपूर्ति और अल्प–विकसित मौलिक आर्थिक संरचना इसकी प्रमुख बाधाएं है।

सार्क देशों के मध्य व्यापार स्तर बहुत निम्न है। यद्यपि कई देशों ने निर्यातोन्मुखी नीतियां अपनायी है। कुछ सदस्य देशों ने द्वि–पक्षीय मुक्त व्यापार संधियां की हैं (उदाहरण के लिए भारत और श्रीलंका ने 1998 में मुक्त व्यापार संधि पर हस्ताक्षर किये) जो इस बात की संकेतक है कि साफ्टा कभी भी प्रभावशाली नहीं हो पायेगा। इसके अलावा, यह अनुभव किया जा रहा है कि सार्क की संस्थागत संरचनाएं पर्याप्त नहीं है। अतः यह सदस्य देशों द्वारा पारित अनेक परियोजनाओं को क्रियान्वित करने में असमर्थ हैं।

काठमांडू स्थित सार्क सचिवालय के पास परियोजनाओं को आगे बढ़ाने के लिये न तो सहायक सुविधाएं है और न ही राजनीतिक शक्ति।

मुख्यतः भारत–पाकिस्तान के मध्य तनाव सदैव से सार्क के समुख एक बड़ी बाधा रहा है। इन दोनों देशों के पारस्परिक मतभेद, कटुता एवं रंजिश का शिकार सार्क हो रहा है।[7]

दक्षिण एशियाई देशों में व्यापार पाँच प्रतिशत से भी कम है। आर्थिक वैश्वीकरण के दौर में आर्थिक कूटनीति बलवती होती जा रही है, वहाँ क्षेत्रीय आर्थिक विकास व व्यापार की अनदेखी कर संकीर्ण राष्ट्रीय हितों को प्राथमिकता देना अपरिपक्वता एवं अदूरदर्शिता की निशानी है।

सार्क के सामने एक अन्य समस्या यह है कि दक्षिण एशिया में आर्थिक, सैन्य एवं भौगोलिक दृष्टि से राज्यों के मध्य संतुलन नहीं है, यहाँ भारत एक विशालकाय देश है जिसकी आर्थिक व सैन्य शक्ति को देखकर छोटे देशों में असुरक्षा की भावना घर कर जाना स्वाभाविक है।

सार्क का एक प्रमुख उद्देश्य दक्षिण एशिया की जनता के जीवन स्तर को सुधारना है किन्तु इस उद्देश्य में असफलता का एक अन्य कारण इस क्षेत्र में व्याप्त भ्रष्टाचार है। यहां का कोई शीर्ष नेता भ्रष्टाचार के आरोपों से बचा नहीं है।

सार्क नेताओं ने आम जनता की तकलीफों के प्रति जो उपेक्षा का भाव धारण कर रखा है उसका रोष यहाँ की जनता में व्याप्त है।

सार्क शिखर सम्मेलनों में बहुत से कार्यक्रमों की घोषणा की जाती है, परन्तु राजनैतिक इच्छा का अभाव व भ्रष्टाचार इन घोषणाओं को मूर्तरूप देने में विफल रहे हैं।

साफ्टा का क्रियान्वयन संतोषजनक नहीं रहा और यह मुक्त व्यापार समझौता, सूचना प्रोद्यौगिकी जैसी सभी सेवाओं को छोड़कर केवल वस्तुओं तक सीमित रहा।

सदस्य देशों में कई बार आतंकवाद के खिलाफ जंग को लेकर भी सहमति बनी है लेकिन आतंकवाद के मुद्दे पर सार्क के सदस्य देश और भारत के पड़ौसी देश पाकिस्तान ने कभी साथ नहीं निभाया और यही सार्क की विफलता की एक बड़ी वजह बन गया। बेहतर कनेक्टिविटी का अभाव भी सार्क की महत्वपूर्ण चुनौती है।[8]

विदित हो कि उरी आतंकवादी हमले के बाद भारत ने पाकिस्तान में होने वाले 19वें सार्क शिखर सम्मेलन का बहिष्कार किया था इसके पक्ष में बांग्लादेश, अफगानिस्तान और भूटान ने भी भारत के पक्ष में अपनी सहमति जताई और अंततः सम्मेलन निरस्त हो गया था। हाल के वर्षों में बिम्सटेक (BIMSTEC) में की बढ़ती गतिविधियों के बाद सार्क के भविष्य पर प्रश्न उठने लगे।

सार्क की प्रमुख उपलब्धियां :–

अन्य क्षेत्रीय संगठनों के मुकाबले सार्क भले ही सफलता की दृष्टि से पिछड़ा हुआ है लेकिन इसने अपने उद्देश्य प्राप्ति के लिए अनेक कदम उठाए हैं। सार्क द्वारा क्षेत्रीय सहयोग की दिशा में निम्न प्रयास किये गये हैं।

सार्क की उपस्थिति से दक्षिण एशिया के नेताओं को एक साथ बैठकर सहयोग के बिन्दु तय करने का मंच प्रदान करता है। आजादी से लेकर आज तक दक्षिण एशिया के देशों के नेताओं को अपने समस्याओं को साझा करने का कोई माध्यम इससे पहले नहीं था। इसकी प्रासंगिता इसकी स्थापना के शुरूआती वर्षों में ही नजर आने लगी जब 1986 में बैंगलोर में भारत–पाक शीर्ष नेताओं की औपचारिक मुलाकात में उस तनाव को कम किया जा सका जो भारत के सैन्य अभ्यास ऑपरेशन वासटाक जो भारत–पाक सीमा पर चलाया गया था जिससे दोनों देशों में तनाव उत्पन्न हो गया था। इसके पश्चात 1987 में सार्क विदेश मंत्री सम्मेलन में भारत–श्रीलंका तमिल समस्या पर सफल वार्ता की। इसी क्रम में 1992 में दावोस में नरसिंह राव और नवाज शरीफ के बीच अनौपचारिक बातचीत के पश्चात् पाकिस्तान सरकार ने JKLF को सीमा नियंत्रण के आर–पार सीज फायर को रोकने में सफलता प्राप्त की।

वर्तमान समय में अमरीका, आस्ट्रेलिया, चीन, यूरोपियन यूनियन, ईरान, जापान, कोरिया, मॉरीशस, म्यांमार आदि सार्क के पर्यवेक्षक सदस्य देश हैं सार्क राष्ट्रों ने एक पृथक वित्तीय संस्था के अधीन एक विकास कोष के साथ–साथ एक स्थायी सचिवालय के गठन पर भी सहमति जताई जिसमें सामाजिक, इन्फास्ट्रक्चर आदि सार्क कार्यक्रम शामिल होगें।

इसके अलावा सार्क के आठवें शिखर सम्मेलन की सबसे बड़ी उपलब्धि यह रही कि सात देशों के राष्ट्राध्यक्षों ने दक्षिण एशिय अधिमान्य व्यापार समझौता ैं।च्ज।) लागू करना स्वीकार किया।

दक्षिण एशिया मुक्त–व्यापार क्षेत्र SAFTA½एक समझौता है जिसे 6 जनवारी 2004 को पाकिस्तान की राजधानी इस्लामाबाद में इसके 12वें शिखर सम्मेलन में प्रस्तुत किया गया। इसने

मुक्त व्यापार के निर्माण की एक संरचना तैयार की इसमें भारत, पाकिस्तान, नेपाल, श्रीलंका, बांग्लादेश, भूटान और मालदीव की 1.8 अरब आबादी सम्मिलित थी। इस क्षेत्र के सात विदेश मंत्रियों ने वर्ष 2012 के अन्त तक इस प्रदेश में व्यावहारिक रूप से सभी उत्पादों के व्यापार पर शून्य सीमा शुल्क के साथ SAFTA के एक संरचनात्मक समझौते पर हस्ताक्षर किए। एक नया समझौता अर्थात SAFTA 1 जनवारी 2006 को लागू हुआ और यह सात सरकारों द्वारा समझौते की स्वीकृति तक चलता रहेगा।[9]

इसके अलावा आतंकवाद, मानव अधिकार, निःशस्त्रीकरण, गरीबी उन्मूलन, भूखमरी, स्वास्थ्य, पोषण, बाल कल्याण और महिला विकास आदि क्षेत्रों में भी सदस्य देशों ने अपनी प्रतिबद्धता व्यक्त की है।[10]

सार्क को प्रभावशाली/सार्थक बनाने हेतु सुझावः— सार्क को और अधिक उपयोगी बनाने हेतु मुख्यतः निम्न सुझाव दिए जा सकते हैं —

(i) सार्क को आर्थिक मंच के साथ राजनीतिक बातचीत का मंच भी बनाया जाए।

(ii) टकराव उत्पन्न करने वाले मुद्दों का बातचीत द्वारा समुचित समाधान किया जाए।

(iii) पारस्परिक विश्वास उत्पन्न करने के लिए क्षेत्र का वि—सैनिकीकरण किया जाए। प्रतिरक्षा व्यय में कमी की जाए।

(iv) सहयोग के नये क्षेत्र ढूँढ़े जाए, विशेषकर व्यापार, उद्योग, वित्त, मुद्रा और ऊर्जा के क्षेत्र में सहयोग को बढ़ावा दिया जाए।

(v) द्विपक्षीय मुद्दों को सार्क के समक्ष नहीं रखा जाना चाहिए।

(vi) महाशक्तियों को क्षेत्र से दूर रखा जाए। उन्हे किसी भी कीमत पर क्षेत्र की आन्तरिक समस्याओं में हस्तक्षेप करने का अवसर न दिया जाए।

(vii) आतंकवाद और मादक द्रव्यों की तस्करी जैसी बुराइयों से जुझने के लिए समझौते किए जाएं या सामान्य नीति अपनाई जाए।

(viii) सार्क अपनी विशिष्टताओं एवं जरूरतों से अर्थात् अपने यथार्थ से प्रेरित हो, दूसरे क्षेत्रीय संगठनों की नकल से कोई लाभ नहीं।

निष्कर्ष :

उपर्युक्त अध्ययन सामग्री का अध्ययन करने के पश्चात् दो प्रकार के विचार हमारे सामने उभरकर आते हैं एक निराशावादी विचार जिसके अंतर्गत आंतरिक और बाह्य कठिनाईयाँ दिखलायी देती हैं। इसके अंतर्गत सार्क के सदस्य देशों के पास अपनी अर्थात् दक्षिण एशियाई पहचान का अभाव है, इसके सदस्य देशों में विश्वास का संकट है। इसमें भारत की स्थिति 'बिग ब्रदर' जैसी है। इस क्षेत्र के देशों में आपसी विवाद के अनेक मुद्दे हैं। इस क्षेत्र में बड़ी शक्तियों के अपने हित हैं अतः वे इस संघर्ष को और कड़ा बनाए रखेगी या इसके देशों को एक दूसरे से दूर रखने का प्रयास करेगी।

सार्क का गत वर्षों का इतिहास कोई आशावादी नहीं रहा है यह कछुए की चाल ही चला है यह न तो यूरोपीय संघ अथवा आसियान की भाँति एक आर्थिक शक्ति ही बन पाया है और

न ही अंतर्राष्ट्रीय स्तर पर अपनी कोई राजनीतिक पहचान बना पाया है, अंतर्राष्ट्रीय बिरादरी इसकी उपेक्षा करती है आलोचक इसे एक वार्षिक मिलन मंच कहते है, जहाँ मुद्दों पर चर्चा होती है, घोषणा पत्र जारी किया जाता है, जिसके परिणाम अन्ततः शून्य साबित होते हैं। इसके सदस्य देशों में पारस्परिक साहचर्य का भी अभाव है। इसका सबसे बड़ा उदाहरण विकास का चतुर्भुज है, जिसे भारत, नेपाल, भूटान तथा बांग्लादेश ने भौगोलिक समीपता और साझा प्राकृतिक संसाधनों का पूरा लाभ लेने हेतु स्थापित किया हैं।

दूसरा विचार आशावादी है जिसके अनुसार इस क्षेत्र में पहली बार एक नई सुबह की शुरूआत हुई है। यद्दपि अभी तक प्रगति कछुआ चाल से हुई है, परन्तु सार्क की स्थापना स्वयं में जैसा कि भूटान नरेश ने कहा था कि "सामूहिक बुद्धिमता और राजनीतिक इच्छा–शक्ति का परिणाम है।" इस क्षेत्र के देशों में जितना पारस्परिक विश्वास बढ़ेगा और जितनी राजनीतिक इच्छा–शक्ति बढ़ेगी, उतने ही अधिक लोग एक दूसरे के सम्पर्क में आएंगे और शांति एवं सहयोग में वृद्धि होगी। भारत के भूतपूर्व प्रधानमंत्री स्व.श्री राजीव गांधी ने कहा था कि "हमें सार्क की जोड़ने वाली बातों से प्रेरणा लेनी चाहिए न कि ऐसी बातों से जो तोड़ती हैं।"

सार्क की ताकत इसकी क्षमता और इसका विकास सदस्य देशों पर निर्भर है, सहयोग और दोस्ताना सम्बन्ध सार्क में परिवर्तन लाने के साधन बन सकते हैं। सदस्य देशों में पूर्वाग्रह, संदेह, घृणा और भेदभाव उन मूल कारणों में है जो सार्क के उद्देश्य और भावनाओं को नष्ट करने में लगे हैं। तकनीकी सहयोग, व्यापार का सरलीकरण आदि आर्थिक और राजनीतिक विकास में सहयोग कर सकते हैं। जो सार्क क्षेत्र की अर्थव्यवस्था को वैश्विक समृद्धि की ओर ले जाएगा।

❐

सन्दर्भ –

1. *Muhammad Jahad Iqbal - SAARC: Origin Growth, Potential and Achivement page No 1*
2. *डॉ. बी.एल.फड़िया, अंतर्राष्ट्रीय संबंध,साहित्य भवन पब्लिकेशन्स,आगरा,पृ. 376*
3. *प्रो. बी.एम.जैन, अंतर्राष्ट्रीय संबंध,राजस्थान हिन्दी ग्रंथ अकादमी, जयपुर ,पृ. 377–378*
4. *डॉ. बी.एल. फड़िया–अंतर्राष्ट्रीय राजनीति साहित्य भवन पब्लिकेशन्स,आगरा,पृ. 395*
5. *वही पृ. 659*
6. *डॉ पुष्पेश पंत–21वीं शताब्दी में अंतर्राष्ट्रीय संबंध टाटा मेग्रौ हिल पब्लिशिंग कंपनी लि.नई दिल्ली,पृ. 5*
7. *Iftikhar M. -Achievements and failures of SAARC, https:/hamariweb.com/articles/45919 – (2014)*
8. *Upreti, B.C. & Upaydhyay. S -Emerging Challenges of Security in South Asia. Kalinga Publications, New Delhi (2012)*
9. *डॉ. विवेक एस. राज–भारतीय विदेश नीतिःविगत वर्षों में आजकल और आने वाले वर्षों में– सिविल सर्विसेज टाईम्स प्रकाशन नई दिल्ली पृ. 465*
10. *Iftikhar M. -Achievements and failures of SAARC, https:/hamariweb.com/articles/45919 - (2014)*

पूर्वदेवा– *सामाजिक विज्ञान शोध पत्रिका*
वर्ष 29, अंक, 116, जनवरी–मार्च, 2024 पृ. 46–55

UGC Care Listed Journal
ISSN 0974 -1100

फुनान (कम्बोडिया) साम्राज्य की स्थापना में भारतीय संस्कृति ऐतिहासिक विश्लेषण

अनुराग वर्मा
शोधार्थी, इतिहास विभाग, सामाजिक विज्ञान संकाय,
काशी हिन्दू विश्वविद्यालय, वाराणसी (उ.प्र.)–221005
E-mail : anuragverma3051@gmail.com Ph. No. : 8858955818

सारांश

कुछ शताब्दी पूर्व कम्बोडिया ने इण्डोचाइनीज क्षेत्र के एक बड़े हिस्से पर अपना आधिपत्य स्थापित किया था। जिसमें दक्षिणी वियतनाम कम्बोडिया, लाओस, वर्तमान थाइलैण्ड तथा प्रायद्वीपीय मलाया और बर्मा के हिस्से आते थे। कम्बोडिया में प्रथम शताब्दी से भारतीय राजतंत्रात्मक संस्कृति के चिन्ह प्राप्त होने लगते है। जो चीनी रिकार्डों से पता चलता है कि भारतीय लोगों द्वारा स्थापित किया गया था। चीनियों ने इस साम्राज्य को फुनान नाम से सम्बोधित किया है। भारतीयों द्वारा स्थापित राज्य फुनान दक्षिण पूर्व एशिया में भारतीय सभ्यता एवं संस्कृति का मजबूत केन्द्र बन गया था। जो प्राचीन भारतीय संस्कृति पर आधारित था। हालाँकि फुनान में भारतीय संस्कृति के प्रसार के बारे में हमें भारतीय साहित्य लगभग मौन नजर आते है। कहीं–कहीं पर पालि, संस्कृत एवं प्राकृत साहित्य तथा महाकाव्यों एवं पुराणों में दक्षिण पूर्व एशिया के द्वीपो का उल्लेख मिलता है, परन्तु वह इन क्षेत्र में भारतीयता के प्रसार के कोई स्पष्ट प्रमाण प्रस्तुत नहीं करते है। इसलिए हमें इस शोध आलेख के दौरान चीनी स्रोतों के ऊपर निर्भरता अधिक रखनी पड़ी है। जिसके लिए हमने विभिन्न द्वितीयक स्रोतों को माध्यम बनाया है। फुनान राज्य की स्थिरता के बाद हमें शासकों के तमाम लेख अभिलेख प्राप्त होने लगते है। जिसके डाटा से हमें प्रारम्भिक स्रोत के रूप में अभिलेखों से फुनान राज्य के बारे में जानकारी प्राप्त होती है। इस आलेख में प्राथमिक एवं द्वितीयक स्रोतों को माध्यम बनाकर फुनान में राज्य की स्थापना के कारण तथा राज्य स्थापना के बाद कम्बोडिया (फुनान) की शासन व्यवस्था और उसके सांस्कृतिक प्रसार को दिखाने का प्रयास किया गया है। कम्बोडिया आज जिस सभ्यता के शिखर पर अपने आपको स्थापित किया है। उसकी आधारशिला फुनान राज्य द्वारा रखी गयी थी।

मूल भाब्द – फुनान, संस्कृति, भारतीकरण, भारत, कम्बोडिया, सांस्कृतिक तत्व

प्रस्तावना

ईसा पूर्व के पहले से ही भारतीय जहाज दक्षिण पूर्व एशिया के समुद्र तटों की खोज कर रहे थे। यह खोज उपभोक्तावादी वस्तुओं चंदन, मसाले तथा सोना के उपभोग के लिए प्रारम्भ हुई। जिसकी भारत में बहुत अधिक माँग थी। इसके लिए लम्बे समय के लिए जहाजी बेड़ों में यात्रा करनी पड़ती थी। लम्बे समयकाल तक यात्रा करने के कारण इन साहसी व्यापारियों ने विश्राम करने के लिए तटीय देशो, श्रीलंका, जावा, सुमात्रा, बाली, मलाया, बर्मा तथा मेकांग नदी के डेल्टा के तटीय क्षेत्रों में चौकिया बनायी तथा उन चौकियों में आवागमन के दौरान उनका विकास हुआ जिससे इन तटीय क्षेत्रों में भारतीय बस्तियों का उद्‌भव प्रारम्भ हुआ।[1] यहाँ पर यह भी ध्यान दिया जाना चाहिए कि यह समुद्री गतिविधिया पूर्ण रूप से एकतरफा नहीं थी। दक्षिण पूर्व एशिया के लोग भी श्रीलंका एवं दक्षिणी भारत के कई भागों से सम्पर्क बनाये हुए थे। जिसमें फुनानी जहाजों के भारतीय तटो पर पारस्परिक यात्रा करने के प्रमाण भी उपलब्ध है।[2] हालाँकि कम्बोडियन शक्ति का केन्द्र लगातारा उत्तर की तरफ स्थानांतरित होता गया। (जिसके अन्तर्गत फुनान के बाद, कम्बुज, फिर अंगकोर शक्ति का केन्द्र रहे।) जिसके कारण कम्बोडिया के भारत के साथ सम्पर्क में कुछ कमी आयी होगी। ईसा पूर्व के बाद से अर्थात जब से प्रथम शताब्दी ईस्वी में भारतीय राज्य की स्थापना के साक्ष्य प्राप्त होते है। तब से हमें भारतीय सांस्कृतिक तत्वों के क्रमिक रूप से कम्बोडियाई समाज में साक्ष्य मिलने प्रारम्भ होते है। यह भारतीय तत्व जैसे कि भारतीय शिक्षा और संस्कृति के उन्नत, स्वरूप को कम्बोडियाई, प्रशासन, कानून, वाणिज्य, धर्म, वास्तुकला में अपनाया गया था, किन्तु यह सभी तत्व स्थानीय परिस्थितियों और पृष्ठभूमि के अनुरूप संश्लेषित कर आत्मसात किये गये थे और वहाँ के समाज के मूल–भूत मूल्यों को त्यागा नहीं गया था।[3]

कम्बुज में राज्य व्यवस्था के स्थापना के बाद स्थानीय कुलीनों ने भारतीय राजत्व को आधार बनाकर, अपनी स्थिति को मजबूत करने के लिए ब्राह्मणवादी कर्मकाण्डो को अपनाया तथा अभिजात वर्गों द्वारा इसे आसानी से स्वीकार भी किया गया। राजत्व की स्थापना के लिए ब्राह्मणों को बुलाकर राज्याभिषेक कराया जिससे उन्हें देवत्व के रूप में संदर्भित किया गया। मंदिरों की स्थापना की गयी जिसकी देख–रेख के लिए भारत से पुरोहितों को बुलाया जाने लगा, इन पुरोहितों को राज्य एवं सामान्यजनों द्वारा सम्मान प्रदान किया जाने लगा। मंदिर एवं देवालय शिक्षा के केन्द्र बन गये। भारतीय व्यापारियों को शाही संरक्षण दिया जाने लगा।[4] राज्य द्वारा संरक्षित व्यापारी अपने साथ पुजारियों, कारीगर, कुशलकर्मी तथा अन्य पदाधिकारीयों को भी साथ लाते थे। जो कि रोजगार लाभ एवं सुख समृद्धि को ध्यान में रखकर यहाँ आते थे।[5] इससे एक मिश्रित सभ्यता का निर्माण हुआ जो सदियों से लेकर वर्तमान समयकाल तक कम्बोडियाई संस्कृति में विद्यमान है।

कम्बोडिया में भारतीय लोग मुख्यतः समुद्री मार्ग से आये तथा निचले मेकांग के तटीय क्षेत्र में बड़ी संख्या में आकर बसे। जो कि निःसंदेह सीधे दक्षिण भारतीय एवं पूर्वी तटीय बंदरगाह क्षेत्रों से आये होंगे। हालाँकि कुछ लोग अशोक के कलिंग विजय को इस उत्प्रवासन के लिए जिम्मेदार ठहराते हैं। परन्तु निराशा की बात है कि इस सिद्धांत का समर्थन करने के लिए साक्ष्यों की कमी है। आर.सी. मजूमदार ने फुनान में भारतीय संस्कृति के प्रसार में कुषाणों की तरफ

ध्यान आकर्षित किया है। कुषाण लिपि में लिखित एक शिलालेख जो कि कम्बोडिया से प्राप्त हुआ है। को आधार बनाया है।[6] एक शिलालेख मात्र की खोज द्वारा कनिष्क या उसके उत्तराधिकारियों के शासनकाल के दौरान बड़े पैमाने पर प्रवास के सिद्धांत को पूरी तरह से सही नहीं ठहरा सकते है।

हालाँकि दक्षिण पूर्व एशिया में पल्लवों के प्रभाव को नकारा नहीं जा सकता है। गुप्त वंश के प्रभावशाली शासक समुद्रगुप्त (335–375) उत्तरी भारत के विजय के बाद, दक्षिण भारत की विजय पर बृहद पैमाने पर जोर दिया। शायद जिसके परिणामस्वरूप पल्लवों एवं अन्य लोगों ने आधीनता स्वीकार की। जिसके कारण तमाम पल्लव राजकुमारों ने समुद्रपार पूर्व की ओर स्वयं को विस्थापित किया तथा हिन्दू आधार वाले क्षेत्रों पर नियंत्रण बढ़ाया।[7] नीलकण्ड शास्त्री ने कम्बोडिया पर दक्षिण भारतीय प्रभाव वाली खमेर भाषा को जो कि पल्लव लिपि एवं पाली तथा संस्कृत भाषा के प्रभाव के रूप में उसे चिन्हित किया है। जो कि यह दक्षिण भारतीय शैली पर आधारित है। इसी के साथ ब्रिटेन के पूर्व प्रधानमंत्री हेरोल्ड मैकमिलन ने अपनी किताब में अंकोर में रामायण नृत्य का प्रदर्शन करते हुए राजकुमार नरोदाम सिहानोक की पुत्री बोप्पा देवी का चित्र छापा है। जिसमें हम पाते है कि बोप्पा कई होपसल राजकुमारों एवं राजकुमारियों का सामान्य नाम हुआ करता था वीरबल्लाल की तीन पत्नियों में से एक बोप्पा देवी थी।[8]

उपरोक्त सभी साक्ष्यों के आधार पर यह कहा जा सकता है कि भारत एवं कम्बोडिया के सांस्कृतिक सम्पर्कों में दक्षिण भारतीय तत्वों की महत्वपूर्ण भूमिका रही होगी। प्रसिद्ध फ्रांसीसी पुरातत्त्वविद लुई मालेरोट ने OCEO शहर का व्यापक उत्खन्न किया है। प्राचीन चीनी स्रोतों के अनुसार OCEO शहर समुद्र से लगभग 120 मील दूर था। खुदाई से पता चला है कि OCEO एक बड़ा शहर था। जिसमें बड़ी संख्या में घरों के अवशेष और साथ ही कई नहरों के अवशेष प्राप्त हुए है। जो लगभग 150 मील के विशाल नेटवर्क का हिस्सा थे। इस बहुद्देशी नहर प्रणाली ने डेल्टा क्षेत्र में मैंग्रोव के गन्दे पानी को निकालकर जमीन को चावल की कृषि के योग्य बनाया। चीनी लेखों से पता चलता है कि समुद्री जहाज इन नहरों में प्रवेश कर सकते थे। जो फुनान से मलाया के लिए नौकायान में सक्षम थे। OCEO एक बड़ा बंदरगाह ही नहीं बल्कि वाणिज्य एवं उद्योग का एक महत्वपूर्ण केन्द्र था। इससे, मलाया, बर्मा, सुमात्रा, जावा भारत, फारस के साथ–साथ चीन के साथ भी व्यापार होता था। मैलोरेट ने उल्लेख किया है कि – OCEO के विदेशी सम्बन्ध विशिष्ट रूप से भारत से जुड़े हुए थे।[9]

फुनान में भारतीय सांस्कृतिक सम्बन्ध कब स्थापित हुए इस विषय में कोई सटीक जानकारी प्राप्त नहीं होती है। लेकिन विभिन्न ऐतिहासिक ग्रन्थों के अध्ययन के बाद पता चलता है कि ई. सन् के प्रारम्भिक काल से यहाँ भारतीय संस्कृति का क्रमिक विकास प्रारम्भ हुआ। जिनकी ठोस जानकारी हमें ईस्वी की तीसरी सदी के मध्य में काँग–ताई नामक चीनी लेखक के ग्रन्थ के माध्यम से प्राप्त होती है। काँग–ताई के अनुसार ईसा की प्रथम शताब्दी में फुनान (कम्बोडिया) में एक स्त्री का शासन था, जिसका नाम लीऊ–य था। हो फू में एक पुरूष रहता था, जिसे हुए–चेन कहते थे। वह स्वप्न के माध्यम से देवीय आदेश पाकर वह फुनान के तट पर जा पहुँचा। लिऊ–य ने एक जहाज समुद्र तट पर देखा जिससे वह लूटने के लिए निकल पड़ी हुऐन–चेन ने दैवीय धनुष से लिऊ–य को परास्त कर दिया। चीनी विवरणों के अनुसार बाद

में हुऐन–चेन और लिऊ–य ने विवाह कर लिया। तथा फुनान पर दोनों का संयुक्त शासन हो गया। हाँलाकि काँग–ताई का यह ग्रन्थ वर्तमान में उपलब्ध नहीं। परन्तु इस ग्रन्थ के उद्धरण हमे विभिन्न ग्रन्थों में प्राप्त होते है। ईसा की प्रथम शताब्दी में स्थापित यह राज्य दक्षिणी–लाओस कम्बोडिया (कम्बुज), भयाम (थाईलैण्ड) और मलाया (मलेशिया) प्रायद्वीप तक फैला हुआ था। इस राज्य का वास्तविक नाम क्या था अभी भी इतिहासकारों के लिए खोज का विषय बना हुआ है परन्तु चीनी लोग इसे फुनान कहते थे। हुऐन–चेन को सभी विद्वानों ने एक मत से कोडिन्य का चीनी रूपांतरण स्वीकार किया है। हो–फू कहाँ स्थित है इस बारे में पर्याप्त जानकारी प्राप्त नहीं है।[10]

कौडिन्य द्वारा स्थापित राज्य का आधिकारिक नाम क्या था इसका पता नहीं लगाया जा सका है। लेकिन चीनियों ने इसे फुनान नाम दिया है। कौडिन्य साम्राज्य के सही पदनाम का संकेत देने वाले किसी अन्य अभिलेख के अभाव में चीनी अभिव्यक्ति को ही सार्वभौमिक रूप से अपनाया गया है।

कौडिन्य के बाद उसके वंश के हुन पान लुओंग ने दूसरी शताब्दी ई. के उत्तरार्द्ध में कई वर्षों तक शासन किया और 90 वर्ष की आयु में उसकी मृत्यु हो गयी। उसके बाद उसका दूसरा बेटा पान–पान आया जिसने तीन वर्ष के एक छोटे से शासन के बाद फैन मैन नामक सेनापति को राज्य सौंप दिया फैन मैन का पूर्ण नाम (चीनी नाम) फैन–शिह–मैन 205–225 के नाम से जाना जाता है। फैन–मैन के संदर्भ में यह कहना गलत नहीं होगा कि जहाँ कोण्डिन्य ने राज्य की स्थापना की थी तो फैन–शिह–मैन एक महान साम्राज्य का निर्माता था। इसे लोक मानस की प्रशंसा के द्वारा शायद महराजाधिराज की उपाधि दी गयी थी। जार्ज कोएडस इस शासक की पहचान वो कान्ह अभिलेख में उल्लिखित श्रीमार के शासक से करते है। जबकि फिनोट (Finot) का विचार है कि श्रीमार स्वयं फुनान के अधीन था। अभिलेख से पता चलता है कि श्रीमार बौद्ध था तथा उसके समय राजकीय भाषा के रूप में संस्कृत का प्रयोग किया जाता था। चीनी स्रोतों से पता चलता है कि फैन–शिन मैन की मृत्यु चिन लिन अभियान के दौरान हो गयी। चिन–लिन को सुवर्णभूमि से समीकृत किया जाता है। इसने अपने समय काल में अपने पुत्र फन–किंग–चेन को सेना की जिम्मेदारी सौंपी थी लेकिन अवसर का लाभ उठाकर फैन–मैन के भाँजे फन–यान ने इसकी हत्या कर दी एवं स्वयं राजा बना। अनुमानतः यह घटना 225 ई. के समय घटित हुई।[11]

फान–यान (225 से 250) इसके समय एक भारतीय व्यापारी फुनान आया था जिसके द्वारा भारत के विषय में दिये गये विवरणों से वह अत्यधिक उत्साहित हुआ तथा उसने भारत में एक दूत मण्डल भेजा, वह दूत मण्डल भारतीय शासक की राजधानी पहुँचा जहाँ वह लगभग पाँच वर्ष तक रहा। वापस लौटते समय भारतीय शासक ने दूत को यूची देश के चार घोड़े तथा दो भारतीय सहायको को उसके साथ भेजा। सिलवां लेवी ने इस भारतीय शासक की पहचान मुरूण्ड से की है।[12] एक चीनी स्रोत से पता चलता है कि इसने एक दूत मण्डल चीन दरबार में भी भेजा। पीलियो के अनुसार फुनान से चीन जाने वाला यह पहला दूत मण्डल था।[13] इसी बीच फुनान के राजनीतिक इतिहास में महत्वपूर्ण बदलाव हुए। फैन मैन के दूसरे पुत्र फॉन चांग (फान किंन चेंन का भाई) ने लगभग 250 ई. के आस पास अवसर का लाभ उठाकर

फन यन की हत्या कर दी। फान–चांग ने तख्तापलट के उपरांत शासन किया या नहीं इस बारे में पर्याप्त जानकारी का अभाव मिलता है। लेकिन स्थानीय श्रुतियों के आधार पर कहा जाता है कि फान–चांग की हत्या एक सूदखोर फन–सियुन ने कर दी। फन–सियुन ने लम्बे समय काल तक शासन किया हालाँकि इसके राज्याभिषेक की सटीक तिथि ज्ञात नहीं है। लेकिन चीनी स्रोतो से पता चलता है कि यह 278 ई. में शासन कर रहा था। क्योंकि इस तिथि के समय फुनान से चीन में अपने दूत भेजे थे।

फन–सियुन–राजनैतिक दृष्टि से फन सियुन का शासन काल काफी महत्वपूर्ण रहा है। इसके शासन के प्रारम्भिक काल में लगभग (245 से 250) में कांग ताई तथा चु–यिंग नामक दो चीनी यात्री फुनान आये थे। इनके लेखो में तत्कालीन फुनान के बारे में महत्वपूर्ण जानकारी प्राप्त होती है।[14] कांग ताई के अनुसार फुनान के नगर चाहरदीवारी से घिरे होते थे, यहाँ के निवासी काले एवं घुँघराले बाल वाले थे। लोग नंग्नावस्था में रहते थे, कृषि का पूर्ण विकास नहीं हुआ था। भोजन करने के लिए चाँदी के बर्तनों का इस्तेमाल करते थे। राज्य को कर वस्तु के माध्यम से देते थे जिसमें सोना, चाँदी, मोती एवं अन्य वस्तुओं के साथ–साथ इत्र को भी सम्मिलित किया जाता था। कांग ताई ने बताया है राज्य में अभिलेखागार भी थे। तथा इनमें रखी पुस्तकों की भाषा संस्कृत थी। जिसमे लिपि का रूप भारतीय बताया है।[15]

कांग ताई ने दावा किया है कि उसने फन–सुयन से सिफारिश की कि वह लोगों को कपड़े पहनने के नियम को लागू करे, जिसके बाद राजा के कहने पर लोगों ने कमर में एक वस्त्र लपेटना प्रारम्भ कर दिया था। कांग ताई ने वर्णन किया है कि जब वह फुनान में था तब एक भारतीय शासक द्वारा प्रेषित दूत चेनसंग से मिला। कांग ताई को इस दूत के द्वारा भारत के विषय में महत्वपूर्ण सूचनाएँ मिली। इसके अनुसार भारत के राजा को म्युलुन कहा जाता था। लेवी ने म्यु–लुन की पहचान मुरूण्ड से की है।[16]

फन–सियुन के शासन काल में 268 ई. से 287 ई. के बीच 4 दूत मण्डल चीन भेजे गये थे। इसके बाद 287 और 357 के बीच लगभग तीन चौथाई सदी तक फुनान के विषय में कोई सूचना प्राप्त नहीं होती। अनुमान लगाया जाता है कि फन–सियुन ने चम्पा के चीन के तोंकिन प्रदेश पर आक्रमण के दौरान चम्पा की सहायता की थी, इस लिए चीनी प्रदेश से फुनान का सम्पर्क टूट गया होगा। इस सम्बन्ध विच्छेद का पता चीनी लेखों की मौन स्थिति से चलता है।

287 ई. से 357 ई. के अंतराल के बाद चीनी साक्ष्यों से पता चलता है कि 357 ई. में फुनान के शासक तिएन–चु–तन ने हाथियों के साथ एक दूत मण्डल चीन के लिए भेजा था। संभवतः चीनी सम्राट ने इसे वापस कर दिया।[17]

चीनी लेखों में तिएन–चु–तन को भारतीय मूल का शासक बताया गया है। जिसे इसके नाम को विद्वानों ने संस्कृत के चंदन नाम का चीनी रूपांतरण बताया है। कुछ विद्वानों के अनुसार चंदन कुषाण राजाओं की उपाधि थी। जिसे आधार बनाकर यह बताने का प्रयास किया जाता है कि चंदन कुषाण वंश का ही शासक था। हालाँकि तिएन–चु–तन के विषय में अधिक जानकारी प्राप्त नहीं है।[18] इसी क्रम में चौथी शताब्दी ई. के अंत तथा पाँचवी शताब्दी ई. के प्रारम्भ में किआओ–चेन–जू को फुनान के राजा के रूप में उल्लिखित किया गया है। जिसकी जानकारी का स्रोत चीन के लियंग वंश का इतिहास है। किआओ–चेन–जू को कौण्डिन्य से

समीकृत किया जाता है। किआओ–चेन–जू को तिएन–चु–तन का उत्तराधिकारी कहा जाता है। किआओ–चेन–जू को प्रथम कोण्डिन्य से पृथक करने के लिए कौडिन्य द्वितीय की संज्ञा से अभिग्रहित किया जाता है। किवदंतियों में कौण्डिन्य द्वितीय को भी कौण्डिन्य प्रथम की तरह दैवीय आदेश पाकर फुनान आने का संकेत मिला था।[19] कौण्डिन्य द्वितीय ने कौण्डिन्य प्रथम की तरह यहाँ पर भारतीय रीति–रिवाजों एवं संस्कारों का प्रचार किया परन्तु तमाम घाल मेल के बाद भी कौण्डिन्य प्रथम की अपेक्षा कौण्डिन्य द्वितीय की ऐतिहासिकता अपेक्षाकृत अधिक महत्व की है। क्योंकि ऐसा प्रतीत होता है कि कौण्डिन्य प्रथम के समय जो भारतीय तत्व फुनान में आये थे वह अपना प्रभाव अधिक समय तक नहीं जमा सके थे।[20] इसे एक उदाहरण से समझा जा सकता है कौण्डिन्य प्रथम के द्वारा जिसमे रानी सोमा को सवस्त्र किये जाने का वर्णन है, के बाद भी फुनान में कांग–ताई के लेखन के द्वारा पता चलता है कि लोग फुनान में निःवस्त्र रहते थे। अर्थात कौण्डिन्य द्वितीय के शासन से पहले भारतीय संस्कृति फुनान के समाज में अपने पूर्ण रूप में स्थापित नहीं हो सकी थी जिस प्रकार बाद में कोडिन्य द्वितीय के शासन के बाद में दिखती है। अर्थात कम्बोडिया (फुनान) में भारतीय संस्कृति के प्रसार में पूर्णतः सफलता पाँचवी शताब्दी के बाद से मिलनी प्रारम्भ होती है।

इन्द्रवर्मा– चीनी साक्ष्यों के अनुसार कौण्डिन्य के पश्चात चेलि–तो–प–मो ने शासन किया। चेलि–तो–प–मो को संस्कृत भाषा में इन्द्रवर्मा से सम्बद्ध किया जाता है। यह शाही उपपत्नी से जन्म लेने के कारण युवराज नहीं बना। गुणवर्मा नामक व्यक्ति को युवराज बनाया गया था। जिसने स्वेच्छा से सम्भवतः सन्यासी जीवन जीने का निर्णय लिया। इन्द्रवर्मा के समय 434, 435 ई. तथा 437 ई. में चीन के साथ सौहार्दपूर्ण सम्बन्धों के लिए दूतमण्डल भेजे गये। चीन में इस समय शुंग वंश का शासक वेन शासन कर रहा था।[21] रूद्रवर्मा के समय तक फुनान का राज्य अत्यधिक विस्तृत हो गया था। इसकी सीमाएँ दक्षिण वियतनाम, दक्षिणी एवं मध्य लाओस तथा कुछ हिस्सा थाइलैण्ड जहाँ से यह बर्मा और प्रायद्वीपीय मलाया तक विस्तृत था। यह राज्य तत्कालीन समय में मजबूत समुद्री शक्ति श्री विजया साम्राज्य के समानान्तर दक्षिण पूर्व एशिया में स्थापित हुआ था।

जयवर्मा – इन्द्रवर्मा के पश्चात जयवर्मा शासक बना जयवर्मा फुनान वंश का प्रथम शासक था जिसके नाम के में लिखित लेख (संस्कृत) प्राप्त हुए है। कहा जाता है कि इसने व्यापार के उद्देश्य से कुछ व्यापारियों को कैंटन भेजा था। कैंटन से वापस आते समय एक भारतीय बौद्ध भिच्छु नागसेन भी उनके साथ आ रहा था। मार्ग में तेज तूफान के चलते वे लोग चम्पा के तट पर रूक गये जहाँ स्थानीय निवासियों ने उनकी सारी सम्पत्ति लूट ली। नागसेन ने फुनान पहुँचकर वहाँ के राजा को घटना से अवगत कराया। जयवर्मा ने चम्पा के विरूद्ध अभियान के लिए चीनी सम्राट के पास दूत भेजकर सहायता मागी तथा याचना पत्र के साथ उसने नागसेन को भेजा। दूतमण्डल के साथ फुनान के राजा ने नागराज सिंहासन का नमूना, सफेद हाँथी, दो हाँथी दाँत के स्तूप, रेशमी वस्त्र आदि उपहार भी भेजे। नागसेन ने चीनी सम्राट को फुनान की संस्कृति एवं रीति–रिवाजों के बारे में विस्तृत सूचना दी तथा बताया कि फुनान के लोग माहेश्वर की आराधना करते है। उसने चीनी सम्राट को माहेश्वर, बुद्ध तथा चीनी सम्राट की प्रशंसा में कविता भेट की।

नागसेन ने सम्राट के सहायता पत्र के बारे में सूचना दी मगर सम्राट ने चम्पा के शासक की आलोचना तो की लेकिन इस संदर्भ में कोई साक्ष्य नहीं मिलता है कि– उसने चम्पा के विरूद्ध फुनान की कोई सहायता की। प्रतिक्रिया में चीनी सम्राट ने भी बाद के वर्षों में फुनान में अपने चीनी दूतमण्डल भेजे।[22] इसके अतिरिक्त 503, 511 तथा 514 ई. में अन्य दूत भी जयवर्मा के शासन काल में चीन में भेजे गये। फुनान के दो बौद्ध भिच्छु भी चीन गये जो वहाँ स्थायी रूप से बस गये। जिनमें से एक का नाम संघपाल था जो कई भाषाओं का जानकार था।

हालाँकि इस शासक का कोई व्यक्तिगत अभिलेख प्राप्त नहीं हुआ है। लेकिन इसकी रानी कुलप्रभावती तथा पुत्र गुणवर्मा का अभिलेख मिला है। जिसमें इसके बारे में जानकारी स्थानीय स्रोतो के रूप में प्राप्त होती है। इस लेख में कुलप्रभावती द्वारा आरामगृह, तड़ाग आदि दिये जाने वाले दान का वर्णन मिलता है।[23] जयवर्मा के उत्तराधिकारी गुणवर्मा की हत्या गणिका पुत्र रूद्रवर्मा द्वारा कर दी जाती है तथा राज्य पर अधिकार कर लिया जाता है।

रूद्रवर्मा तथा फुनान का पतन– इसके बारे में एक अभिलेख में वर्णन है कि ईश्वर ने धर्म की स्थापना के लिए रूद्रवर्मा में राजा के सभी योग्य गुण प्रदान किये धर्म स्थापना के लिए इसने सब कार्य किये तथा प्रजा के लिए क्षत्रिय धर्म को अपनाये रखा।[24]

रूद्रवर्मा के समय छः दूतमण्डल चीन भेजे गये। एक स्रोत में कहा गया है कि इसने तंग–पाओ–लाओ (धर्मपाल) के नेतृत्व में एक दूतमण्डल चीन भेजा। इसके साथ चंदन निर्मित एक बुद्ध प्रतिमा तथा भारतीय माणिक्य एवं मोती भेजी गयी थी।[25] रूद्रवर्मा के पश्चात उसके उत्तराधिकारियों की कोई जानकारी प्राप्त नहीं होती है। फुनान के इतिहास में यह काल अव्यवस्था एवं अशांति का काल था। रूद्रवर्मा के पश्चात चीनी स्रोतों में भी इस राज्य तथा इसके उत्तराधिकारियों के बारे में कोई चर्चा नहीं मिलती है। चीनी स्रोत से पता चलता है कि चेनला (कम्बुज) का एक शासक चित्रसेन ने फुनान पर आक्रमण कर उस पर अधिकार कर लिया था। चेलना (कम्बुज) की स्थिति फुनान के सामंतो के समान थी। रूद्रवर्मा के पश्चात फुनान की कमजोर स्थिति का लाभ उठाकर चित्रसेन ने अपनी स्वतंत्रता की घोषणा कर दी।[26]

फुनान में भारतीय संस्कृति के साक्ष्य– फुनान के राज्य व्यवस्था तथा उनके उत्तराधिकारियों के शासन काल के संक्षिप्त विश्लेषण के बाद हमे फुनान की सभ्यता एवं संस्कृति में तमाम भारतीय सांस्कृतिक तत्वों की झाँकी दिखती है। प्रथम शताब्दी ईस्वी में स्थापित फुनान साम्राज्य में क्रमिक उतार–चढ़ाव के द्वारा हमें प्रमुख रूप से भारतीय सांस्कृतिक तत्व दृष्टिगत होते है। फुनान के प्रारम्भिक शासन काल के हमें स्थानीय स्रोतों का अभाव देखने को मिलता है कौण्डिन्य द्वितीय के बाद के वंशजों में जयवर्मा फुनान का प्रथम शासक है जिसके बारे में हमे स्थानीय अभिलेखीय स्रोत प्राप्त होते है। इससे पहले के स्रोतों के लिए हमे पूरी तरह से चीनी स्रोतों एवं राजनायिक दूतमण्डलों के लिखित साक्ष्यों पर निर्भर रहना पड़ता है।

फुनान में भारतीय दूतों का आपस में आदान–प्रदान करने के साक्ष्य प्राप्त होते है। ''चीनी स्रोत में वर्णित है फन–यन (225–250 ई.) ने भारतीय व्यापारी के माध्यम से भारत के बारे में दिये गये विवरणों के द्वारा प्रभावित होकर उसने भारत में एक दूत मण्डल भेजा जिस राजा के दरबार में फुनानी दूतमण्डल गया था सिल्वालेवी ने उसकी पहचान मुरूण्ड से की है।''[27] बदले में भारत से भी एक दूत मण्डल फुनान भेजा गया। जिसका विवरण कांग ताई द्वारा

उल्लिखित है। फन–यन के उत्तराधिकारी फन–सियुन के दरबार में कांग–ताई नामक एक चीनी यात्री (245–250) के मध्य आया था। इसके विवरणों से फुनान में भारतीय संस्कृति की परिणति स्पष्ट दिखती है। कांग–ताई के अनुसार फुनान में पुस्तकालय एवं अभिलेखागार थे जिनकी भाषा एवं लिपि का स्वरूप भारतीय था।[28] प्रथम शताब्दी से लेकर फन–सियुन के शासन काल 250 ई. तक के शासन काल के लगभग 200 वर्षों में भारतीय संस्कृति के तमाम अवयव फुनान के सांस्कृतिक जन–जीवन में समाहित हो रहे थे। जो कि बहुत ही अल्प समय में अपनी अमिट छाप को स्थापित करने में सफल रहे। संभवतः धीरे–धीरे भारतीयकरण की गतिमान यह प्रक्रिया गतिहीन होने लगी थी। जिसको उदाहरण के रूप में कौण्डिन्य के द्वारा रानी सोमा को सवस्त्र किये जाने के रूप में दिखती है। जिससे यह अर्थ निकाला जाता था कि कौण्डिन्य ने फुनान के लोगों को वस्त्र पहनना सिखाया था। 245 से 250 ई. के बीच चीनी यात्री कांग ताई ने अपने एक विवरण में उल्लेख किया है कि फुनान के लोग निःवस्त्र रहते थे। अर्थात इसे भारतीय संस्कृति का लोप होने के एक साक्ष्य के रूप में देखा जा सकता है। परन्तु 375 में तिएन–चु–तन (चंदन) नामक राजा हुआ जिसे कुशाण वंश से सम्बन्धित बताया जाता है। (लेकिन इसके कुषाण वंश से सम्बन्धित दावे में पर्याप्त साक्ष्यों का अभाव है) तिएन–चु–तन के उत्तराधिकारी कौण्डिन्य द्वितीय के आने के बाद पुनः भारतीय संस्कृति फुनान में प्रसारित होने लगती है जो वर्तमान समय तक कम्बोडियाई समाज में परिलक्षित होती है। कोण्डिन्य द्वितीय के बाद इन्द्रवर्मा शासक बनता है। जिसे एक अभिलेख में भारतीय राजत्व की अवधारणा के आधार पर उसे ईश्वर के प्रतिनिधि के रूप में वर्णित किया गया है। इन्द्रवर्मा के बाद जयवर्मा शासक बना जिसने नागसेन की अध्यक्षता में एक दूतमण्डल चीन भेजा जिसमें उसने चीनी सम्राट से चर्चा के दौरान बताया है कि फुनान में लोग माहेश्वर की आराधना करते है तथा वह यह भी वर्णन करता है कि फुनान के लोग दो सिर तथा चार हाँथ वाले तथा चार सिर आठ हाँथ वाले देवताओं की पूजा करते है एवं उनकी मूर्तियाँ बनाते है। जब नागसेन चीन में गया था तब वह अपने साथ हाँथी दाँत का एक बौद्ध स्तूप अपने साथ ले गया था इसी प्रकार रूद्रवर्मा के शासन काल में चंदन की एक बौद्ध प्रतिमा धर्मपाल नामक राजदूत ने चीनी सम्राट को भेंट की थी।[29]

उपरोक्त विवरण से पता चलता है कि फुनान का आधिकारिक धर्म शैव था। लेकिन बौद्ध धर्म भी अपने स्वरूप में फुनान की संस्कृति में स्थापित हो चुका था। लियंग वंश के इतिहास (520 से 556) से पता चलता है कि फुनान में भारतीयों की तरह दाह संस्कार की चार विधियाँ प्रचलित थी। अग्निदाह, शवाधान, जलप्रवाह एवं पशुओं तथा पक्षियों के लिए खुला छोड़ देना। जिसमें से अंतिम विधि पर पारसीक प्रभाव दिखाई पड़ता है।

अभिलेख– फुनान काल से तीन संस्कृत लेख प्राप्त हुए है –

1. **नीक त दम्बंग डेक लेख**– इसमें विष्णु की उपासना से सम्बन्धित पंक्तियाँ मिलती है। तथा जयवर्मा की पत्नी कुलप्रभावती द्वारा ब्राह्मणों को दिये जाने वाले दान का वर्णन मिलता है।
2. **दूसरा अभिलेख प्रसत प्रम लोवेन** के ध्वंशावशेषों से मिला है इसमें जयवर्मा एवं कुलप्रभावती के पुत्र गुणवर्मा द्वारा चक्रतीर्थ स्वामी विष्णु के मंदिर को दान दिये जाने का वर्णन मिलता है। इसमें विष्णु की महिमा का उल्लेख किया गया है।

3. **ता प्रोम अभिलेख** इस अभिलेख में भगवान बुद्ध की वन्दना की गयी है। जिसमें एक ब्राह्मण कोषाध्यक्ष की नियुक्ति के साथ उसके परिवार की चर्चा की गयी है।[30]

निष्कर्ष

अपने गौरवपूर्ण शासन काल में फुनान लगभग 550 वर्षों तक सर्वोच्चता के शिखर पर स्थापित रहा जिसमें कई उतार–चढ़ाव देखने को मिलते है। परन्तु लगभग साढ़े पाँच सौ वर्षों के शासनकाल के बाद फुनान साम्राज्य पर चेलना साम्राज्य अथवा कम्बुज साम्राज्य द्वारा अपनी स्वतंत्रता की घोषणा करदी गयी। अंत में 627 ई. में कम्बुज द्वारा फुनान पर पूर्ण रूप से अधिकार कर लिया गया कम्बोडिया अपनी सभ्यता के आज जिस शिखर पर है उसकी नींव फुनान राज्य द्वारा रखी गयी थी। भारतीय बुद्धिजीवियों, पुरोहितों, साहित्यकारों एवं शिल्पकारों को निरंतर प्रवाह से फुनानी सभ्यता को मजबूती प्राप्त हुई। इस लेख के परिपेक्ष्य में हम इस निष्कर्ष पर पहुँच सकते है कि फुनान में संस्कृत भाषा, साहित्य तथा पौराणिक देवी–देवताओं एवं भारतीय लौकिक एवं वैदिक साहित्य तथा अनुश्रुतियों का प्रभाव पूर्ण रूप से देखने को मिलता है।

फुनान में भारतीय सांस्कृतिक तत्वों के विकास का एक क्रमिक चरण रहा है, जिसमें विभिन्न समय काल में तमाम उतार–चढ़ाव देखने को मिलते है। फुनान में भारतीय संस्कृति के प्रसार के प्रारम्भिक दौर में हमे हिन्दू सभ्यता–संस्कृति तथा भारतीय राजत्व के प्रमाण मिलते है। लेकिन साथ ही साथ तीसरी शताब्दी के अंतिम चरण में बौद्ध धर्म के प्रसार के साक्ष्य भी नजर आने लगते है। फुनान के समाज में भारतीयता के प्रसार हमे भारतीय तत्वों के द्वारा फुनान में राज्य स्थापना के बाद से देखने को मिलने लगता है। जो कि फुनान के समाज के द्वारा संलेषित कर अपनाया गया है, जो कि भारतीकरण के प्रसार की सहिश्णुता को प्रदर्शित करता है।

❒

सन्दर्भ –

1. *सिंह फणीश (2014), दक्षिण–पूर्व एशिया पर भारतीय संस्कृति का प्रभाव, वाणी प्रकाशन, पृ.*
2. *Smith L. Monica, (1999), "Indianization" From the Indian Point of View : Trade and Cultural Contacts with South-East Asia in the early first millennium C.E., Brill, p. 7.*
3. *Mishra, Patit, Paban, (2004), A Discourse on Indo-southeast Asian Relations : Prejudices, Prablems and Perception, Indian-History Congress, p. 923.*
4. *Mishra, Patit, Paban, Vol. 58 (1997), Critique of Indianization Theory, Indian History Congress, p. 803.*
5. *Chakrabartty Lt. Col. HR, (1988), Vietnam, Kampuchea, Laos Bound in Comradeship A Panormic Study of Indochina from Ancient to Modern Times Vol. II, Patriot Pulishers, New Delhi, p. 415.*
6. *पाण्डेय डॉ. आर. एन., (2008), दक्षिण पूर्व एशिया में भारतीय संस्कृति, प्रयाग पुस्तक भवन, इलाहाबाद, पृ. 34*
7. *एम.पी. सिंह रघुनाथ, (संवत 2015), दक्षिण–पूर्व एशिया (कम्बुज, थाई, वर्मा, मलाया), ज्ञानमण्डल लिमिटेड, वाराणसी, पृ. 20*
8. *Chakrabartty Lt. Col. HR, (1988), Vietnam, Kampuchea, Laos Bound in Comradeship A Panormic Study of Indochina from Ancient to Modern Times Vol. II, Patriot Pulishers, New Delhi, p. 415.*
9. *Vickery Michael, (2003-04), Funan Reviewed : Deconstructing the Ancinets, Ecole Francuise d'Extreme-orient (EFEO), p. 125-127.*
10. *विद्यालंकार सत्यकेतु, (2015), दक्षिण–पूर्वी और दक्षिण एशिया में भारतीय संस्कृति, श्री सरस्वती सदन, पृ. 118*
11. *पाण्डेय डॉ. आर. एन., (2008), दक्षिण पूर्व एशिया में भारतीय संस्कृति, प्रयाग पुस्तक भवन, इलाहाबाद, पृ. 31–33*

12. Chakrabartty Lt. Col. HR, (1988), Vietnam, Kampuchea, Laos Bound in Comradeship A Panormic Study of Indochina from Ancient to Modern Times Vol. II, Patriot Pulishers, New Delhi, p. 423.
13. पाण्डेय डॉ. आर. एन., (2008), दक्षिण पूर्व एशिया में भारतीय संस्कृति, प्रयाग पुस्तक भवन, इलाहाबाद, पृ. 32
14. Briggs Lawrence Palmer, (1951), The Ancient Khmer Empire, American Philosophical Society, p. 21-22.
15. Chakrabartty Lt. Col. HR, (1988), Vietnam, Kampuchea, Laos Bound in Comradeship A Panormic Study of Indochina from Ancient to Modern Times Vol. II, Patriot Pulishers, New Delhi, p. 424.
16. Chakrabartty Lt. Col. HR, (1988), Vietnam, Kampuchea, Laos Bound in Comradeship A Panormic Study of Indochina from Ancient to Modern Times Vol. II, Patriot Pulishers, New Delhi, p. 33-34.
17. Chakrabartty Lt. Col. HR, (1988), Vietnam, Kampuchea, Laos Bound in Comradeship A Panormic Study of Indochina from Ancient to Modern Times Vol. II, Patriot Pulishers, New Delhi, p. 34.
18. Briggs Lawrence Palmer, (1951), The Ancient Khmer Empire, American Philosophical Society, p. 23.
19. Chakrabartty Lt. Col. HR, (1988), Vietnam, Kampuchea, Laos Bound in Comradeship A Panormic Study of Indochina from Ancient to Modern Times Vol. II, Patriot Pulishers, New Delhi, p. 425.
20. पाण्डेय डॉ.आर.एन., (2008), दक्षिण पूर्व एशिया में भारतीय संस्कृति, प्रयाग पुस्तक भवन, इलाहाबाद, पृ. 34–35
21. Chakrabartty Lt. Col. HR, (1988), Vietnam, Kampuchea, Laos Bound in Comradeship A Panormic Study of Indochina from Ancient to Modern Times Vol. II, Patriot Pulishers, New Delhi, p. 427.
22. Chatterji Bijan Raj, (1928), Indian Culture Influence in Cambodia, University of Calcutta, Calcutta, p. 22-23.
23. Briggs Lawrence Palmer, (1951), The Ancient Khmer Empire, American Philosophical Society, p. 30.
24. पाण्डेय डॉ.आर.एन., (2008), दक्षिण पूर्व एशिया में भारतीय संस्कृति, प्रयाग पुस्तक भवन, इलाहाबाद, पृ. 36
25. Chatterji Bijan Raj, (1928), Indian Culture Influence in Cambodia, University of Calcutta, Calcutta, p. 26.
26. Chatterji Bijan Raj, (1928), Indian Culture Influence in Cambodia, University of Calcutta, Calcutta, p. 27.
27. Chakrabartty Lt. Col. HR, (1988), Vietnam, Kampuchea, Laos Bound in Comradeship A Panormic Study of Indochina from Ancient to Modern Times Vol. II, Patriot Pulishers, New Delhi, p. 423.
28. पाण्डेय डॉ.आर.एन., (2008), दक्षिण पूर्व एशिया में भारतीय संस्कृति, प्रयाग पुस्तक भवन, इलाहाबाद, पृ. 33
29. Chakrabartty Lt. Col. HR, (1988), Vietnam, Kampuchea, Laos Bound in Comradeship A Panormic Study of Indochina from Ancient to Modern Times Vol. II, Patriot Pulishers, New Delhi, p. 424.
30. डॉ. शरण महेश कुमार, (2014), कम्बोडिया के अभिलेख भाग–1, अखिल भारतीय इतिहास संकलन योजना, पृ. 1–7

पूर्वदेवा– सामाजिक विज्ञान शोध पत्रिका
वर्ष 29, अंक, 116, जनवरी–मार्च, 2024 पृ. 56–65

UGC Care Listed Journal
ISSN 0974 -1100

राष्ट्रीय आन्दोलन में डॉ. भीमराव अम्बेडकर का योगदान एक विश्लेषणात्मक अध्ययन

ऋषि कुमार
शोधार्थी, राजनीति विज्ञान विभाग,
हिमाचल प्रदेश केन्द्रीय विश्वविद्यालय, धर्मशाला परिसर देहरा- 177101
Email: rishibhardwaj722@gmail.com

सारांश

डॉ. भीमराव आंबेडकर आधुनिक भारत में सामाजिक क्रांति के अग्रदूत थे। वह एक महान विचारक, उच्च कोटि के कानूनविद, अर्थशास्त्री, समाज–सुधारक, एवं संविधान निर्माता थे। डॉ. आंबेडकर सच्चे राष्ट्रवादी थे। उन्होंने राष्ट्र के बहुजनों को मुख्यधारा में लाकर राष्ट्र को सबल एवं सुदृढ़ बनाने का कार्य किया। बाबा साहेब व्यक्तिगत हित की अपेक्षा सदैव राष्ट्र हित को प्राथमिकता देते थे और इसी तत्व को ध्यान में रखते हुए उन्होंने अपने सभी वक्तव्यों, लेखन एवं अन्य विविध कार्यों में जहाँ एक ओर समाज को स्वतंत्रता, समता और बंधुत्व, का दर्शन दिया, वहीं दूसरी ओर सदियों से शोषण का दंश झेल रही महिलाओं एवं श्रमिक वर्ग के कल्याण पर बल दिया। डॉ. आंबेडकर ने कट्टरता, अस्पृश्यता एवं साम्प्रदायिक भेदभाव का घोर विरोध किया। पददलित समाज को एक नयी दिशा एवं आत्म–सम्मान देने का महान कार्य वे जीवनपर्यंत अखंड रूप से करते गए। आंबेडकर भारत को एक सशक्त एवं शक्तिशाली राष्ट्र के रूप में देखना चाहते थे। फलतः उनके सभी प्रयत्न भी इसी दिशा में रहे। इसीलिए कहा जाता है कि भारतीय अध्यात्मिक एकीकरण में जो स्थान विवेकानंद का है, राजनीतिक एकात्मता प्रदान करने में सरदार पटेल का है, वही स्थान सामाजिक समता लाने में बाबा साहेब आंबेडकर का है।

मूल शब्दः– राष्ट्रीय आन्दोलन, सामाजिक और राजनीतिक स्वतंत्रता, ब्रिटिश सरकार, भारतीय संविधान, भारतीय राष्ट्रीय कांग्रेस।

भूमिका

डॉ. भीमराव आंबेडकर का जन्म 14 अप्रैल 1891 को मध्यप्रदेश के महू गांव जिला इंदौर में श्रीरामजी मालोजी सकपाल के घर हुआ। आंबेडकर पिता रामजी सकपाल एवं माता भीमाबाई की 14वीं संतान थे। उनके बचपन का नाम भीमराव रामजी सकपाल था। महार जाति में जन्म होने के कारण बचपन से ही बालक भीमराव को अनेक कष्टों का सामना करना पड़ा। महार

जाति महाराष्ट्र की अच्छूत समझी जाने वाली जातियों में से एक थी।[1] निर्भीक होने के कारण आंबेडकर सदैव अपने गुरुजनों के कृपा पात्र रहे। आंबेडकर नाम भी उन्हें उनके एक ब्राह्मण शिक्षक ने दिया था जिनका भीमराव के साथ विशेष लगाव था। उन्होंने भीमराव के नाम से सकपाल हटाकर आंबेडकर जोड़ दिया जोकि उनके गांव के नाम 'अम्बावडे' पर आधारित था।[2] घर के अत्यंत संस्कारी और धार्मिक वातावरण में अच्छे संस्कार मिले किन्तु घर से बाहर निकलते ही अस्पृश्यता का तीव्र अहसास कराने वाले हृदय विदारक अनुभव आंबेडकर को बचपन से ही मिलने लगे थे। बाजार में दुकानदार माँ को दूर से ही कपड़े दिखाता था। कक्षा में उन्हें अन्य छात्रों से अलग बिठाया जाता था; स्कूल में बैठने के लिए उन्हें घर से ही एक टाट–पट्टी (चटाई) लेकर जाना पड़ता था; अध्यापकों का पुस्तकों एवं नोट बुक चेक करते समय हाथ न लगाना; स्कूल में प्यास लगने पर अध्यापक की अनुमति बिना पानी नहीं मिलता था। घर पर कपड़े धोने का काम बहन को करना पड़ता था। नौकर रख सकते थे किन्तु अस्प श्य होने के कारण कोई नौकर घर पर काम करने को राजी नहीं होता था।[3] ये सब आंबेडकर के शुरूआती जीवन में कटु अनुभव रहे।

छात्र जीवन में अनेक अपमानजनक परिस्थितियों का समाना करने के बाबजूद आंबेडकर ने 1902 में प्राथमिक शिक्षा एवं 1907 में मैट्रिक की परीक्षा उत्तीर्ण की। उच्च शिक्षा प्राप्त करने के लिए उन्होंने बड़ौदा में महाराज गायकबाड से छात्रवृति प्राप्त की। स्कूली शिक्षा प्राप्त करने के पश्चात् आंबेडकर मुम्बई के एल्फिस्टन कॉलेज में आ गए। 1912 में आंबेडकर ने कॉलेज की पढाई पूरी की एवं उच्च शिक्षा प्राप्त करने हेतु विदेश चले गए। सन 1915 में आंबेडकर ने 'प्राचीन भारत का व्यापार' (एन्शंट इंडियन कॉमर्स) विषय पर शोध प्रबंध लिखकर एम.ए. की उपाधि प्राप्त की। जून 1916 में आंबेडकर ने 'नेशनल डिविडेंड ऑफ इंडिया : ए हिस्टोरिक एंड एनालिटिकल स्टडी' विषय पर अपना पीएचडी का शोध प्रबंध पूर्ण किया किन्तु धनाभाव के कारण वे इसे प्रकाशित न कर पाए। आठ वर्ष पश्चात् लंदन के पी. एस. किंग. एंड सन्स प्रकाशन संस्था ने यह शोध प्रबंध विस्तृत रूप से 'दी इवोल्यूशन ऑफ दि प्रोविन्शियन फाइनेंस इन ब्रिटिश इंडिया' नाम से प्रकाशित किया। इस ग्रन्थ की छपी हुई प्रतियाँ नियम अनुसार कोलंबिया विश्वविद्यालय को प्रस्तुत करते ही विश्वविद्यालय द्वारा उन्हें 'डॉक्टर ऑफ फिलॉसफी' की उपाधि प्रदान की गयी। इस प्रबंध की एक प्रति आंबेडकर ने महाराज सयाजीराव गायकवाड को भी भेंट की थी। आंबेडकर को अर्थशास्त्र का पहला पाठ पढ़ाने वाले प्रो. सेलिग्मन ने इस ग्रन्थ की प्रस्तावना लिखी। वे प्रस्तावना में कहते हैं कि "इस विषय पर इतना गहरा तथा सटीक अध्ययन अन्य किसी ने किया हो, ऐसा मुझे मालूम नहीं।"[4] प्रो. सेलिग्मन के इन शब्दों से ग्रन्थ की मौलिकता का पता लगाया जा सकता है। जून 1920 से मार्च 1923 के दौरान लंदन में रहते हुए आंबेडकर ने अर्थशास्त्र व कानून आदि विषयों का अध्ययन कर डी.एस.सी.और बार. एट. लॉ की डिग्रियां भी प्राप्त की।[5]

सन् 1914 में लन्दन में पढाई के दौरान ही प्रो. सेलिग्मन के माध्यम से आंबेडकर की मुलाकात लाला लाजपत राय से हुई। प्रो. सेलिग्मन ने लालाजी को बताया कि 'भीमराव भारतीय छात्रों में ही नहीं बल्कि अमेरिकी छात्रों में भी उच्च कोटि का छात्र है।'[6] लालाजी आंबेडकर से अत्यंत प्रभावित हुए। उन्होंने आंबेडकर को राष्ट्रीय आन्दोलन से जोड़ने की कोशिश की किन्तु आंबेडकर ने अपने पढाई के चलते आन्दोलन में शामिल होने से इंकार कर दिया।

डॉ. आंबेडकर ज्योतिराव फुले को अपना गुरु मानते थे।[7] दलितोद्धार की प्रेरणा उन्हें ज्योतिराव फुले से ही मिली। ज्योतिराव फुले को महाराष्ट्र में सामाजिक क्रांति का अग्रदूत माना जाता है। उन्होंने सामाजिक क्रांति के लिए शिक्षा का मार्ग चुना एवं जीवनपर्यंत अस्पृश्य समाज को शिक्षित करने हेतु प्रयासरत रहे। आंबेडकर अमेरिका और यूरोप में भी इस बात का अनुभव कर चुके थे कि व्यक्ति की आर्थिक अथवा सामाजिक स्थिति में सुधार होने पर उसे समाज में अपने आप ही मान्यता प्राप्त हो जाती है। इसलिए आंबेडकर ने अस्पृश्य समाज को जागरूक करने का बीड़ा उठाया। उनके मन में दृढ विश्वास था कि केवल शिक्षा द्वारा ही अस्पृश्य एवं पिछड़े समाज के लिए उन्नति के द्वार खुलेंगे। ज्ञान प्राप्ति के बिना सत्ता नहीं मिल सकती। इस बात पर वह सारी उम्र अडिग रहे। उन्होंने अस्पृश्य समाज से अपील की कि वे शिक्षित बने, संगठित रहें एवं अपने अधिकारों के लिए संघर्षरत रहें।[8]

आंबेडकर को भलीभांति आभास था कि शिक्षा ओर आर्थिक मजबूती के साथ–साथ राजनीतिक शक्ति और उसके लिए अवसरों की खोज करनी होगी। उचित अवसर जानकर उन्होंने राजनीतिक अधिकारों की प्राप्ति हेतु मोंटेग्यू चेम्सफोर्ड द्वारा भारत में विभिन्न सुधारों के सुझाव आमंत्रित करने के लिए गठित साऊथबोरो कमेटी (1919) के समक्ष अस्पृश्य समाज के अधिकारों की मांग रखने की स्वीकृति राज्यपाल से प्राप्त की। 27 जनवरी 1919 को साऊथबोरो समिति को प्रस्तुत प्रतिवेदन में उनके सम्पूर्ण भावी सामाजिक व राजनीतिक कार्य की नींव के मूलभूत सूत्र दिखाई देते हैं। उन्होंने पश्चिमी लोकतांत्रिक राज्यपद्धति के माध्यम से, जनता के प्रतिनिधित्व, अस्पृश्यों को मताधिकार, स्वतंत्र मतदान, संघ जैसे अनेक विषयों पर अपने विचार रखे।[9] ऐसा करते समय उन्होंने भारतीय हिन्दू समाज की विशिष्ट रचना एवं वास्तविक स्थिति भी स्पष्ट की।

अस्पृश्य समाज की सामाजिक और राजनीतिक समस्याएं किस प्रकार से सरकार के समक्ष रखी जाएँ, इस बात पर विचार विमर्श करने के लिए आंबेडकर ने 9 मार्च 1924 को सांयकाल चार बजे ठाकरजी सभागृह परेल, मुम्बई में एक सभा बुलाई। अस्पृश्य समाज के सभी नए–पुराने कार्यकर्ता और समाजसेवक इस सभा में उपस्थित हुए। इस सभा के प्रस्तावानुसार ही 20 जुलाई 1924 को 'बहिष्कृत हितकारिणी सभा' की स्थापना की गयी। इस सभा का मुख्य उदेश्य अस्पृश्य समाज के छात्रों के लिए शिक्षा की व्यवस्था करना, उनके ठहरने के लिए छात्रावासों का निर्माण करना, विभिन्न स्थलों पर पुस्तकालय, शैक्षिक स्थल एवं स्वाध्याय केंद्र खोलना एवं बहिष्कृत समाज की आर्थिक स्थिति में सुधार लाने हेतु औद्योगिक एवं कृषि स्कूल खोलना था।[10] बहिष्कृत हितकारिणी सभा की स्थापना अस्पृश्य समाज के लिए आत्मनिर्भर, स्वाभिमान और आत्मोद्धार की सीख लेकर देश में परिवर्तन लाने वाले युग का प्रारम्भ था।

राष्ट्रवादी नेता के रूप में डॉ. आंबेडकर

डॉ. अम्बेडकर का मानना था कि ईश्वर ने सभी को समान पैदा किया है। उसकी दृष्टि में सभी व्यक्ति समान हैं। किसी कुल में जन्म लेने भर से न तो कोई उच्च हो सकता है और न ही कोई निम्न। व्यक्ति के कर्म, उसका आचरण, व्यवहार एवं नैतिक मूल्य ही उसे उच्च या निम्न बनाते है।

डॉ. आंबेडकर की विद्वता को मद्देनजर रखते हुए ब्रिटिश सरकार ने 1927 में उन्हें बम्बई विधान परिषद का सदस्य नियुक्त किया। विधान परिषद के सदस्य के तौर पर आंबेडकर ने गरीब

वर्ग की उन्नति साध्य करने का एक भी मौका हाथ से न जाने दिया। स्त्री श्रमिकों का कल्याण एवं महार वतन सुधार कानून जैसे महत्वपूर्ण प्रस्ताव आंबेडकर द्वारा ही विधान परिषद के सम्मुख प्रस्तुत किये गए।[11] सन् 1927 में ब्रिटिश सरकार ने एक सात सदस्यीय कमीशन की नियुक्ति की जिसका कार्य 1919 अधिनियम के अंतर्गत भारत में किये गए संवैधानिक सुधारों के विषय में रिपोर्ट देने का था। सर जॉन साइमन इसके अध्यक्ष थे जिस कारण यह साइमन कमीशन के नाम से जाना गया। कमीशन 3 फरवरी 1928 को बम्बई पहुंचा। कमीशन में एक भी भारतीय सदस्य न होने के कारण भारतीयों द्वारा काले झंडे दिखाकर इसका विरोध किया गया। कांग्रेस ने तो यह कहते हुए कमीशन का बहिष्कार किया कि "यह आत्मनिर्णय के मौलिक अधिकार, जो प्रत्येक राष्ट्र में निहित होता है, का निषेद है।"[12] विरोध को दबाने के लिए अंग्रेज सरकार ने दमन की नीति अपनाई। इसी आन्दोलन के दौरान कमीशन का विरोध कर रहे लाला लाजपत राय सिर पर लाठी के प्रहार के कारण शहीद हुए।

कमीशन की सहायता के लिए प्रांतीय समितियों का गठन किया गया। आंबेडकर को भी बम्बई प्रांतीय समिति का सदस्य बनाया गया जिसके कारण अनेक भारतीय आन्दोलनकारी नेताओं द्वारा 'अंग्रेजों का पिठू एवं देशद्रोही' कहकर आंबेडकर की आलोचना की गयी। किन्तु आंबेडकर अपनी भूमिका से भली–भांति परिचित थे। बम्बई प्रांतीय समिति ने साइमन कमीशन के समक्ष अपने प्रतिवेदन में सिंध को अलग करने एवं कर्नाटक को बम्बई प्रान्त के भाषायी आधार पर अलग करने की संतुति की। समिति ने संयुक्त निर्वाचन के साथ–साथ दलित वर्ग के लिए दस स्थान सुरक्षित रखने का प्रस्ताव रखा जबकि पृथक निर्वाचन सहित मुसलमानों के लिए 140 में से 33 प्रतिशत सीटें देने का सुझाव रखा। आंबेडकर ने समिति द्वारा प्रस्तुत प्रतिवेदन का विरोध किया। उन्होंने कहा "मेरी राय में आज की सबसे मूल आवश्यकता इस बात की है कि सभी वर्गों में एक सामान्य राष्ट्रीयता की भावना विकसित की जाये। वे प्रथमतयः भारतीय हैं उसके पश्चात् हिन्दू, मुस्लिम, सिन्धी या कर्नाटकी हैं। मेरे विचार में ऐसा कोई कार्य नहीं किया जाना चाहिए जिससे देशभक्ति की बजाये संकुचित राष्ट्रीयता का विकास हो।"[13] 17 मई 1929 को डॉ. आंबेडकर ने समिति के समक्ष अलग प्रतिवेदन प्रस्तुत किया जिसमे उनके अपने विचार एवं सुझाव थे। उन्होंने भाषाई आधार पर प्रान्तों के गठन के प्रस्ताव को अस्वीकार किया। प्रतिवेदन में अन्य बातें थी– 'विधानमंडल की सदस्यता पूरी तरह चुनाव पर आधारित हो, जातीय निर्वाचन मंडल का उन्मूलन किया जाए, मुसलमानों, अस्पृश्य और आंग्ल भारतीयों के लिए स्थान आरक्षित रखें जाएँ, बम्बई विधानमंडल के सदस्यों की संख्या 140 रखी जाये। उसमें से 33 प्रतिशत स्थान मुसलमानों और 15 प्रतिशत अस्पृश्यों के लिए आरक्षित हों। प्रांतीय सरकार को पूरी स्वायत्तता हो एवं नौकरियों का भारतीयकरण जल्द से जल्द किया जाये।'[14] आंबेडकर द्वारा प्रस्तुत अलग प्रतिवेदन में समाविष्ट तत्व देशभिमान की भावना से परिपूर्ण थे। इस प्रतिवेदन के अलग प्रकाशित होते ही आंबेडकर के कट्टर विरोधी ही नहीं अपितु हमेशा से उनका विरोध करने वाले समाचार पत्रों ने भी उनकी भरपूर प्रशंसा की।

सन् 1929 के दौरान आंबेडकर ने मुसलमानों को दिए जा रहे पृथक निर्वाचन सहित साम्प्रदायिक प्रतिनिधित्व का विरोध किया। उन्होंने इसे बुराई का पोषक माना। आंबेडकर ने अल्बानिया, बुल्गारिया, ग्रीस, रूमानिया, युगोस्लाविया तथा सोवियत संघ जैसे देशों का

उदाहरण देते हुए बताया कि वहां भी बिना किसी साम्प्रदायिक प्रतिनिधित्व के मुसलमान अन्य लोगों के साथ रह रहे हैं। क्या भारत में ऐसा संभव नहीं हो सकता? इसके लिए उन्होंने संयुक्त निर्वाचन व्यवस्था अपनाये जाने का सुझाव रखा।[15] आंबेडकर ने कांग्रेस की डोमिनियन स्टेटस की मांग को अपना पूर्ण समर्थन दिया क्योंकि उसमे स्वतंत्रता का सार निहित था और पूर्ण स्वतंत्रता के लिए भी उसमे कोई खतरा नहीं था। आंबेडकर का विचार था कि वे लोग ही जो एक सामान्य संविधान में आस्था रखते हुए संगठित हैं, अपनी आजादी की सुरक्षा कर सकते हैं। आंबेडकर आगे बताते हैं कि ब्रिटिश सरकार दुनिया में सबसे खर्चीली सरकार है। देश का धन ब्रिटेन की ओर प्रवाहित होता रहा और हम देशवासी गरीब होते चले गए। उन्होंने बताया कि भारतीय लोगों की गरीबी की दुनिया में कोई मिसाल नहीं है। इसके साथ ही ब्रिटिश सरकार ने जानबुझ कर देश में व्यापार और उद्योगों को निरुत्साहित करने की नीति अपनाई। भारतीयों की गरीबी का मूल कारण ही ब्रिटिश सरकार है। उन्होंने अपनी बात पर बल देते हुए कहा कि "केवल वही सरकार जो लोगों की, लोगों के लिए, लोगों द्वारा हो, भारतीयों की समस्याओं को दूर कर सकती है।"[16] इस प्रकार उनका स्पष्ट विचार था कि हमें अपने दुखों से निजात तब तक नहीं मिल सकती जब तक राजनीतिक शक्ति हमारे हाथ में नहीं आ जाती।

गोलमेज परिषद में भी डॉ आंबेडकर ने देश के समक्ष मौजूद विभिन्न मुद्दों पर अपने विचार बड़ी वेबाकी के साथ रखे। उन्होंने तीनों सम्मेलनों में भाग लिया। अपने आक्रामक और अंतर्दृष्टिपूर्ण भाषणों से उन्होंने उन तमाम आलोचकों का मूंह बंद कर दिया जो उन्हें अंग्रेजों का पिठू कहते थे। गोलमेज समेलन में उनके भाषणों ने व्यापक राष्ट्रीय हितों के प्रति उनकी वेदाग प्रतिबद्धता को स्पष्ट रूप से प्रदर्शित किया और उन्हें एक सच्चे राष्ट्रवादी नेता के रूप में सामने लाया। जो न केवल दलित वर्गों का प्रतिनिधित्व कर रहे थे अपितु तमाम हिन्दुस्तानियों का भी प्रतिनिधित्व कर रहे थे। आंबेडकर ने 21 मई 1932 को पुणे में एक सभा में भाषण देते हुए कहा था "गोलमेज सम्मेलन में मेरी भूमिका को लेकर कांग्रेस चाहे मेरा जितना विरोध कर ले किन्तु हिंदुस्तान की भावी पीढ़ी जब शांतिपूर्वक इस विषय पर विचार करेगी तो उन्हें खुद पता चल जायेगा कि मैंने राष्ट्र की सच्ची सेवा की है।"[17]

आंबेडकर ने कहा कि सामाजिक और आर्थिक समता के लक्ष्य को प्राप्त किये बिना राजनीति समता का लक्ष्य साकार नहीं हो सकता।[18] आंबेडकर के अनुसार ध्येयसिद्धि की दृष्टि से राजनीति का महत्व मर्यादित है। सामाजिक उन्नति का आधार केवल मात्र राजनीति नहीं है, सामाजिक व आर्थिक पक्ष भी कम महत्त्व के नहीं होते। समाज की सर्वांगीण उन्नति के लिए इन सभी पक्षों को समान महत्त्व दिए जाने की आवश्यकता है। बाबा साहेब का स्पष्ट विचार था कि राजनीति केवल सत्ता संपादन के लिए ही नहीं अपितु जनता की सेवा के लिए है। डॉ. आंबेडकर देश की स्वाधीनता के विचार को अन्य किसी भी समस्या से ऊपर रखते थे। उन्होंने हमेशा देश हित को प्राथमिकता दी। उनका कहना था कि "इसमें कोई संदेह नहीं है कि मैं अपने देश से कितना प्यार करता हूँ। मेरे अपने हित और देशहित में जब भी टकराव होगा तो मैं देशहित को प्राथमिकता दूंगा।"[19]

श्रमिक नेता के रूप में डॉ. आंबेडकर

श्रमिक एवं मजदूर वर्ग के कल्याण एवं सुरक्षा हेतु आंबेडकर का योगदान अतुलनीय रहा। स्वतंत्र मजदूर दल के माध्यम से उन्होंने असंगठित मजदूरों को संगठित किया। आंबेडकर

जानते थे कि राजनीतिक समता के साथ–साथ आर्थिक समता भी आवश्यक है। वे कहते थे "भूमिहीन मजदूरों की समस्या भारत की अर्थव्यवस्था से जुडी हुई है इसलिए इनकी समस्या को राष्ट्रीय आर्थिक विकास के सन्दर्भ में देखा जाना चाहिए।"[20] आंबेडकर रॉयल कमीशन (1925) से पूर्व ही मजदूरों के अधिकारों की सुरक्षा हेतु प्रयासरत रहे। 1927 से 1939 तक वह बम्बई प्रोविंसियल कार्यकारिणी के सदस्य रहे। 1942 से 1946 तक वायसराय की कार्यकारिणी में श्रम सदस्य रहे। आंबेडकर का हमेशा से ही यह प्रयास रहा की भारत में मजदूरों एवं श्रमिकों के कल्याण के लिए एक अच्छी श्रम नीति का होना नितांत आवश्यक है। देश में बहुआयामी श्रम कानून बनें। ताकि मजदूर नियोजक के हाथ में खिलौना न बनें। आंबेडकर का मत था कि मजदूर वर्ग के लिए स्वास्थ्य, शिक्षा और आवास की समुचित व्यवस्था होनी चाहिए, उद्योगों में काम करने का समुचित वातावरण होना चाहिए। आंबेडकर को यह पूर्ण विश्वास था कि बिना किसी निश्चित श्रमसंहिता के यह सब कल्पना मात्र ही है। इसलिए वे जीवन में सदैव एक मजबूत श्रमसंहिता पर जोर देते रहे एवं समय–समय पर श्रमिक वर्ग के हितों की आवाज उठाते रहे। यह उनकी योग्यता का ही प्रतिफल था कि वायसराय की कार्यकारिणी में श्रम सदस्य के रूप में आंबेडकर के पास एक दर्जन से भी अधिक विभाग थे। हालाँकि 1946 में उन्होंने अपने पद से इस्तीफा दे दिया था।[21] किन्तु श्रम कल्याण और श्रमिकों की सामाजिक सुरक्षा हेतु किये गए उनके कार्य आज भी मिल का पत्थर हैं।

डॉ. आंबेडकर सभी प्रकार के उद्योगों का राष्ट्रीकरण चाहते थे। उनका मत था कि राष्ट्र की संपदा के राष्ट्रीकरण से ही भारत एक समृद्ध देश बन सकता है। ऐसे में श्रमिक वर्ग भी राष्ट्रहित में काम करेगा। परन्तु निजी मुनाफे का बढ़ते रहने देना, श्रम कानूनों का निर्माण न करना, श्रमिकों को नियोजकों के हाथों खुला छोड़ देने के समान है।[22]

सन् 1930 के दशक में बाबा साहेब आंबेडकर एक प्रमुख श्रमिक नेता के रूप में जाने जाते थे। उन्होंने 1934 में बम्बई म्युनिसिपल वर्क्स यूनियन के अध्यक्ष के तौर पर इस क्षेत्र में कार्य आरम्भ किया था। बाद में उन्होंने श्रमिकों की स्थिति में सुधार हेतु एवं उन्हें राजनीतिक एवं आर्थिक अधिकार दिलवाने के लिए 1936 में स्वतंत्र मजदूर दल का गठन किया। 1937 के चुनावों में इस दल ने 13 सीटें जीतीं। उन्होंने मजदूरों को गुमराह करने के लिए कम्युनिस्टों की कड़ी आलोचना की। उनका यह ठोस मत था कि कम्युनिस्ट अपनी राजनीतिक ध्येयसिद्धि के लिए मजदूरों का शोषण करते हैं।[23] बाबा साहेब आंबेडकर के लिए श्रमिक वर्ग का कल्याण और सुरक्षा सामाजिक न्याय के आधार थे। श्रम कल्याण एवं श्रम सुरक्षा के उपायों द्वारा आंबेडकर ने सामाजिक लोकतंत्र की अवधारणा को व्यवहारिक रूप देने का प्रयत्न किया।[24]

संविधान सभा में डॉ. आंबेडकर

आंबेडकर बंगाल से चुनकर संविधान सभा में आये थे। किन्तु 1947 में देश विभाजन के साथ–साथ संयुक्त बंगाल का भी विभाजन हो गया। आंबेडकर जिस सीट से चुनकर संविधान सभा में पहुंचे थे वो पूर्वी पाकिस्तान वाले अधिकार क्षेत्र में चली गयी। फलतः आंबेडकर संविधान सभा के सदस्य नहीं रहे। कांग्रेस आंबेडकर की काबिलियत से भली–भांति परिचित थी। आंबेडकर का संविधान सभा में प्रवेश करने का विरोध करने वाली कांग्रेस ने खुद आगे आकर उनकी उम्मीदवारी का प्रस्ताव रखा। संविधान सभा के अध्यक्ष डॉ. राजेंद्र प्रसाद ने बम्बई के

तत्कालीन प्रधानमंती बी.जी.खेर को पत्र लिखकर डॉ. आंबेडकर को संविधान सभा में भेजने का अनुरोध किया। डॉ. एम. आर. जयकर जोकि कांग्रेस के ही सदस्य थे, के त्यागपत्र देने से रिक्त हुई सीट से डॉ. आंबेडकर जुलाई 1947 में पुनः संविधान सभा के लिए निर्वाचित हुए। पंडित नेहरु ने स्वतंत्र भारत के पहले मंत्रिमंडल में शामिल होने के लिए डॉ. आंबेडकर के समक्ष प्रस्ताव रखा जिसे आंबेडकर में सहर्ष स्वीकार कर लिया। पंडित नेहरु आंबेडकर की विद्वता, तर्कबुद्धि ओर स्पष्टवादिता से बहुत प्रभावित थे इसी कारण उन्होंने आंबेडकर को अपने मंत्रिमंडल में विधि मंत्री का कार्यभार सौंपा।

29 अगस्त 1947 को संविधान सभा द्वारा भारत के भावी संविधान के प्रारूप की समीक्षा करने के लिए एक समिति का गठन किया गया जिसे मसौदा समिति के नाम से जाना जाता है। समिति में सात सदस्य थे। जिनके नाम थे– अल्लादी कृष्णास्वामी अय्यर, एन. गोपालस्वामी अय्यंगर, बी. आर. आंबेडकर, के. एम. मुंशी, सैय्यद मोहम्मद सादुल्ला, बी, एल. मित्रा और डी. पी. खेतान। समिति की पहली बैठक में ही डॉ. आंबेडकर को सर्वसम्मति से मसौदा समिति का अध्यक्ष चुन लिया गया। कुछ समय पश्चात् बी. एल. मित्रा के स्थान पर एन. माधवराव को चुन लिया गया जबकि डी. पी. खेतान की मृत्यु हो जाने के बाद उनका स्थान टी. टी. कृष्णामाचारी को दे दिया गया।[25] डॉ. आंबेडकर जैसे योग्य व्यक्ति का संविधान निर्माण करने वाली समिति के अध्यक्ष पद पर चयन निश्चित रूप से अस्पृश्य समाज ही नहीं अपितु समूचे भारत राष्ट्र के लिए गौरव का विषय था।

संविधान निर्माण में आंबेडकर का क्या योगदान रहा या आंबेडकर को संविधान का शिल्पी क्यूँ कहा जाता है? इसका ज्ञान हमें संविधान का प्रारूप तैयार करने के लिए नियुक्त लेखन समिति के एक सदस्य टी. टी. कृष्णामाचारी के संविधान सभा में 5 नवंबर 1948 को दिए गए भाषण से स्पष्ट होता है। उन्होंने सदन का ध्यान आकृष्ट करते हुए कहा था "सदन को यह शायद मालूम हुआ होगा कि आपके चुने हुए सात सदस्यों में से एक ने इस्तीफा दे दिया था जिसकी जगह रिक्त ही रही। एक सदस्य की मृत्यु हो गयी। एक सदस्य अमेरिका चला गया। एक सदस्य रियासतदारों–सबंधी कामकाज में व्यस्त रहा। इसलिए वे सदस्य होकर भी न के बराबर ही रहे। दो–एक सदस्य स्वास्थ्य कारणों से उपस्थित न रह सके। ऐसी परिस्थितियों में संविधान निर्माण का कार्य केवल डॉ. आंबेडकर को ही करना पड़ा। इस स्थिति में उन्होंने जिस प्रकार इस कार्य को अंजाम दिया काबिले तारीफ है। आंबेडकर ने अनेक कठिनाइयों के बाबजूद ये कार्य किया इसके लिए हम हमेशा उनके ऋणी रहेंगे।"[26]

यदि अन्य विदेशी संविधानो के निर्माण काल की तुलना भारत के संविधान से की जाये तो मानना पड़ेगा कि आंबेडकर कितने क्षमतावान थे। भद्रशील रावत के अनुसार अमेरिका के संविधान में केवल सात धाराएँ थी जिसे बनाने में चार वर्ष लगे। कनाडा के संविधान में 147 धाराएँ थी जिसके निर्माण में नौ वर्ष लगे। दक्षिण अफ्रीका के संविधान में 153 धाराएँ थी जिसके निर्माण में एक वर्ष लगा। किन्तु भारत के संविधान में 395 धाराएँ थी जिसके निर्माण में मात्र 114 दिन का ही समय लगा। संविधान से सबंधित 2473 संशोधन संविधान सभा के समक्ष पेश किये गए। इन पर चर्चा के दौरान हर प्रश्न का उत्तर बाबा साहेब आंबेडकर ने दिया। कुल मिलाकर 2 वर्ष 11 महीने और 18 दिन तक संविधान निर्माण का कार्य चला। सैंकड़ो सदस्यों

के प्रश्नों का संतोषजनक उत्तर देना और जटिल संवैधानिक समस्याओं को बहुत ही साधारण ढंग से सुलझाना आंबेडकर के गहन अध्ययन, अनुभव, एवं बुद्धिमता के कारण ही संभव हो पाया। इसी योग्यता के कारण भारत के वायसराय लार्ड लिनलिथगो की दृष्टि में डॉ. अबेडकर अकेले ही 500 ग्रेजुएट्स के बराबर थे।[27]

मुसलमानों की निष्ठा का केंद्र कभी भारत नहीं हो सकता

डॉ. आंबेडकर ने इस्लामी भ्रातृत्व को हमेशा संदेह की दृष्टि से देखा। उनका मानना था कि 'इस्लामी भ्रातृत्व विश्वव्यापी भ्रातृत्व नहीं है। उनका भ्रातृत्व प्रेम केवल अपने समुदाय तक ही सीमित है। उनमें एक बंधुत्व तो है किन्तु अपने समुदाय तक। अन्य समुदायों के लिए उनके मन में शत्रुता एवं घृणा के अलावा कुछ नहीं। इस्लाम कभी भी भारत को अपनी मातृभूमि तथा हिन्दू को अपने सगे के रूप में मान्यता नहीं दे सकता।'[28] सन 1940 में प्रकाशित अपनी पुस्तक 'जीवनहीजे वद चंपेजंद' में आंबेडकर ने कहा कि "वे हिंदुस्तान में रहते हैं किन्तु इस्लामी विचारों के वशीभूत होने के कारण उनकी आँखे तुर्कस्तान या अफगानिस्थान की ओर लगी रहती हैं। हिंदुस्तान अपना है इसका उन्हें तनिक भी अभिमान नहीं। हिन्दुओं को तो वे अपना सबसे बड़ा शत्रु समझते हैं। ऐसे लोग हिंदुस्तान पर आक्रमण के समय देश की रक्षा करेंगे ऐसा मानकर चलना खतरनाक है।" आंबेडकर 1919 की घटना को याद करते हुए कहते हैं कि "स्मरण रखो कि जब खिलाफत आंदोलन चल रहा था तब भारत के मुसलमान अफगानिस्तान के अमीर को भारत पर आक्रमण का न्योता देने गए थे।"[29]

आंबेडकर का स्पष्ट मत था कि 'एकता भाईचारे की भावना, बंधुता और सजातीयता पर आधारित होनी चाहिए। वह अध्यात्मिक होनी चाहिए। किन्तु भारत के हिन्दुओं एवं मुसलमानों के बीच ऐसी एकता कभी नहीं रही क्यूंकि दोनों राजनीतिक दृष्टि से पृथक, सामाजिक दृष्टि से विरोधी एवं आध्यात्मिक दृष्टि से एक दूसरे से भिन्न रहे हैं।'[30] इन्ही कारणों से कांग्रेस विरोध के बाबजूद डॉ. आंबेडकर ने भारत विभाजन का समर्थन किया। उनका स्पष्ट मत था कि अगर मजबूत केन्द्रीय सरकार चाहिए तो विभाजन करना ही होगा अन्यथा परिणाम बुरे हो सकते हैं। जबरदस्ती की हिन्दू–मुस्लिम एकता राष्ट्र की उन्नति में रुकावट बनेगी। भारत एक रोगमयी राज्य होगा और यदि भारत का विभाजन हो जाता है तो जो दृश्य दिखाई देगा उससे तुलना करें। विभाजन से हर किसी को अपना सुखद भविष्य प्राप्त करने के लिए जो भी मार्ग स्वीकार करना हो, वो खुला रहेगा।[31] आंबेडकर के विचार स्पष्ट थे किन्तु वे दिल से विभाजन नहीं चाहते थे। उन्होंने संविधान सभा में पाकिस्तान पर विचार रखते हुए कहा था कि 'आज भले ही मुस्लिम लीग पाकिस्तान के लिए मांग कर रही है लेकिन एक दिन लीग भी यह सोचने पर बाध्य होगी कि संयुक्त भारत में रहकर ही मुस्लिमों का ज्यादा भला हो सकता था, ऐसा कहने में मुझे रंग मात्र की भी शंका नहीं है।'[32]

आंबेडकर एक कुशल नेता थे। उन्हें स्मरण था कि एक ही समय दो–दो मोर्चों पर संघर्ष करना किसी भी दृष्टि से सही नहीं रहेगा। इसलिए उन्होंने स्वतंत्रता के लिए लड़े जा रहे राजनीतिक आंदोलन से दूरी बनाए रखी। किन्तु राष्ट्रीय आन्दोलन की हर छोटी–बड़ी घटना की उनको पूरी जानकारी रहती थी। स्पृश्य हिन्दुओं से लड़ते–लड़ते ब्रिटिश सत्ता से जो अधिकार प्राप्त होंगे उन्हें स्वीकार कर आगे बढ़ना आंबेडकर का ध्येय था।[33] राजनीतिक

स्वतंत्रता प्राप्त करने के कार्य की अपेक्षा आंबेडकर का कार्य अधिक भव्य एवं उदात्त था। क्यूंकि आंबेडकर के कार्य में भावी भारतीय लोकतंत्र की सुरक्षा, समता, स्वतंत्रता और बंधुत्व का भाव अंतर्निहित था।

डॉ. जाटव ने अपने ग्रन्थ 'राष्ट्रीय आन्दोलन में आंबेडकर की भूमिका'[34] में लिखा है कि डॉ. आंबेडकर सामाजिक स्वतंत्रता के लिए संघर्ष कर रहे थे जबकि कांग्रेस राजनीतिक स्वतंत्रता की दिशा में लड़ रही थी। किन्तु सामूहिक दृष्टि से देखा जाये तो दोनों शताब्दियों से चली आ रही दासता के साथ–साथ सामाजिक और राजनीतिक स्वतंत्रता के उद्देश्य को लेकर आगे बढ़ रहे थे। आंबेडकर इकलौते नेता थे जिसने मोंटेग्यू–चेम्सफोर्ड (1919) सुधारों से लेकर केबिनेट मिशन योजना (1946) तक राष्ट्रीय आन्दोलन के दौरान सभी संवैधानिक प्रक्रियाओं के विचार–विमर्श में भाग लिया। इस बजह से कांग्रेस व अन्य जनों द्वारा बेशक आंबेडकर का कई बार विरोध किया गया हो किन्तु आंबेडकर साम्राज्य विरोधी थे न कि राष्ट्र विरोधी। उनका मतैक्य यही था कि भारत के लिए मात्र स्वराज पर्याप्त नहीं है। स्वतंत्र भारत को सामाजिक जनतंत्र एवं आर्थिक स्वतंत्रता के लिए सुरक्षित बनाना भी आवश्यक है। उस स्थिति से आंबेडकर अस्पृश्य समाज के लिए राजनीतिक सहुलतें चाहते थे न कि राजनीतिक स्वतंत्रता के मार्ग में कोई अवरोध डालना। वस्तुतः बाबा साहेब आंबेडकर ने अपने ही तरीके से स्वतंत्रता आन्दोलन में अपना योगदान दिया।

निष्कर्ष

बाबासाहेब डॉ. आंबेडकर सच्चे राष्ट्र उन्नायक थे। उन्होंने न केवल समाज में अंतिम पंक्ति में खड़े शोषित वर्ग की आवाज उठाई वरन समूचे भारत को एक सुदृढ़, संगठित और सभ्य राष्ट्र बनाने के लिए आजीवन संघर्ष किया। वायसराय की कार्यकारिणी में श्रम सदस्य रहते उन्होंने श्रमिकों के हित में अनेक कानून पास करवाए। हिन्दू कोड बिल के माध्यम से उन्होंने नारी समाज को अपने अधिकारों के प्रति जागरूक करने का कार्य किया। भारतीय संविधान को बनाने के लिए उन्होंने अथक शारीरिक और मानसिक परिश्रम किया। बहुत अल्प समय में संविधान का मसौदा तैयार किया और संविधान सभा में प्रत्येक सदस्य की जिज्ञासा को शांत करते हुए इसकी एक–एक पंक्ति को पारित भी कराया। डॉ. आंबेडकर द्वारा तैयार संविधान में मानव व्यक्तित्व के प्रति सम्मान, सहमति व समझौते की प्रवृति, सामाजिक कल्याण, के साथ–साथ व्यक्ति स्वातंत्र्य, बंधुता, न्याय, प्रेम एवं सद्भावना आदि के तत्त्व निहित हैं। इस प्रकार हमारा संविधान सर्वसमावेशी एवं सर्वजन सुखाय सर्वजन हिताय की धारणा पर आधारित है जिसमें देश के हर नागरिक के अधिकारों एवं हितों का सरंक्षण एवं सवर्धन किया गया है। बाबा साहेब आंबेडकर एक मनीषी थे जिनकी दिव्य दृष्टि ने भारत को विश्व के अग्रणी राष्ट्रों में लाकर खड़ा कर दिया।

❒

सन्दर्भ –

1. *चांगदेव भवानराव खैरमोड़े, बाबासाहेब डॉ. आंबेडकर : जीवन एवं चिंतन, भाग–1, सम्यक प्रकाशन, नई दिल्ली, 2018, पृ. 16*
2. *वही, पृ. 55*
3. *धनंजय कीर, डॉ. बाबासाहब आंबेडकर : जीवन–चरित, पोपयुलर प्रकाशन, मुम्बई, 2006, पृ.16*
4. *वही, पृ. 30–31*

5. चांगदेव भवानराव खैरमोड़े, बाबासाहेब डॉ. आंबेडकर : जीवन एवं चिंतन, भाग–9, सम्यक प्रकाशन, नई दिल्ली, 2018, पृ. 21
6. चांगदेव भवानराव खैरमोड़े, भाग–1, पूर्वोक्त, पृ. 94–96
7. कुलदीप चंद अग्निहोत्री, डॉ. भीमराव रामजी आंबेडकर यात्रा के पदचिन्ह, राष्ट्रीय पुस्तक न्यास, नई दिल्ली, 2018, पृ.137
8. डॉ. अखिलेश निगम 'अखिल', डॉ. अम्बेडकर : सामाजिक क्रांति के अग्रदूत, संपादक, प्रो. सतीश गंजू और डॉ.रवि कुमार गोंड, 'डॉ. भीमराव अम्बेडकर : संघर्ष से शिखर तक' अनंग प्रकाशन, नई दिल्ली, 2018, पृ. 38
9. दत्तोपंत ठेंगडी, डॉ. अम्बेडकर और सामाजिक क्रांति की यात्रा, लोकहित प्रकाशन, लखनऊ, 2015, पृ. 106
10. धनंजय कीर, पूर्वोक्त, पृ. 53
11. वही, पृ. 108
12. डॉ. डी. आर. जाटव, राष्ट्रीय आन्दोलन में आंबेडकर की भूमिका, समता साहित्य सदन, जयपुर, 2010, पृ. 38
13. वही, पृ. 44
14. धनंजय कीर, पूर्वोक्त, पृ. 121
15. जाटव, 2010, पूर्वोक्त, पृ. 45
16. वही, पृ. 51
17. धनंजय कीर, पूर्वोक्त, पृ. 196
18. दत्तोपंत ठेंगडी, पूर्वोक्त, पृ. 158
19. *Writing & Speeches, Vol- 1- Compiled by Vasant Moon, Education Department, Government of Maharashtra, 1987- P- 258*
20. डॉ. अखिलेश निगम 'अखिल', 2018, पूर्वोक्त, पृ. 43
21. ताराराम, श्रम कल्याण, श्रम सुरक्षा और भारतरत्न डॉ. आंबेडकर, भाग–1, सम्यक प्रकाशन, नई दिल्ली, 2011, पृ. 17
22. पूर्वोक्त, पृ. 18
23. डॉ नरेंद्र जाधव, डॉ. आंबेडकर राजनीति, धर्म और संविधान विचार, प्रभात प्रकाशन, दिल्ली, 2017, पृ. 24
24. ताराराम, 2011, पूर्वोक्त, पृ. 110
25. डॉ. डी. आर. जाटव, डॉ. अम्बेडकर संविधान के मुख्य निर्माता, समता साहित्य सदन, जयपुर, 2015, पृ. 38–40
26. जाटव, 2015, पूर्वोक्त, पृ. 50
27. भद्रशील रावत, राष्ट्र निर्माण में बाबासाहेब डॉ. आंबेडकर का योगदान, सम्यक प्रकाशन, नई दिल्ली, 2015, पृ. 66
28. बाबा साहेब डॉ. अम्बेडकर, सम्पूर्ण वांग्मय, खंड 15, पाकिस्तान अथवा भारत का विभाजन, डॉ. अम्बेडकर प्रतिष्ठान, भारत सरकार नई दिल्ली, 2019, पृ. 337
29. डॉ. भीमराव आंबेडकर, 'पाकिस्तान की परिकल्पना' (*Thoughts on Pakistan* का हिंदी रूपांतरण) एस. मूर्ति, कल्चरल पब्लिशर्स, लखनऊ, 1987, पृ. 88–90
30. जाटव, 2010, पूर्वोक्त, पृ.153
31. बाबा साहेब डॉ. अम्बेडकर, सम्पूर्ण वांग्मय, खंड 15, पूर्वोक्त, पृ. 347
32. चांगदेव भवानराव खैरमोड़े, भाग–9, पूर्वोक्त, पृ. 210
33. धनंजय कीर, पूर्वोक्त, पृ. 57
34. जाटव, 2010, पूर्वोक्त, पृ. 39

पूर्वदेवा– सामाजिक विज्ञान शोध पत्रिका
वर्ष 29, अंक, 116, जनवरी–मार्च, 2024 पृ. 66–69

UGC Care Listed Journal
ISSN 0974 -1100

विधिक उपचार की अवधारणा
अपराधिक विधि के संदर्भ में

कविता शुक्ला
शोधार्थी, विधि संकाय, स्कूल ऑफ लीगल स्टडीज, एल.एन.सी.टी. विश्वविद्यालय, भोपाल (म.प्र)
E-mail : so.law@lnctu.ac.in Mob. No. 9479661914

सारांश

अपराधिक विधि में विधिक उपचार सम्बन्धी उपबन्ध भारतीय दण्ड संहिता की धारा 96 से 106 में उल्लेखित किया गया है निजी प्रतिरक्षा में किया गया कृत्य अपराध हो सकता है लेकिन इस विधि के तहत औचित्य पूर्ण माना गया है क्योकि स्वयं की आत्मरक्षा करना प्रत्येक जीवित प्राणी की प्राकृतिक प्रवृत्ति है। निजी प्रतिरक्षा के अधिकार के सम्बन्ध मे लार्ड बैरन पार्क ने यह कहा है कि "प्रकृति व्यथित व्यक्ति को प्रोत्साहित करती है कि वह आक्रमणकारी या क्षति पहूँचाने वाले का विरोध करें तथा उस सीमा तक बल प्रयोग करें जो उन परिस्थितियों में क्षति को रोकने या आक्रमण की पुनरावृत्ति को रोकने के लिए पर्याप्त हो ।"

विधिक उपचार द्वारा व्यक्ति को निजी प्रतिरक्षा का अधिकार प्रदत्त किये जाने का एक अन्य कारण यह भी है कि व्यवहारिक दृष्टि से राज्य के लिए यह सम्भव नहीं है कि वह अपने सीमित साधनों से प्रत्येक व्यक्ति की प्रत्येक क्षति से रक्षा कर सके । अतः वह व्यक्ति को एक निश्चित सीमा तक स्वयं के शरीर व सम्पत्ति की रक्षा करने का अधिकार देती है लेकिन इसके साथ यह अपेक्षा करती है कि निजी प्रतिरक्षा के लिए किया गया बल प्रयोग उस सीमा से अधिक नहीं होना चाहिए जो उन परिस्थितियों में एक सामान्य व्यक्ति युक्ति युक्त समझे ।

1. विधिक उपचार का विस्तार

प्रतिरक्षा के अधिकार को अन्य व्यक्तियों के शरीर या सम्पत्ति के रक्षा हेतु प्रयुक्त किये जाने के औचित्य के बारे में प्रसिद्ध विधिशास्त्री जर्मी बेन्थम ने कहा है कि "मानव ही यह सामान्य प्रवृत्ति है कि जब वह किसी निर्बल या असहाय व्यक्ति को किसी बलवान व्यक्ति के अन्यायपूर्ण आक्रमण का शिकार होते हुए देखता है तो उसका हृदय दया या करूणा से पिघल जाता है और वह उस निर्बल व्यक्ति की सहायता करने के लिए प्रेरित होता है।"[1] सामाजिक सुरक्षा की दृष्टि से यह विधिक उपचार न्यायोचित माना गया है।

2 विधिक उपचार के औचित्य –

विधि की सार्वभौमिक मान्यता यह है कि स्वयं की आत्मरक्षा करना प्रत्येक व्यक्ति का मौलिक कर्तव्य है तथा अनेक मजिस्ट्रेटों व पुलिस कर्मियों की सतर्कता मिलकर भी व्यक्ति की स्वयं की सर्तकता का स्थान नहीं ले सकती। यदि अपराध विधि के अन्तर्गत प्रतिरक्षा के अधिकार का उपबन्ध न रखा जाए तो यह परोक्षतः अपराधियों को बढ़ावा देने के समान होगा। विधि प्रत्येक व्यक्ति से यह अपेक्षा नहीं करती कि यदि कोई व्यक्ति उस पर आक्रमण कर रहा है या उसके शरीर या सम्पत्ति को क्षति पहुँचा रहा है तो वह कायरता से हाथ पर हाथ धरे बैठा रहे और पुलिस या कानून के रखवालो की सहायता की प्रतिक्षा करता रहे ऐसी स्थिति में यही न्योचित होगा कि वह उचित बल का प्रयोग करते हुए अपने शरीर या सम्पत्ति की स्वयं प्रतिरक्षा करें ।

3 विधिक उपचार की सीमा –

किसी व्यक्ति द्वारा निजी प्रतिरक्षा के अधिकार का प्रयोग किसी सीमा तक किया जा सकता है उसका उल्लेख करते हुए उच्चतम न्यायालय ने ओंकार नाथ बनाम उत्तरप्रदेश राज्य[2] के बाद में यह विनिश्चित किया है कि यदि व्यक्ति पर तलवार से वार किया गया हो तो वह आक्रमणकारी की हत्या कर सकता है परन्तु यदि आक्रमणकारी की तलवार टूट जाती है या वह शस्त्रहीन हो जाता है और ऐसी स्थिति में गम्भीर चोट का खतरा समाप्त हो जाता है तो उस स्थिति में आक्रमणकारी का मार डालना हत्या अथवा सदोष मानव वध का अपराध होगा। उसे ऐसी स्थिति में कोई विधिक उपचार उपलब्ध नहीं होगा। कहने का आशय यह है कि जब तक आक्रमण होता रहे, वह व्यक्ति अपनी प्रतिरक्षा के अधिकार का प्रयोग जारी रख सकता है और पीछे हटने के लिए बाध्य नही होगा लेकिन ज्योहि आक्रमण का खतरा समाप्त हो जाता है उसके प्रतिरक्षा का अधिकार समाप्त हो जाएगा ।

4. विधिक उपचार एवं सबूत का भार :–

दण्ड विधि का मौलिक एवं सुस्थापित नियम यह है कि अभियुक्त के अपराध को संदेह के परे साबित करने का भार हमेशा अभियोजन–पक्ष पर होता है, परन्तु यदि अपने अपराध के बचाव में अभियुक्त सामान्य अपवादों में से किसी अपवाद का तर्क प्रस्तुत करता है, तो उस कृत्य को विधिक उपचार कहते है। जिसके तहत उसे वह अपवाद साबित करना होगा, जिसके तहत वह विधिक दायित्व से मुक्ति चाहता है। जहॉ दो या अधिक व्यक्ति आपस में लड़ते हैं वहॉ विनिश्चित करना अत्यन्त कठिन होता है कि उनमें से वास्तविक आक्रमणकारी कौन था और किसके उपर हमला किया गया। इस तरह दण्ड विधि द्वारा यह सिद्धान्त प्रतिपादित किया गया कि सर्वप्रथम यह दायित्व अभियोजन पक्ष पर होगा कि वह अभियुक्त का आरोप संदेह के परे सिद्ध करें। इस पर यदि अभियुक्त निजी प्रतिरक्षा के अधिकार के बचाव का तर्क प्रस्तुत करता है, तो यह साबित करने का भार उस पर होगा कि उसने निजी प्रतिरक्षा के अधिकार के अन्तर्गत कार्य किया था। उसने विधिक उपचार के तहत अपना बचाव किया है।

5. न्यायिक दृष्टि कोण :–

विधिक उपचार के परिपेक्ष्य में निजी प्रतिरक्षा के औचित्य की पुष्टि में न्यायालयों ने समय–समय पर अपना अभिमत प्रकट किया है, इनमें से कुछ प्रमुख निर्धारित वादों का उल्लेख निम्नानुसार किया जा रहा है –

टॉमस बनाम मध्यप्रदेश शासन[3]– के वाद में यह निर्धारित किया गया है कि वस्तुतः निजी प्रतिरक्षा का अधिकर केवल तब उत्पन्न होता है जब व्यक्ति के सामने केवल दो विकल्प रह गए हो, अर्थात या तो वह आक्रमणकारी के समक्ष समर्पण कर दें अथवा उस परिस्थिति में आवश्यक बल प्रयोग करते हुए स्वयं को बचाने का प्रयास करें। यदि व्यक्ति स्वयं आक्रमणकर्ता है, तो उस दशा में वह स्वयं आत्मरक्षा के बचाव की मांग नहीं कर सकेगा ।

चको मथाई बनाम केरल[4]– राज्य के वाद में उल्लेखित किया गया है कि विधि विरूद्ध आक्रमणों से अपनी रक्षा स्वयं करने की दिशा में विधिक उपचार के परिपेक्ष्य में निजी प्रतिरक्षा का बचाव एक बहुमूल्य विधिक उपहार है विधि किसी व्यक्ति से यह अपेक्षा नहीं करती कि उस पर किसी अन्य व्यक्ति द्वारा आक्रमण किये जाने की दशा में वह कायरता से उसे सहन कर ले तथा अपनी सम्पत्ति को छोडकर भाग खड़ा हो। ऐसी परिस्थिति में उससे यह अपेक्षा की जाती है कि वह उचित बल प्रयोग करते हुए आक्रमणकारी का मुकाबला करें तथा अपने शरीर व सम्पत्ति की स्वयं रक्षा करें ।

मोहम्मद खान बनाम मध्यप्रदेश राज्य[5]– के वाद में उच्चतम न्यायालय में यह प्रतिपादित किया कि दण्ड सहिता में निजी प्रतिरक्षा के अधिकार को उपबन्धित करने के पीछे दण्ड संहिता निर्माताओं का उद्देश्य यह था कि आवश्यकता पडने पर व्यक्ति की पुरूषोचित (मर्दानगी) भावनाओं को प्रोत्साहित किया जाए ताकि वे स्वयं की प्रतिरक्षा करने की ओर प्रवृत्त हो। विधिक उपचार यह नहीं चाहता कि लोग कानून के ऐसे अनुगामी बन जाएँ कि उन पर आक्रमण की दशा में वे भाग खड़े हो। ऐसा कृत्य करना न केवल विधि के लिए वरन स्वयं व्यक्ति के लिए भी लज्जास्पद बात होगी।

विधिक उपचार के सम्बन्ध में निजी प्रतिरक्षा की सीमा को अधिक स्पष्ट करते हुए उच्चतम न्यायालय ने **अर्जुन बनाम महाराष्ट्र राज्य**[6] के वाद में यह अभिकथन किया है कि निजी प्रतिरक्षा का बचाव केवल उसी समय उपलब्ध हो सकेगा जब अभियुक्त को यह युक्तियुक्त सम्भावना लगे कि उसे संघातक उपहति कारित हो सकती है। जिस व्यक्ति ने अपने निजी प्रतिरक्षा में किसी व्यक्ति को उपहति कारित की है, उसका स्वरूप या गम्भीरता लगभग वैसी ही होना आवश्यक है जैसी उसे कारित किये जाने का भय है। कहने का आशय यह है कि निजी प्रतिरक्षा के मामले में विधिक उपचार में यह सिद्ध करने का भार अभियुक्त पर होगा कि वह न्यायालय के समक्ष उपहति कि पर्याप्त साक्ष्य या सबूत पेश करें कि उसके द्वारा कारित की गई उस क्षति स्वयं की प्रतिरक्षा हेतु प्रयोग की गई थी।[7]

धूरे लाल बनाम उ.प्र.राज्य[8] के वाद में अभियुक्त की बन्दूक पर लाठी के प्रहार के चिन्ह पाये गये थे तथा अभियुक्त ने दण्ड प्रक्रिया संहिता, 1973 की धारा 313 के अधीन दिये गये अपने बचाव के बयान में कहा था कि मृतक पक्षकार ही आक्रमक थे, तथा उन पर गोली उस समय दागी गई, जब वे अभियुक्त से बन्दूक छीन लेने का प्रयास कर रहे थे। इन तथ्यों एवं परिस्थितियों में न्यायालय ने अभिनिर्धारित किया कि यह नहीं कहा जा सकता कि अभियुक्तो नें अपनी निजी सुरक्षा (प्रतिरक्षा) के अधिकार की सीमा उल्लंघन किया था, अतः उनका बचाव मान्य करते हुए दोषमुक्त कर दिया गया।

उपसंहार

अपराधिक विधि में विधिक उपचार की अवधारणा यह है कि प्रतिरक्षा के बचाव का तर्क अभियुक्त द्वारा स्वयं प्रस्तुत किया जाना चाहिए। यदि साक्ष्य के आधार पर न्यायालय को ऐसा प्रतीत होता है कि अभियुक्त आत्मरक्षा के बचाव के अधीन कार्य कर रहा था तो वह उस तथ्य को विचार में अवश्य लेगा। जहॉ अभियुक्त के द्वारा बिना किसी युक्तियुक्त साक्ष्य के जोर देकर प्रतिरक्षा के बचाव की मांग की जाने मात्र से न्यायालय उसके इस कथित बचाव पर विचार करने के लिए बाध्य नहीं होगा। यदि परिस्थितियों तथा अभियोजन के साक्ष्य के आधार पर इसका कोई औचित्य दिखलाई न देता हो तो ऐसी परिस्थिति में अभियुक्त को कोई विधिक उपचार दण्ड विधि के अधीन उपलब्ध नहीं होगा ।

❒

सन्दर्भ –

1. *बेन्थम प्रिंसिपल ऑफ पेनल लॉ पेज 269*
2. *ए.आई.आर. 1974 , SC-1550*
3. *1978 क्रि.लॉ. जनरल पेज 528*
4. *ए. आई. आर. 1965 केरल 222*
5. *1973 एस.सी. जनरल 236*
6. *ए.आई.आर. 2012, SC-2181*
7. *मुंशीराम बनाम दिल्ली प्रशासन AIR-1968, SC-702*
8. *धूरे लाल बनाम उ.प्र. राज्य ए.आई.आर. 1974, SC-473*

पूर्वदेवा– सामाजिक विज्ञान शोध पत्रिका
वर्ष 29, अंक, 116, जनवरी–मार्च, 2024 पृ. 70–81

UGC Care Listed Journal
ISSN 0974 -1100

बौद्ध धर्म में तांत्रिक समावेश

किस्मत कुमारी

शोधार्थी, गुरुकुल काँगड़ी (समविश्वविद्यालय), हरिद्वार, (उत्तराखण्ड)
E-Mail Id- kismatdubey91@gmail.com Mob. 8765111012

सारांश

तांत्रिक बौद्ध साधना और साहित्य की ओर बहुत दिनों तक पंडितों का ध्यान नहीं रहा है। परन्तु बीसवीं शताब्दी के आरंभ से इस ओर भारतीय विद्वानों का ध्यान जाने लगा है। तिब्बत और नेपाल में प्राप्त सहजयानी बौद्ध ग्रंथों के अध्ययन से इस विषय को अधिक महत्व प्राप्त हुआ। परन्तु तांत्रिक बौद्ध साहित्य का अध्ययन बड़ा कठिन विषय है। साधना का साहित्य है, केवल बौद्धिक तर्क का नहीं है। साधना की परंपरा भूल गई है, इसलिये केवल शब्दार्थ को पकड़कर इस साहित्य का रहस्य समझना दुष्कर कार्य है। सौभाग्यवश हमारे देश में नाथों, शाक्कों, और अन्य संप्रदायों का तांत्रिक साहित्य, और साधना पद्धति भी, बहुत कुछ जीवित है। मर्म तक पहुँचने का प्रयास बहुत कम होता है। मर्म तक पहुँचने के लिये पूर्ववर्ती और परवर्ती साधना साहित्यों की निपुण जानकारी आवश्यक है और उससे भी अधिक आवश्यक श्रद्धापूर्वक मनन–चिंतन। इस विषय की चर्चा होने लगी है जो शुभ लक्षण है।

मूल शब्द– तांत्रिक बौद्ध साधना और साहित्य, बौद्धिक तर्क, बौद्ध प्रथा, बौद्ध और हिंदू,''महायान,मतवाद, श्रसंग का श्राद्य श्राचार्यत्व, श्रापति, तांत्रिक,वज्रयान, वज्र,मुद्रा,चित्त तत्व, प्रज्ञा और उपाय,शून्यता और करुणा, बुद्धमक्ति,'परावृत्ति',श्रसंग,'मैथुनस्य परावृत्ती',आचार्य,मंजुश्रीमूलकल्प, मैत्रेय, मंत्र तत्व मंत्र, मद्य, मांस,धर्म और दर्शन, मंत्रयान,शुचि–श्रशुचि, गम्यागम्य, पेयापेय, चक्रपूजा, भिक्षु, तिब्बत।

तांत्रिक बौद्ध धर्म

तांत्रिक बौद्ध धर्म या संस्कृत में वज्रयान (जिसका अर्थ है ''वज्र'' या ''हीरा वाहन'') बौद्ध परंपरा का एक जटिल और समझा हुआ हिस्सा है जो बौद्ध धर्म और भारत–तिब्बत सांस्कृतिक संबंधों के इतिहास के लिए काफी महत्व रखता है। 'तांत्रिक बौद्ध धर्म' शब्द एक प्रकार की बौद्ध प्रथा पर लागू होता है जहां तंत्र एक प्रमुख भूमिका निभाता है। तंत्र शब्द संस्कृत शब्द तंत्रम

से लिया गया है, जिसका अर्थ है ''करघा, ताना'', या लाक्षणिक रूप से, ''आधारभूत कार्य, प्रणाली, सिद्धांत'', जहां तन का अर्थ है ''खींचना, विस्तार करना। व्यवहार में, तंत्र सिद्धांत बौद्ध और हिंदू दोनों के विस्तारित गूढ़ साहित्य को संदर्भित करता है, जो जागृत होने या वास्तविकता की वास्तविक प्रकृति से अवगत होने के लिए धार्मिक और व्यावहारिक निर्देश प्रदान करता है। एक अन्य समस्या तांत्रिक अभ्यास के प्रति लोकप्रिय और विद्वानों का दृष्टिकोण है। उदाहरण के लिए, सर मोनियर–विलियम्स की पुस्तक बौद्ध धर्म में, यह कहा गया है कि बुद्ध की मृत्यु के बाद,''महायान नामक शाखा प्रणाली सामान्य कानूनों के संचालन से उत्पन्न हुई, और विकसित हुई विषम सिद्धांतों, जिसमें पूजा भी शामिल थी।[1]

पहला परिच्छेद : तांत्रिक महायान धर्म

पारमितानय और मंत्रनय, तांत्रिक साधना का श्राद्य श्राचार्य और परावृत्ति शब्द का विवेचन तथा विभिन्न मतवाद,श्रसंग का श्राद्य श्राचार्यत्व, श्रापति, तांत्रिक तत्त्व और उनकी प्राचीनता, कालनिर्णय, मंत्रों और घारणियों का विकास, प्राचीन बौद्ध योग का विकास।[2]

दूसरा परिच्छेद :

तांत्रिक बौद्ध साधना का विकास तथा वज्रयान महायान धर्म की अंतिम अवस्था की विशेषताएँ, पार–मितानय तथा मंत्रनय, तांत्रिक धर्म का प्रारंभ तथा आर्यदेव, मंत्रयान, विकास, तांत्रिक बौद्ध मत के उपयान, वज्रयान का प्रवाहकाल, वज्रयानी साधना के श्राद्य आचार्य और सिद्ध, परवर्ती विकास तथा उनकी मुख्य विशेषताएँ।

तीसरा परिच्छेद : वज्रयान का साहित्य और उसका विवेचन

मंत्रयान और वज्रयान, वज्र, वज्रयान की मौलिकताय तंत्र ग्रंथों की कोटियाँ– क्रियातंत्र, चर्यातंत्र, योगतंत्र, अनुत्तरयोगतंत्रय साधना समुच्चय, साधनमाला, साधनों के लेखकय अन्य ग्रंथ–गुह्यसमाज–तंत्र, प्रशोपायविनिश्चयसिद्धि, ज्ञान सिद्धि, श्रद्वयवज्र संग्रह, आर्यमंजुश्री–मूलकल्य।[3]

चौथा परिच्छेद : वज्रयान की विचारधाराएँ

1. श्रधिकारमेदवाद और बौद्ध तंत्र– गुरु और शिष्य, योगिनी या मुद्रा, चक्रपूजा और पंचमकार, दीक्षा, अधिकार, वज्रांकन।

2. बोधिचित्त और प्रशोपाय– चित्तृ तत्व, प्रज्ञा और उपाय, शून्यता और करुणा, साधिका और साधक प्रज्ञा और उपाय तत्व तथा अन्य दर्शन, नर और नारी तत्त्व, नाड़ियाँ, श्रद्य और युगनद्ध, स्त्रीत्व और पंसत्व, राग और महाराग,समरस, सामररस्य तथा निर्वाण।

3. तांत्रिक बौद्ध योग– गुह्य साधना, दो प्रकार के शिष्य, वज्रकुल और अभिषेक, शरीर की महत्ता, शरीर का तांत्रिक परिचय,नाड़ियाँ, बोधिचित्तोत्पाद, चित्तसाधन और कुंडलिनी, मुद्रा, श्रानंद, चक्र, श्रधिष्ठात्री देवियाँ और वर्ण।[4]

तांत्रिक महायान धर्म

बुद्धमक्ति, बुद्धकृपा, अनेक स्वर्गों, देवताओं, देवियों की कल्पना की और पूर्व परिच्छेद में संकेत किया जा चुका है। ये ही तंत्र मंत्री, धारणियों श्रादि को उत्पन्न करने के उत्तरदायी हैं।

श्रद्धयवज्रसंग्रह में संगृहीत 'तलरत्नावली' में महायान को दो भागों में बाँटा गया है–पारमितानय और मंत्रनय या मंत्रयान सामान्य व्यक्तियों के लिये अत्यधिक कठिन और गंभीर है। इसे उपरोक्त प्रथ में केवल उन्नत लोगों के लिये उपयुक्त बताया गया है। इसी मंत्रनय से परवर्ती संप्रदाय विकसित हुए–वज्रयान, कालचक्रयान, सहजयान। तांत्रिक महायान धर्म, दर्शन श्रोर साधना का श्राद्य श्राचार्य कौन था, इस विषय में बहुत विवाद है। जो लोग श्रसंग को तंत्रयान के प्रारंभिक चरण का पुरस्कर्ता मानते हैं, उनके अनुसार महायान सूत्रालंकार में प्रयुक्त 'परावृत्ति' शब्द योन–योगिक साधना की ओर संकेत करता है। श्रसंग का सूत्रालंकार, साधना की दृष्टि से अत्यधिक महत्वपूर्ण ग्रंथ है। स्पष्टतया यह कहा गया है कि मनोवृत्ति के मेद से विभिन्न प्रकार के विमुत्यों की प्राप्ति होती है। परावृत्ति वे क्रियाएँ हैं जिनसे बौद्ध विमुक्त की प्राप्ति होती है। ये क्रियाएँ भी कई प्रकार की है–पंचेंद्रियपरावृत्ति, मानसपरावृत्ति सार्थोद्ग्रह परावृत्ति, विकल परावृत्ति, प्रतिष्ठापरावृत्ति, मैथुन परावृधि। इस परावृत्ति शब्द के श्रथं पर अत्यधिक विवाद है। प्रो. एस. सिल्वाँ लेवी ने 'मैथुनस्य परावृत्ती' का अनुवाद 'रिवोल्यूशन' या 'केंद्र के चतुर्दिक भ्रमण' या परिवर्तन किया है। उन्होंने स्पष्टतः इसका संबंध बुद्ध और बोधिसत्त्वों के साधनात्मक और रहस्यमय युग्मों से जोड़ दिया है जिनका तांत्रिक मत में अत्यधिक महत्व है। यदि इस अर्थ को स्वीकार कर लिया जाय तो यह मानना होगा कि महायान बौद्ध धर्म में श्रसंगकाल (चतुर्थ–पंचम ईस्वी शताब्दी) में ही तांत्रिक विचारों का प्रवेश हो गया था। एक दूसरा और भिन्न अर्थ डा. विंटरनित्स ने उपस्थित कर लेवी के अर्थ का खंडन किया है। उनकी दृष्टि में परावृत्ति का अर्थ 'विराग करना या किनारे करना या इटाना' है। उन्होंने संबद्ध श्लोकों का अनुवाद कर यह स्पष्ट करने का यत्न किया है कि मैथुन से विरति करने से परम विभुत्व की प्राप्ति वैसे ही हो सकती है जैसे बुद्ध के सौख्य विहारों के भोग से अथवा दारा के ऊपर शुद्ध दृष्टिपात से 13 लंकावतार– सूत्र का परिचय देते समय यह बताया गया है कि श्री सुजुकि ने परावृत्ति का अर्थ विराग, 'आत्मा की श्राकस्मिक जागृति या उत्पाद' किया है। तुलना करना, उसी के समकक्ष मानना, सर्वथा उचित है। जिन उपनिषदों से योग साधना को ग्रहण किया गया, जिस श्रास्तिक परंपरा से निर्विकल्प समाधि को ग्रहण किया गया, उसी परंपरा से परमानुभव और परमावस्था का वर्णन करने की शैली को भी ग्रहण करना सर्वथा स्वाभाविक है।

डा. विनयतोष भट्टाचार्य ने एक अन्य प्राधार पर प्रसंग को तांत्रिक साधना का श्राद्ध आचार्य माना है। उनका कहना है कि असंग गुह्यसमाज– तंत्र या तथा गतगुह्यफ के रचयिता थे। इस बौद्ध तांत्रिक ग्रंथ में भाटकर्म, के पंचमकार तथा सिद्धियों पर विस्तृत उपदेश दिये गए हैं। इनके उपयोग की खुली छूट है। भट्टाचार्य महोदय का कहना है कि इस ग्रंथ की सबसे बड़ी विशेषता है–बौद्ध धर्म में शक्ति तत्व को प्रतिष्ठित करना। बौद्ध धर्म में पंच ध्यानी बुद्धों और उनकी शक्तियों की कल्पना सबसे पहले इसी ग्रंथ ने उपस्थित की। मंजुश्रीमूलकल्प को, उसमें पंचध्यानी बुद्धों का व्यवस्थित प्रतिपादन न होने के कारण, गुह्य समान से पूर्व का मानना चाहिए। डा. भट्टाचार्य ने प्रसंग का समय भी तीसरी ईस्त्री शताब्दी माना है जबकि अन्य अधिकांश विद्वान् चौथी शताब्दी मानते हैं। मंजुश्रीमूलकल्प का समय भी लगभग 7 वीं शताब्दी के बाद ही अधिकांश विद्वान् मानते हैं। चौथी शताब्दी के महायानी श्राचार्य को तांत्रिक श्राचार्य सिद्ध करने के लिये उन्होंने साधनामाला के 'प्रज्ञापारमिता साधन' को प्रसंगकृत माना है। किंतु डा. भट्टाचार्य

के ये निष्कर्ष स्वीकार्य नहीं है। श्रसंग जैसे महायान के महनीय आचार्य से भाटकर्म, पंचमकार, सिद्धियों आदि की खुली छूट देने वाले ग्रंथ की रचना की संभावना करना सर्वथा अनुचित है। चीनी और तिब्बती परंपराओं के आधार पर यह भी कहा जाता है। तांत्रिक बौद्ध साधना और साहित्य कि तुषित लोक में असंग ने मैत्रेय से तंत्र की शिक्षा ली थी। इस प्रकार का कथन केवल संप्रदाय या मत विशेष की महत्ता श्री माहात्म्य को बढ़ाने के लिये ही साधारणतया किया जाता है। श्रसंग गुह्यसमाजतंत्र के रचयिता थे, इसे सिद्ध करने के लिये न कोई परंपरा है और न आधिकारिक और प्रामाणिक विवरण ही। चीनी और तिब्बती में प्राप्त असंग की रचनाओं में भी इस प्रकार की रचना को मैत्रेय से प्राप्त करने का कोई संकेत नहीं मिलता। इस रचना की भाषा भी अन्य तांत्रिक ग्रंथों की भाषा से अत्यधिक निम्न कोटि की है। महायान सूत्रालंकार के रचयिता चाहे मैत्रेयनाथ हों या प्रसंग हो, उससे भी इसकी भाषा की तुलना नहीं की जा सकती है। परावृत्ति शब्द के उपरोक्त विवेचन के आधार पर भी यह कहा जा सकता है कि असंग तांत्रिक साधना के विशेषकर मैथुनयुक्त तांत्रिक साधना के समर्थक नहीं थे और न उन्होंने शक्ति तत्व को ही सबसे पहले बौद्ध धर्म में प्रतिष्ठित किया तांत्रिक साधना के तत्वों का विचार करते समय कुण्डलिनी योग, मंत्र, यंत्र, भाटकर्म, सिद्धियाँ, पंचमकार, हठयोग, अधिकारमेदवाद, गुरुशिष्यवाद आदि तत्वों के साथ शक्ति तत्व को विशेष रूप से ध्यान में रखना चाहिए। डा. विंटरनित्स ने तंत्र शब्द को केवल शक्ति तत्व में ही सीमित कर दिया है। अतः उन्होंने केवल उन्हीं ग्रंथों को तांत्रिक ग्रंथ माना है जो शक्ति–पूजा और शक्ति सिद्धांत का प्रतिपादन करते हैं। ऐसे ग्रंथ, उनकी दृष्टि में सातवीं शताब्दी के पूर्व के सिद्ध नहीं किए जा सकते। उसके प्रमाण में उन्होंने यह तर्क दिया है कि सद्धर्मपुंडरीक और लंकावतार सूत्र जैसे प्रगतिशील वैपुल्य सूत्रों के तांत्रिक तखों वाले अंश, जिनमें धारणियों और मंत्रों के प्रयोग मिलते हैं।[5]

तांत्रिक बौद्ध साधना का विकास तथा वज्रयान

पिछले विवेचन से स्पष्ट है कि महायान के अंतिम दिनों में बुद्ध, श्रमिताभ, बोधिसत्त्व अवलोकितेश्वर, मंजुश्री श्रादि देवताओं की प्रतिष्ठा हो चुकी थी। हारीति, चंडिका, सरस्वती श्रादि देवियाँ भी कल्पित हो चुकी थीं। इन देवताओं की पूजा–उपासना–प्रार्थना के लिये अनेक स्तोत्रों, मंत्रों, धारणियों का निर्माण हो चुका था। बोधिसत्त्व के लिये फरुणा–प्रसार और प्रज्ञा की उपलब्धि आवश्यक मानी गई थी। नागार्जुन के शून्यवाद के व्यावहारिक साक्षात्कार को प्रज्ञा की उपलब्धि से अभिन्न मान लिया गया था। योगाचार मत के श्राचार्य श्रसंग आदि ने विज्ञान तत्व की प्रतिष्ठा कर चित्त को ही इस संपूर्ण संसार की उत्पत्ति और प्रणाश का मूल बतलाया था। बोधिचित्तोसाद की क्रमनिविष्ट प्रक्रिया में समय के अपव्यय तथा शीघ्र प्रज्ञोपलब्धि या प्रत्यात्मगति की प्राप्ति की भावना से धारणियों और मंत्रों को अत्यधिक महत्व दिया जाने लगा था। इन मंत्रों और धारणियों से अर्जित शक्ति की सहायता से प्राणिमात्र के दुःख से समुद्धरण की प्रक्रिया में सदैव लीन रहनेवाले नवीन बोधिसत्त्वों का ग्रभ्युदय होने लगा था। इस प्रकार की धार्मिक और दार्शनिक परिस्थितियों में वज्रयान का विकास हुआ। पहले ही श्रद्वयवज्र के प्रमाण पर यह बताया जा चुका है कि महायान के दो भेद थेकृपारमितानय श्रोर मंत्रनय। संभवतः श्रद्वयवज्र ने बौद्ध तांत्रिक दृष्टि से यह विभाजन किया है। अनुमान है कि लगभग पूर्वी ईस्वी शताब्दी के पूर्व महायान में एक संप्रदाय ऐसा था जो पंचपारमिताओं के अभ्यास को साधनात्मक

जीवन में अत्यधिक महत्व देता था और अंततः प्रज्ञापारमिता को प्राप्ति कराता था। दूसरों का मार्ग वह या जो मंत्रों को तांत्रिक बौद्ध साधना और साहित्य सहायता से बिना संपूर्ण पारमिताओं का प्रयास किए ही प्रज्ञाप्राति की आकांक्षा रखता था। यह प्रायः देखा जाता है कि सामान्य धार्मिक जन सरलता और संक्षेप की ओर अधिक आकर्षित होते हैं। परवर्ती काल में मंत्र तत्व के प्रमुख हो जाने के अनेक कारणों में से यह भी एक कारण माना जा सकता है।श्री एच. फर्न का कथन है कि तारानाथ की सूचनानुसार तांत्रिक साधना की स्थिति पहले भी थी। यह अत्यंत गुप्त रूप से असंग और धर्मकीर्ति के बीच के काल में जीवित रही। किंतु धर्मकीर्ति के बाद अनुत्तरयोग अधिक से अधिक जन–प्रचलित एवं प्रभावशाली होता गया। तत्वतः, श्री फर्न की दृष्टि में, तारानाथ का यह कथन ठीक है।' डा. विंटरनित्स के अनुसार संग का समय चतुर्थ शताब्दी है। फर्न ने प्रसंग का समय 550 ई. तथा धर्मकीर्ति का समय सातवीं शताब्दी का उत्तरार्द्ध' माना है। इस प्रकार इस युग (लगभग 400 ई. से 700 ई. तक) के तीन सौ वर्षों में तांत्रिक साधना गुप्त रूप से गुरु–शिष्य–परंपरा में जीवित रही। इसके बाद अनेक ऐसे सिद्धाचार्य हुए जिन लोगों ने इस साधना को जन साधारण में प्रचलित करना प्रारंभ कर दिया। निस्संदेह, मंत्र–तत्व का प्रचार तो जन सामान्य में श्रवश्य या किंतु शक्तितत्व और पंचमकार (मत्स्य, मुद्रा, मैथुन मांस और मद्य) की साधना अत्यंत गुप्त सीमित श्रोर दीक्षित मंडली में ही चलती रही होगी। समन्वित साधना का जनता में प्रचार सातवीं शताब्दी के बाद हुआ। इसका प्रमाण यह है कि सातवीं शताब्दी के पूर्व का कोई भी ऐसा तांत्रिक बौद्ध ग्रंथ प्राप्त नहीं है जिसमें इन तत्वों का पोषण साधनात्मक, दार्शनिक तथा धार्मिक दृष्टि से किया गया हो। महामहोपाध्याप पं. दरप्रसाद शास्त्री ने नेपाल से एक पोथी पाई थी। नामरहित उस पोथी को शास्त्री जी ने नागार्जुन शिष्य श्रायंदेव लिखित माना है। डा. विंटरनित्स ने श्रार्यदेव को, हेन्त्सांग के प्रमाण पर अश्वघोष, नागार्जुन धीर कुमारलब्ध का समकालीन माना है। यदि शास्त्री जी के कथन को प्रमाण माना जाय तो कहा जा सकता है कि द्वितीय शताब्दी के उत्तरार्द्ध में प्रशोपायसाधना चिचतत्व और रागतत्व की प्रतिष्ठा आर्यदेव ने की थी। मंत्र, मद्य, मांस आदि का भी प्रयोग उस समय विहित था। मातृ–दुद्दितृ संबंध का भी विवेचन उपरोक्त ग्रंथ में मिलता है। इस मंत्रयान के बाद तांत्रिक बोद्ध साधना, धर्म और दर्शन का किस प्रकार विकास हुआ, इस विषय में अनेक मत है। डा. विनयतोष भट्टाचार्य ने परवर्ती बौद्ध मत का विभाजन वज्रयान, फालचक्रयान और सहजयान में किया है। इनके अतिरिक्त कुछ अन्य यान भी हैं जिनका संबंध इस तांत्रिक बौद्ध धर्म से है, जैसे– तंर्त्यान, मंत्रयान, मद्रयान श्रादि, जिनके विषय में कहा जा सकता है कि वे वज्रयान से विकसित हुए। इन तीनों में, उनकी दृष्टि में, बज्रयान प्रमुख है।[6]

वज्रयान का साहित्य और उसका विवेचन

वज्रभावना की प्रतिष्ठा के साथ वज्रयान का श्रारंभ मानना चाहिये।यह वज्र तत्व साधना में ही नहीं दर्शन में भी कालांतर में प्रतिष्ठित हो गया। साधना, धर्म तथा दर्शन में इस तत्व की प्रतिष्ठा से ही पूर्ववर्ती तांत्रिक बौद्ध मत से इसका मेद स्थापित करने में सरलता होती है। देवियों और देव की कल्पना, उनकी विशेषता, चिह्न, अस्त्र–शस्त्र श्राभूषण, वेश–भूषा सबमें महान् परिवर्तन उपस्थित हो गया। श्रेय प्रय, उद्देश्य, साधन, परमतत्व, जीवात्मा, जगत् सबके विषय में इस यान ने अपनी भिन्न मान्यताएँ स्थापित की। दार्शनिक विशेषताएँ और विचार–

धाराएँ शब्दांतर और प्रयोगांतर मात्र से वज्रयान में भिन्न दिखाई देती है। पूर्व विवेचित धार्मिक दार्शनिक और साधनात्मक परंपराओं से पूर्ण वातावरण में वज्रयान का उदय हुआ। पहले ही बताया जा चुका है कि परवर्ती महायान बौद्ध धर्म मंत्रयान का ही विकास है। श्री राहुल सांकृत्यायन ने मंत्रयान को ही विकास और विशेषता की दृष्टि से दो भागों में बाँटा है–

मंत्रयान (नरम)–ई. 400–700 तक।

वज्रयान (गरम)– ई. 800 –1200 तक।'

वास्तव में मंत्रयान और वज्रयान दोनों में पार्थक्य स्थापित करने के लिये कोई स्पष्ट रेखा नहीं खींची जा सकती। मंत्रयान वह यान या मार्ग है जिसमें मंत्रों और धारणियों की सहायता से निर्वाण की प्राप्ति की जाती है। यान वह यान है जिसमें केवल मंत्रों और धारणियों को ही नहीं, अपितु वज्र शब्द से अभिव्यक्त होनेवाली सभी वस्तुओं को भी साधन के रूप में व्यवहृत किया जाता है। वज्र शब्द के भी कई अर्थ हैं। वज्र हीरा है जो सभी प्रकार की कठोर, तप वेश्य, श्रच्छेद्य, श्रदाह्य, श्रविनाश्य वस्तुओं का प्रतीक है। वज्र इंद्रास्त्र को भी कहते हैं जिसको धारण करने वाले बौद्ध पौराणिक कथाओं में वज्रपाणि के रूप में अवतरित हुए हैं। यह संन्यासियों और भिक्षुओं का वह अस्त्र भी है जिससे वे विरुद्ध शक्तियों से युद्ध करते हैं। पूर्ण अनिर्वचनीय स्वतंत्र सत्य के रूप में माध्यमिकों द्वारा वर्णित शून्य तथा योगाचारियों द्वारा पूर्ण परम सत्य विज्ञान या चित, अविनाशी होने के कारण वज्र है। अंततः वज्रयान के कुछ अनुयायियों की रहस्यमयी भाषा में तथा शाक्तों में वज्र का अर्थ पुसेंद्रिय तथा उसी प्रकार पद्म का अर्थ स्त्रोंद्रिय लिया जाता है। इसके अतिरिक्त वज्रयान अद्वैत दर्शन की शिक्षा देता है। इसके अनुसार सभी प्राणी वज्रसत्त्व है और केवल वही सभी प्राणियों में अंतःस्थित हैं। बुद्ध के त्रिकाय के अतिरिक्त इन शाक्तों ने एक चतुर्थ सुखकाय की कल्पना की है जिससे निलय बुद्ध अपनी शक्ति द्वारा या भगवती का ग्रालिंगन करते हैं। यह महासुख बौद्ध शाक्त धर्मानुयायियों के द्वारा उसी प्रकार प्राप्त किया जाता है जिस प्रकार बौद्ध शाक्तों में, जिनके क्रिया– विधान में मांस, मद्य औौर मैथुन विहित हैं। इस प्रकार वज्रयान ने श्रद्वैत दर्शन, भूतबिद्या, शक्तितत्व, पंचमकार तथा राग के साथ संक्षिप्त बौद्ध विचारों का मिश्रण कर एक नवीन मत की स्थापना की। इस मत की स्थापना करने वाले तांत्रिक बौद्ध ग्रंथों को चार कोटियों में विभाजित किया जाता है– क्रियातंत्र, चर्यातंत्र, योगतंत्र, अनुत्तर योगतं विवेचन है। योगतंत्र योगाभ्यास का विवेचन करते हैं तथा श्रनुत्तरयोगतंत्र उच्चतर रहस्यवाद का विवेचन करते हैं। प्रथम में श्रादिकमंप्रदीप, अष्टमी– व्रत विधान, साधनमाला (11वीं शताब्दी), साधनसमुच्चय की गणना की जाती है। पंचक्रम, अनुत्तरयोगतंत्र है। यह गुह्यसमाज या तथागत– गुह्यक का एक ग्रंश है। गुह्यसमाजतंत्र का समय डा. विंटरनिट्स के अनुसार लगभग 7 वीं शताब्दी है। मंजुश्रीमूलकल्प की गणना भी इसी कोटि में की जानी चाहिए। श्रादिक्रमप्रदीप की पद्धति गृह्यसूत्रों की है जिसमें प्रतिदिन हैं की क्रियाओं, ध्यान, दीक्षा, प्रार्थना श्रादि की विधियाँ मिलती हैं। प्रशा– पारमिता ग्रंथों का पठन भी ग्रहण किया गया है। श्रष्टमीव्रतविधान में ब्रतों, मुद्राओं और मंत्रों, मंत्र सहित प्रार्थनाओं (यथा–ह्ह ह्ह' फट् फट्स्वाहा) का प्रयोग केवल बुद्धों और बोधिसत्त्वों के लिए ही नहीं, शैव देवताओं के लिये भी स्वीकार किया गया है। इस कोटि के ग्रंथों में सिद्धि प्राप्त कर सिद्ध बनने की प्रवृत्ति भी दीख पड़ती है। ये साधन मंत्रों और अंगुलियों की मुद्राओं से युक्त हैं। साधक को किसी देवता में ध्यानमग्न होने

की सम्मति दी गई है। इसीलिए इन ग्रंथों में देवताओं के उचित रूप, श्राकार, बण आदि का पूर्ण विस्तार से वर्णन मिलता है जिसका उपयोग मूर्तिकारों और चित्रकारों ने किया है। साधनमाला और साधनसमुच्चय का भी इसी दृष्टि से महत्व है। जिन देवताओं की पूजा–उपासना के लिये इन ग्रंथों में मंत्रादिकों की रचना हुई है, वे हैकृध्यानी बुद्ध, उनके कुल देवी तारा के विभिन्न रूप आदि।[7]

वज्रयान की विचारधाराएँ

अधिकार भेदभाव और बौद्ध तंत्र तांत्रिक बौद्ध धर्म या वज्रयान के साहित्य में जो विशेषताएँ उपलब्ध होती है उनसे स्पष्ट होता है कि तांत्रिक महायान धर्म की साधना एक प्रकार की गुह्य साधना है। गुह्यसमाजतंत्र जैसे ग्रंथ ऐसी गुह्य साधना का विधान करते हैं। ज्ञानसिद्धि जैसे ग्रंथ इस साधना को अधिक से अधिक गुप्त रखने के लिये आदेश देते हैं तथा उल्लंघन पर नरक भोग का दंड भी सुनाते हैं। इन सबके मूल में काम करनेवाला तत्व है– अधिकारमेदवाद। उपनिषदों में नचिकेतस जैसे बलिदानी मुमुक्षुओं और जिज्ञासुओं की कथा अधिकता से मिलती है। श्री पाल डायसन ने उपनिषद शब्द के जो प्रामाणिक अर्थ किए हैं, उनसे यह स्पष्ट हो जाता है कि उपनिषद् विद्या या ब्रह्मविद्या भी गुह्यविद्या है और उसके लिये गुरु के समीप जाकर शिक्षा लेनी पड़ती है। वह भी एकांत विद्या है। आधार पर तांत्रिक साहित्य में भावों और प्रचारों की कल्पना की गई है। यह माना जाता है कि सभी लोग सभी साधनाओं के योग्य नहीं होते। अतः प्रत्येक की शक्ति के अनुसार ही उसके लिये साधन विशेष उपयुक्त है। इसी विचार से साधकों का श्रेणी विभाग किया जाता है तथा प्रत्येक विभाग में प्रविष्ट या दीक्षित होने के लिये नियम बना दिए जाते हैं। इन्हीं आधारों पर साधना की गुह्यता, गुरु की योग्यता, शिष्य की पात्रता, भाव और आचार के विभाजन का विचार किया जाता है। इस विभाजन, बंधन का कारण यह है कि जिस साधना में सिद्धि की चर्चा हो, अनेक अलौकिक शक्तियाँ प्राप्त होती हों।जिनके सुप्रयोग तथा कुप्रयोग से मानव जाति का हित श्रहित, उत्थान पतन, सुख दुःख, शांति श्रशांति का निर्णय होता हो, उनमें भलीभाँति परीक्षित व्यक्तियों को ही दीक्षित होने का अवसर देना चाहिए। इसीलिये वज्रयान के ग्रंथों में गुरु की योग्यता, शिष्य की पात्रता, दीक्षा की कठोरता, साधन– विधि की गोप्यता का विधान मिलता है। साधना की गुह्यता, गंभीरता अनुभव की परिपक्कता आदि के कारण तांत्रिक साधना में गुरु को बुद्ध या शिव से कम महत्व नहीं दिया गया है। पहले ही कहा 'चुका है कि महायान बौद्ध धर्म को प्रकारांतर से हिंदू मत मानना चाहिए। उसी प्रकार वज्रयान को भी विद्वानों ने व्यवहारतः बौद्ध हिंदू धर्म या बौद्ध वेश में हिंदू अथवा शैव मत कहा है। बौद्ध धौर हिंदू दोनों ही तंत्रों में देवी और देवता (शक्ति और देवता) साधनात्मक और दार्शनिक विषयों पर वार्तालाप करते दिखाई देते हैं। बौद्ध तंत्रों में वे मंडलों में क्रियात्मक प्रदर्शन भी करते हैं। देवता का आवाहन करने की शिक्षा गुरु ही देता है। ज्ञान सिद्धि इत्यादि ग्रंथों के विवेचन से स्पष्ट है कि देवता का आवाहन करने के लिये तथा तल्लीनता या अद्वय अवस्था की प्राप्ति के लिये योगिनी या मुद्रा या कुमारी की कल्पना की गई थी। इसी साधना को प्रतीकात्मक ढंग से कहने के लिये योगी और योगिनी के लिये वज्र और पद्म दो प्रतीक चुने गए। उसके आधार पर मंत्र भी बने। ये मंत्र आराध्यावस्था की ओर संकेत करने वाले थे। इनके जप का महाफल भी स्वीकार किया गया। त्रिकाय सिद्धांतों में भी

परिवर्द्धन कर दिया। उनके अनुसार वज्रसत्त्व का वास्तविक काय श्रानंदफाय, सुखकाय या महासुखफाय है। इस प्रकार उन लोगों ने एक चौथे काय की कल्पना की। यही बज्रकाय है। इसी काय से तथागत या भगवान शक्ति या भगवती या तारा से सदैव संपरिश्वक्त रहते हैं। भगवती में सदैव विहार करने वाले रूप की कल्पना की गई। एल. डे ला पुसिन ने इस तत्व को अनेक पुस्तकीय प्रमाणों के साथ उपस्थित किया है। इन वज्रयानियों का यह भी विश्वास था कि पवित्र व्यक्ति के लिये सभी वस्तुएँ पवित्र हैं। इसीलिए लोग अपने आचार में भक्ष्याभक्ष्य, शुचि–श्रशुचि, गम्यागम्य, पेयापेय का विचार नहीं रखते थे। अतः संसार के पदार्थों का भोग करने में आपत्ति की कोई आवश्यकता नहीं। इसी प्रकार के विचार म. इरप्रसाद शास्त्री द्वारा उद्घाटित आर्यदेव की रचना (चिचविशुद्धि प्रकरण 1) में मिलते हैं। इस साधना में दो बातें विशेष ध्यान देने योग्य है। एक तो यह कि तंत्रों में, चक्रपूजा में भी, जिसमें पंचमकारों (मद्य, मुद्रा, मैथुन, मांस, और मत्स्य) के सेवन के लिए छूट हैं, भोग की एक सीमा निर्धारित की गई है। एक तांत्रिक शैव ग्रंथ महानिर्वाण तंत्र में कहा गया है कि सेवन उतना ही करना चाहिये, जितने से चित्त विचलित न हो। वहाँ पूर्णाभिषेक केवल अपनी ही पत्नी के साथ होना उचित माना गया है। दूसरी बात यह है कि गुह्य क्रियाओं का विधान केवल चुने हुए उपासकों के लिये किया गया है। श्री पुसिन का विचार है कि वज्रयान में भी दक्षिणा– चार और वामाचार, नामक दो आचार जीवित थे। उनमें कुछ तो ऐसे थे जो राजयोग को श्राचरणीय मानते थे। कुछ लोग अँगुलियों से बनाई हुई अनेक मुद्राओं को महत्व देते थे। कुछ लोग ज्ञानमुद्रा (मानसिक मुद्रा) की बात करते थे। इस प्रकार की विशेषता से युक्त होने के कारण तथा मंत्र, मुद्रा, मंडल, पंचमकार आदि को प्रश्रय देने के कारण अपनी तथा लोक की नैतिक सुरक्षा के लिये साधकों का श्रेणी विभाग स्वीकार करना आवश्यक था। जिन विद्वानों ने यह स्वीकार किया है कि बुद्ध ने लौकिक जनों की संतुष्टि के लिये लौकिक सिद्धि प्रदान करनेवाले मंत्रादि को अपनी अनुज्ञा दी थी तथा बुद्ध ने बाद में धान्यकटक में कुछ चुने हुए लोगों को वज्रयान का उपदेश दिया, क्योंकि पहले लोगों में इसे ग्रहण करने की शक्ति नहीं थी, उन लोगों का मंतव्य संभवतः यही था कि इस प्रकार की साधना में साधकों का श्रेणी– विभाग आवश्यक है। बौद्ध धर्म में यद्यपि यह दीक्षा तत्व और श्रेणी विभाग तत्व बहुत स्पष्ट रूप में नहीं दिखाई देता, फिर भी वहाँ श्राचारादि के नैतिक विधानों में भेद अवश्य कर दिया गया है। पंचशील और दशशील का भेद इसी दृष्टि से किया गया था। भिक्षु तथा सामान्य गृहस्थ के बौद्ध नियमों में अंतर रखा गया था। बौद्ध के प्रव्रज्या लेने को भी दीक्षा लेने का एक प्रकार ही मानना चाहिए। अनुमान है कि जैसे जैसे बौद्ध धर्म के अनुयायियों की संख्या बढ़ती गई, उसी के साथ बौद्ध भिक्षु और गृहस्थ के अंतर भी बढ़ते गये होंगे। महायान के बौद्ध भिक्षुओं में मंत्रमुद्रादि तत्व धन्य तांत्रिक साधकों के प्रभाव से प्रविष्ट हुए होंगे। बाद में प्रव्रज्या और बिहार में रहकर भिक्षु जीवन व्यतीत करने के नियम और तत्व ने दीक्षा या सेक या अभिषेक का रूप धारण कर लिया होगा। नालंदा के बौद्ध बिहार ने तांत्रिक साधना के प्रसार में बहुत अधिक कार्य किया। वहाँ के बौद्ध भिक्षु आचार्यो ने चीन और तिब्बत आदि देशों में तांत्रिक साधना का प्रसार किया। वज्रयान ने इस दीक्षा या अभिषेक तत्व को अत्यधिक महत्ता दी क्योंकि पंचमकारों के सेवन और भाटकर्म या ग्राभिचारिक कर्मसाधन के लिए ऐसा करना आवश्यक था। इसीलिये श्रद्वयवज्र ने इस वज्रयान को मंत्रनय कहते उसकी

साधना को अत्यधिक गंभीर माना है। इसे तीक्ष्णेंद्रिय– अधिकार–साध्य माना गया है । इन आधारों पर गुरु तत्व की महती प्रतिष्ठा के साथ एक दूसरा कार्य जो वज्रयान ने किया, वह यह था कि उसने अपने सभी देवताओं, देवियों, पूजन सामग्रियों अथवा साधना में प्रयुक्त होने वाले उपकरणों को वज्रांकित कर दिया। तात्पर्य यह कि वज्रयान का साधनात्मक और धार्मिक प्रतीक वज्र है। वास्तव में वज्रयान की साधना दृढ़ता और कठिन परिश्रम की साधना है। मनुष्य के इस सांसारिक जीवन में, उसके उत्थान और पतन के तीन बिंदु उसके शरीर में ही है। कुछ लोग उपासना के क्षेत्र में इन्हें मन, वचन और कर्म कहते हैं। बौद्ध साधना में इन्हें काय वाक् और चित्त कहते हैं।[8]

शाक्त तंत्र का बौद्ध तंत्र साधना पर प्रभावः

शाक्त आगम की साधनाओं के प्रमाण आज से लगभग तेईस सौ वर्ष पुरानी देवी की प्रतिमा मथुरा संग्रहालय में उसके आस–पास के ग्राम से पुरातत्त्व उत्खन्न से प्राप्त हुए थे। समयांतराल से महायानी परम्परा के तांत्रिक बौद्ध सिद्धों ने जो वेदों के जानकार थे और आगम साधनाओं को जानने वाले थे। उन्होंने बुद्धत्व की प्राप्ति के लिए तंत्र साधनाओं का माध्यम लिया और इन साधनाओं, दर्शनों को बौद्ध दर्शन के अनुकूल बनाते चले गये। उपरोक्त कथनों को प्रमाणित करते निम्न महायानी ग्रंथों के विषय वस्तुओं को देखा जा सकता हैं– कल्पना मण्डीतिका, चतुःशतकस्तोत्र, मैत्रेयव्याकरण, जातकमाला, अवदानशतक, कर्मशतक, दिव्यावदान, अवदानकल्पलता जैसे ग्रंथों के अध्ययन से चमत्कार पूर्ण कथा, लोकोत्तरवाद बोधिसत्त्व की उदारता, सिद्धि, बुद्ध की लीला, बुद्ध भक्ति आदि विशेषताऐं आदि दिखाई देती है। इसी प्रकार महायान के प्रसिद्ध वैपुल्यसूत्रों दृअष्टसाहस्रिका प्रज्ञापारमिता, सद्धर्मपुण्डरीक, ललितविस्तर, लंकावतार, सुवर्णप्रभास, गण्डव्यूह, तथागतगुह्यक, समाधिराज और दसभूमीश्वर के अध्ययन से अनेक देवताओं और देवियों की कल्पना ऐंद्रजालिक सिद्ध और शक्तिमान बुद्ध, नमोस्तु बुद्धाय मंत्र, पारमिताओं का माहात्म्य विस्तार, वज्रगर्भ, ध्यान, समाधि, तंत्र प्रभाव, श्रीमहादेवी, सरस्वती आदि देवियों की कल्पना, हारिति, चण्डिका, जैसी शक्तियों की कल्पना का पता लगता है। मूर्ति रचना धारणियों व विभिन्न लोकों की कल्पना एवं मंत्र प्रयोग आदि का भी पता चलता है।'' महात्मा बुद्ध के महापरिनिर्वाण के उपरांत भिक्षुओं काकुछ समुदाय शाक्त परम्परा से प्रभावित दिख पड़ता है। इसी तरह महायानी साहित्य में तांत्रिकता के अंतर्गत मैथुन की साधनात्मक प्रभाव और उनकी प्राचीनता एवं प्रवर्त्तक व पंचमकार (मद्य, मांस, मुद्रा, मत्स्य, मैथुन) का प्रयोग, पंचमकार के अन्य तत्त्वों में मुद्रा का वीराचारगत विकास आदि का प्रयोग आरंभ हो चला था जो सातवींसे नौ वीं शताब्दी में बौद्ध भिक्षुओं द्वारा शाक्त परम्परा के साधनाओं के अनुरूप ही अपने साधनाओं में शक्ति तत्त्व के रूप में स्त्रियों को अपने साधनाओं के विकास में सहगामी बनाने का प्रमाण प्राप्त होने लगता है। इस विषय पर रामधारी सिंह दिनकर ने बौद्ध धर्म पर शाक्त प्रभाव के अंतर्गत विभिन्न उद्धरणों से बौद्धों के तांत्रिक सम्प्रदायों में शक्ति तत्त्वों की समावेश की चर्चा की है जिनमें बौद्ध धर्म में बुद्ध के साथ शक्ति तत्त्वों को स्थापित करने अपने साधना में मुद्रा रूप में स्त्रियों के प्रवेश से बौद्ध धर्म के मूल साधनाओं का स्वरूप पूरा बदल गया आदि को बड़े ही स्पष्ट रूप से प्रस्तुत किया है।[12] इस प्रकार भारतीय आगमिक परम्पराओं के प्रभावों को महायानी ग्रंथों में स्पष्ट देखा जा सकता है। विशेष रूप से महायान धर्म में बुद्ध

की अलौकिक तथा अनेक बोधिसत्वों ने अनेक देवताओं और उनके मण्डलों के विकास में योगदान दिया। तांत्रिक बौद्ध धर्म के अद्वयवज्रसंग्रह में संगृहीत तत्त्वरत्नावली में महायान को दो भागों में विभाजित किया गया है– पारमितानय और मंत्रनय इसी मंत्रयान से कालांतर में वज्रयान, कालचक्रयान, व सहजयान आदि का विकास हुआ। यह अद्वयवज्र द्वारा किया गया विभाजन माना जाता है। जो बौद्ध धर्म में साधनात्मक परिवर्तनों को इंगित करता है। इस विभाजन से बौद्ध मतों में स्पष्ट रूप से तांत्रिक साधनाओं की पूरी परम्परा का विकास बौद्ध धर्म के मूल स्वभाव से विलग प्रतीत होते है।[9]

तांत्रिक शैव साधना एवं वज्रयानी साधना

तांत्रिक शैव साधना में शिव उपास्य है। इन सम्प्रदायों में शिव को पशुपति कहा गया है। पाशुपत मत सबसे प्राचीन माना गया है। जिस प्रकार पशु पाश या रस्सी से बंधकर सीमित हो जाता है। वैसे ही मानव इन्द्रियों, मन, बुद्धि के वशीभूत हो जरा, जन्म, मरण आदि में ही घुमते रहता है। इन शैव साधनाओं में शरीर को प्रथमतः शुद्ध करना, आसन, प्राणायाम, कुण्डलिनी जागरण आदि की साधनाओं से अभेद्य बनाने की साधना निहित थी। साथ ही शिव की प्रतीमा कुण्डलन धारण किये हुए अपने हाथों में डमरू नाद का प्रतीक व त्रिशुल प्रकृति के गुणों से मुक्ति के प्रतीक थे। शैव कापालिकों से बौद्धों के संबंध के विषय में नगेन्द्रनाथ ने विस्तार से उल्लेख किया है। इस प्रकार वज्रयानी बौद्ध साधकों ने शिव के समानान्तर ही अवलोकितेश्वर का रूप दिया व उनकी पूजा भी प्रचलित की थी जिनमें उनके देवता बाघम्बर पहने शिव के प्रतिमा के ही समान है। इसी प्रकार वज्रयानी साधकों ने वज्र का अर्थ ऐसे शरीर की प्राप्ति से लगाया है जो अभेद हो जिसे हर परिस्थितियों व प्रभावों से अप्रभावित हो। वज्रदेह की चर्चा पातंजल योग सूत्र के विभूतिपाद में प्राप्त होता है। जिसके अंतर्गत कायसम्पदा में वज्र जैसे देह जिसमें शरीर सूडौल, निरोगी, सुन्दर और वज्र के समान दृढ़ होना कहा गया है। गोपीनाथ कविराज के अनुसार नाथ योगियों (सिद्धों) के साधनाओं में यह दिख पड़ता है कि देहजय करना अनिवार्य कहा गया है। बौद्ध सिद्धों भी शरीर की मूल सम्पदा कहे जाने वाले वज्रदेह कि ओर, इन विशेषताओं की ओर आकर्षित हुए थे।[16] हठयोग साधना व तांत्रिक बौद्ध सम्प्रदाय सहजयानः हठयोग के साधनाओं में नाथ सिद्ध प्रसिद्ध है। हठयोग के प्रथम मानव सिद्धों में मत्स्येन्द्रनाथ का नाम प्रथम है। जिन्हें सहजयानी 84 सिद्धों में प्रथम लुईपाद के नाम से जाना जाता है।[10]

❐

सन्दर्भ –

1. अद्वयबज्रसंग्रहदृसं. डॉ. विनयतोष भट्टाचार्य, गा. श्रो। सि., पृ. 14 तथा पृ. 21

2. महायानं च द्विविधं पारमितानयो मन्त्रनयश्चेति पृ. 14

3. तीक्ष्णेन्द्रियाधिकाराच्च मंत्रशास्त्रं विशिष्यते पृ. 21

4. तांत्रिक बौद्ध साधना और साहित्य,नागेन्द्रनाथ उपाध्याय रिसर्च फेलो, हिंदी विभाग, कशी हिन्दू विश्वविद्यालय–19–11–1958, पृ.4, महायानं च विधं पारमितानयो मन्नय'चेति पृ.14

5. मेन्युएल आव इंडियन बुद्धिज्म–एच. कर्म, पृ. 133 वही, पृ. 118, 130,
तांत्रिक बौद्ध साधना और साहित्य,नागेन्द्रनाथ उपाध्याय रिसर्च फेलो, हिंदी विभाग, कशी हिन्दू विश्वविद्यालय–19–11–1958, पृ. 101–108

6. पुरातत्व निबंधावली दृ राहुल सांकृत्यायन, पृ. 139, ए. हि. ई. लि., विंटरनित्स, वा. 2, पृ. 387–388

तांत्रिक बौद्ध साधना और साहित्य,नागेन्द्रनाथ उपाध्याय रिसर्च फेलो, हिंदी विभाग, कशी हिन्दू विश्वविद्यालय–19–11–1958, पृ.132–154

7. *दि फिलासफी श्राव दि उपनिषद स–डायसन, पृ.12,, इंसाइक्लोपीढिया श्राव रेलिजन ऐंड एथिक्स–जेम्स हेस्टिंग्स, वा. 12, पृ.193, इस मंत्र की विशेष विस्तृत व्याख्या के लिये द्रष्टव्य–ज. रा. ए. सो., 1915, पृ. 397–404 में 'दि मीनिंग श्राव दि 'ओं मणिपद्मे हूँ', फार्मुला' शीर्षक लेख, ले. पु. एच. फेंके*
8. *दि फिलासफी श्राव दि उपनिषद स–डायसन, पृ.12, इंसाइक्लोपीढिया श्राव रेलिजन ऐंड एथिक्स–जेम्स हेस्टिंग्स, वा. 12, पृ.193*
9. *भारतीय आगमिक परम्पराओं का तांत्रिक बौद्ध परम्पराओं पर प्रभावः एक समीक्षात्मक परिचय 2018, उमाशंकर कौशिक, डॉ. उपेन्द्र बाबू खत्री, डॉ. यतीन्द्रदत्त अमोली,, पृ. 4*
10. *भारतीय आगमिक परम्पराओं का तांत्रिक बौद्ध परम्पराओं पर प्रभावः एक समीक्षात्मक परिचय 2018, उमाशंकर कौशिक, डॉ. उपेन्द्र बाबू खत्री, डॉ. यतीन्द्रदत्त अमोली,, पृ.5*

पाण्डेय राजकुमारी, भारतीय योग परम्परा के विविध आयाम, राधा पब्लिकेशन्स नई दिल्ली, 2008, पृ. 263. आगम और तंत्रशास्त्र, दार्शनिक एवं सांस्कृतिक विवेचन, परिमल पब्लिकेशन्स दिल्ली, 1984, भूमिका बागची प्रबोध चंद, संपादित कौलज्ञाननिर्णय, मेट्रोपोलेटियन प्रिंटिग एण्ड पब्लिशिंग हाऊस, लिमिटेड, कलकत्ता, 1934, भूमिका पृ.13. अर्जुन चौबे अनुवादित काणे पी.वी. रचित, धर्मशास्त्र का इतिहास, पंचम भाग, उत्तर प्रदेश हिंदी संस्थान लखनऊ, पंचम संस्करण, 2014. पृ.10–11

ग्रंन्थ, लेख एवं स्रोत सूची –

1. *श्रद्वयवज्रसंग्रहदृसं. डा. विनयतोष भट्टाचार्य, गा. श्रो। सि., पृ.14, तथा पृ. 21*
2. *'महायानं च द्विविधं पारमितानयो मन्त्रनयश्चेति'दृ पृ. 14*
3. *तीक्ष्णेन्द्रियाधिकाराच्च मंत्रशास्त्रं विशिष्यते दृ पृ. 21*
4. *ट्रांसलेशन ग्राफ दि सूत्रालंकार–सिल्वॉ लेवी, पृ. 81य*
5. *स्टडीज इन दि तंत्रज, भाग 1, डा. प्रबोधचंद्र बागची, पृ. 87*
6. *इं. हि. क्वा., मार्च, 1933, पृ.8*
7. *नोट्स धान दि गुह्यसमाज ऐंड दि एज ग्राफ दि तंत्रज–ले. डा. विंटरनित्स*
8. *गुह्यसमाजतंत्र – सं. विनयतोष भट्टाचार्य, इंट्रोडक्शन, पृ. 16 और*
9. *श्रागे, इंट्री. पृ. 32 डॉ. त्रिसेप तुसी का लेख पृ. 130 इं हि. क्वा., मार*
10. *मेन्युएल आव इंडियन बुद्धिज्म–एच. कर्म, पृ. 133*
11. *वही, पृ. 118, 130*
12. *जर्नल ग्राफ एशियाटिक सोसाइटी श्राव बेंगाल, 1998 ई., वाल्यूम 1,*
13. *पार्ट 2, पृ. 175–184*
14. *हि. इं. लि., वा. 2, पृ. 342*
15. *ज. ए. सो. बॅ., 1898 , वा. 1, पा.2, पृ. 175–184, लोक, द्रष्टव्य– 27, २8, 30, 31, 35–40, 45–50, 77, 84, 94, 97–101, 114, 127*
16. *ई. ए., भट्टाचार्य, पृ. 52–53*
17. *श्री चकसंभारतंत्र–तांत्रिक टेक्स्ट्स, वा. 7*
18. *जेनरल एडीटर आर एवेलेन, एडीटर–काजी दवासम दुप, इंट्रो. 40 32, तथा ग्रान्स्योर*
19. *रिलिजस कल्ट्स–डा. शशिभूषण दासगुप्त, पृ. 24*
20. *दि फिलासफी श्राव दि उपनिषद् स–डायसन, पृ. 12*
21. *तांत्रिक बौद्ध धर्म में लिंग, स्त्री द्वेष और महिला समावेशन 16 अप्रैल, 2020*
22. *वज्रयानियों ने प्राचीन 2.*
23. *इंसाइक्लोपीडिया और रेलिजन ऐंड एथिक्स–जेम्स हेस्टिंग्स, वा. 12, पृ. 193*
24. *ज. रा. ए. सो.,1995, पृ. 397–404 में 'दि मीनिंग आव दि 'ओं मणिपद्मे हूँ फार्मूला शीर्षक लेख ले. ए. एच. फ्रैके*
25. *इं. रे. ए., जे. हे., वा. 12, पृ. 166*
26. *ज. ए. सो. बें, 1898, वा. 1, पा. 2, पृ. 175–184*
27. *इं. हि. क्वा., दिसंबर, 21, सं. 4,*
28. *'पापुलर बुद्धिज्म'दृनलिनाक्ष दत्त,पृ. 248–249*

29. श्रद्वयवजूसंग्रह, प . 21
30. सेकोहेश टीकादृसं. मैरियो ई. करेल्ली, इंट्रो. पृ. 6,
31. ऐन इंट्रोडक्शन टु तांत्रिक बुद्धिज्म–डा. शशिभूषण दासगुप्त, पृ. 80–81
32. इंटरनेशनल जर्नल ऑफ संस्कृत रिसर्च 2018य
33. मिश्र सत्येन्द्र कुमार, रूद्रशिव की वैदिक अवधारणा पाशुपत–सम्प्रदाय के प्रवर्तक एवं आचार्य, इन्टरनेशनल जनरल ऑफ हिंदी रिसर्च, (पु पांजलि), भाग–4, जुलाई 2018. पेज न. 13–16.
34. पाण्डेय राजकुमारी, भारतीय योग परम्परा के विविध आयाम, राधा पब्लिकेशन्स नई दिल्ली, 2008, 1.263.
35. आगम और तंत्रशास्त्र, दार्शनिक एवं सांस्कृतिक विवेचन, परिमल पब्लिकेशन्स दिल्ली, 1984, भूमिका
36. बागची प्रबोध चंद, संपादित कौलज्ञाननिर्णय, मेट्रोपोलेटियन प्रिंटिग एण्ड पब्लिशिंग हाऊस, लिमिटेड, कलकत्ता, 1934, भूमिका पृ.13.
37. अर्जुन चौबे अनुवादित काणे पी.वी. रचित, धर्मशास्त्र का इतिहास, पंचम भाग, उत्तर प्रदेश हिंदी संस्थान लखनऊ, पंचम संस्करण, 2014. पृ.6.

पूर्वदेवा– सामाजिक विज्ञान शोध पत्रिका
वर्ष 29, अंक, 116, जनवरी–मार्च, 2024 पृ. 82–87

UGC Care Listed Journal
ISSN 0974 -1100

दलित कहानिकारों की कहानियों में सामाजिक चेतना

ज्ञानेश्वरी रौतिया
शोधार्थी, इंदिरा कला संगीत विश्वविद्यालय खैरागढ़ (छ.ग.)
Email – gyaneshwariratiya@gmail.com Mob. 9337942098

जातिवाद छुआछूत ऊँच नीच की भावना सामाजिक उत्पीड़न सभी समस्याए सामाजिक समस्याओं के अन्तर्गत आती है। इन सभी पहलुओ पर हिन्दी कहानिकारों ने कहानी लिखे है। सबसे पहले प्रेमचंद जातिवाद और सामाजिक असमानता को अपने कहानियो का विषय बनाया। उन्होने ही सबसे पहले समाज में दलितरे की दुर्दशा पर प्रकाश डाला। जिसका दलित समाज हमेशा ऋणि रहेगा। लेकिन आज का समय परिवर्तन का समय है अब दलित अपनी समस्याओं को स्वंय अभिव्यक्त करने लगे है। पढ़े लिखे वर्ग अंबेडकर चेतना से प्रभावित होकर कहानी लेखन कर रहे है।

हिन्दी दलित कहानियो में गैर दलित कहानियों की तुलना में अधिक यथार्थपरक होती है। दलित कहानिया स्वानुभूति पर आधारित होता है। पारम्परिक कहानियो में यथार्थ के साथ कल्पना का मिश्रण होता है। दलित कहानियो में दलित जीवन का यर्थाथ स्थिति, विरोध, प्रतिरोध, पीड़ा उत्पीडन कलह आदि मुख्य होता है। दलित कहानियो में अस्मिता का स्वर दिखाई देता है। वैसे तो हिन्दी में कहानी लेखन का आरंभ द्विवेदी युग से माना जाता है। किन्तु दलित कहानी का आरंभ आठवी दशक से ज्यादा समृद्ध माना गया है। प्रथम दलित कहानी किसे माना जाए यह विवाद का विषय है फिर भी कहानीकार सतीश की कहानी 'वचनबद्ध' को हिन्दी का प्रथम दलित कहानी मान सकते है। कुछ विचारको का मानता है कि मोहनदास नैमिशराय द्वारा लिखित कहानी सबसे बड़ा सुख को प्रथम दलित कहानी माने है, इसके अलावा कुछ आलोचक डॉ. अंगनो लाल के कहानी संग्रह 'आदिवंश' को हिन्दी का प्रथम कहानी संग्रह मानते है।

हिन्दी दलित कहानी की विकास में राजेन्द्र यादव द्वारा संपादित हंस और कमलेश्वर द्वारा संपादित पत्रिका सारिका का विशेष योगदान रहा। राजेन्द्र प्रसाद के सम्पादक में पत्रिका में दलित विशेषांक प्रकाशित किया गया जिसमे, मोहनदास नैमिशराय, ओमप्रकाश वाल्मीकि, कवल भारती सूरज पाल, चौहान आदि अनेक दलित साहित्यकारों के कहानियों को प्रकाशित किया गया। इस प्रकार से देखा जाए तो 80 और 90 का दशक दलित कहानी के विकास की

दृष्टि से कहानी के माध्यम से दलित समाज के विभिन्न समस्यओ को समाज के सामने लाए। तथा दलित समाज के भोगे हुए यथार्थ को इन कहानीकारो ने विषय वस्तु बनाया।

आज दलित वर्ग शिक्षित हो रहा है और रचना के क्षेत्र में अपना योगदान दे रहे है। आज के सन्दर्भ में देखा जाए तो दलित कहानियों में चेतना के एक ही स्वर नही बल्कि अनेक स्वर दिखाई पड़ता है। ओमप्रकाश वाल्मीकि, मोहनदास नैमिशराय, सुशीला टॉंकभौरे और जयप्रकाश कर्दम, कवल भारती, रजत रानी मीनू, कावेरी आदि ये कुछ प्रमुख दलित साहित्यकार है जिनके कहानियो में सामाजिक चेतना के स्वर दिखाई देता है।

ओमप्रकाश वाल्मीकि का साहित्य मुख्य धरा की जड़ता और बर्बर लोगों की संवेदना शून्यता को तोड़कर उसमें संवेदनशीलता उत्पन्न करने का ताकत रखती है। उन्होनें साहित्य के जड के कारण परंपरागत वर्णवादी साहित्य में जो वर्ग विशेष का अधिकार था इसे नकारते हुए उसके स्थान पर दलित पीड़ित शोषित लोगों को अपने कहानियों के केन्द्र में लाकर प्रभावशाली तरीके से प्रस्तुत किए है।

'सलाम' कहानी में हरीश को विवाह सम्पन्न होने के पश्चात ठाकुरो के घर सलामी ठोकने जाने को कहा जाता है क्योकि यह एक रिवाज होती है कि विवाह के अवसर पर नव विवाहित दलित वर वधु को गैर दलितो के दरवाजे पर जाकर सलाम करना पड़ता था। ठाकुर लोग खैरत में फटे–पुराने कपड़े एक दो रूपय, बर्तन आदि देते थे। हरीश पढ़ा लिखा दलित युवा था वह इसका विरोध करते हुए कहता है। ''मुझे न ऐसे कपड़े चाहिए न बर्तन मै अपरिचितो के दरवाजे सलाम पर नही जाउगां''।[1] ऐसा कहकर वह उस पुरानी परम्परा का विरोध कर समाज को नई दिशा प्रदान कर, सामाजिक चेतना जगाता है।

'अम्मा' कहानी में अम्मा दिन भर दुसरो के घर जाकर साफ सफाई करती, अम्मा सवर्णो के घरो में मैला साफ करने को जाती थी। अम्मा से पहले यह काम उनकी सास करती थी। लेकिन सास का स्वास्थ खराब होने के बाद अम्मा को यह काम करना पडता है। यह काम उन्हे विरासत के तौर पर मिली थी। अम्मा इस पुश्तैनी परम्परा को यही खत्म कर देना चाहती है। अम्मा के अन्दर चेतना जग चुकी है। अम्मा कहती है ''ना मै अपने जातको को इस गंदगी में ना ढकेलूंगी' मिहनत –मजूरी कर लूंगी पर उनके हाथो में झाडू ना दूँगी।''[2] ऐसी सोच दलित समाज को नई दिशा की ओर ले जाती है।

'यह अंत नही' कहानी में कहानी की मुख्य स्त्री पात्र बिरमा में सवर्ण पात्र सचन्दिर के खिलाप आवाज उठाती है। सचीन्दर ने अपने सवर्ण होने का फायदा उठाते हुए बिरमा के इज्जत पर हाथ डालने की कोशिश किया था। इस बात का विरोध करते हुए बिरमा ने सबके सामने बात रखी, उसके भाई किसन और उनके साथी बिरमा को इंसाफ दिलाने कि लिए कानून का सहारा लेना चाहते है। दोनो थाने में सूचीन्दर के खिलाफ रिपोर्ट लिखवाने जाते है। पर थानेदार रिपोर्ट लिखने से मना कर देते है। और कहते है। ''छेडखानी हुई है, बलात्कार तो नही हुआ तुम लोग बात का बतंगड़ बना नही हुआ तुम लोग बात का बतंगड बना रहे हो।' गांव में राजनीतिक फैलाकर शांति भंग करना चाहते हो मै अपने इलाके में गुंडागर्दी नही होने दूँगा चलते बनो''[3] और पुलिस उन्हे मार पिटकर वहा से भगा देते है। लेकिन किसन और उनके साथी, हार

नही मानते और पंचायत में जाते है और पंचायत बुलाया जाता है। पंचायत में यह फैसला सुनाया जाता है कि ''सचीन्दर वल्द तेजभाव ने बिरमावल्द मंगलू के साथ राह चलते छेडखानी करने की कोशिश की भविष्य में ऐसा घटना न हो इसलिए पंचायत सचीन्दर पर पाँच रूपया जुर्माना करती है''[4] इस फैसले से सब दुखी होते है। सभी को दुखी देखकर बिरमा कहती है ''इस हार पर मुँह क्यो लटका रहे हो ये अन्त ना है तुम लोगो ने मेरे विश्वास कू जगाया है इसे मरने मत देना''[5] सभी के चेहरो पर उम्मीद दिखाई दे रही थी मंगलू, सरबती भी उसके साथ आकर मिल गए थे। एक नई उम्मीद के साथ जयप्रकाश कर्दम हिन्दी दलित साहित्य के प्रमुख रचनाकार के रूप में जाने जाते है । अब तक उनके तीन कहानी संग्रह प्रकाशित हो चूके है कहानी लेखन के क्षेत्र में डॉ. जयप्रकाश कर्दम जी की अपनी अलग पहचान है। उनकी अधिकतर कहानियो मे यथार्थपरक होते हुए सामाजिक चेतना दिखाई देती है। उनकी कहानियां न केवल पीड़ा की है बल्कि दलित मुक्ति की सामाजिक चेतना की कामना भी है।

'लाठी कहानी में चौधरी हरिसिंह से पानी छीन लेता है। हरिसिंह के पुछने पर चौधरी उसे लाठी से मारता है। मार खाकर हरिसिंह घर वापस लौट कर आता है तो उसे उसके छोटे भाई ने देखा और उसकी हालत देखकर उसे सहन न हो सका और चौधरी से बदला लेना चाहता है वह लाठी का जवाब लाठी से देने को आगे बढ़ता है और अपनी पत्नी से कहता है कि मेरी लाठी लाकै दे तन्तक घर मे से लौडत्र ये लाठी चला दी उसने खुन पी जाऊँगा साले का''[6]

'तलाश' कहानी में रामबीर सिंह बिदीकर विभाग के अधिकारी थे। जाति के कारण उन्हे अच्छा मकान किराय से नही मिल रहा था। एक दिन सर्वण समझकर गुप्ता ने उन्हे मकान किराये पर दे देता है रामवीर सिंह चूहडी जाति की रामकली से झाडू पोझा और खाना बनवाता था जिससे मिसेस गुप्ता को अच्छा नही लगा। जिसके कारण गुप्ता ने रामवीर से कहा कि वे रामकली से खाना बनवाते है तो मकान खाली करना पडेगा। रामवीर सिंह इसका विरोध करते हुए कहते है ''यदि यह बात है तो मै आपका मकान खाली करने को तैयार हूँ लेकिन जातिगत भेद के आधार पर मै रामवती से खाना बनवाना बंद नही करूँगा।''[7]

'जहर' कहानी में विशंबर तांगा चलाता था अपने तांगे में बैठे ब्राम्हण को तांगे से उतार देते है क्योकि ब्राहमण दलितो की उन्नति पर अपने साथ बैठे सवारियो के साथ जहर उगल रहे थे। विशंबर ब्राहमण से कहता है कि ''इतनी देर से सुन रहा हूँ। तू चमारो के खिलाफ जहर उगल रहा है। अर गालिया दिया जा रहा है। मै भी चमार हूँ। जब चमारो से इतनी नफरत है तूझकू तै चमार के तांगे में भी क्यो बैठता है किसी और भार कस लै आइए। मेरे तांगे बैठकै चमारो को गाली दैवैगा उन्हे कोसेगा तू। ऐ चल उतर तांगे से''[8] इस प्रकार जयप्रकाश कर्दम की कहानियो में समाज के प्रति नई ऊर्जा दिखाई देता है।

मोहनदास नैमिशराय दलित साहित्य के क्षेत्र में अपनी एक अलग पहचाल बनाये है। इसका मुख्य कारण यह है कि उन्होने अपनी रचनाओ में शोषित एवं वंचित दलितो का यथार्थ चित्रण किये है। उन्होने अपनी कहानियो के माध्यम से वंचित तथा दबे हुए को उनका उचित स्थान दिलाने का प्रयास किये है। स्वयं दलित होने के नाते उन्होने जो देखा जो सहा जिसे अनुभव किये उन्ही को अपने कहानियो में स्थान दिये है।

'अपना गाँव' कहानी में रसाली चमार ठाकुर से जबान लडाती है। उसके बदले में अगले हि पल वे लोग बाज की तरह झपट पडे। पहले ठाकुर के मंझले ने झपटा मारा। बाँज पाँच थे और वह अकेली थी। उन्होने उनके साथ दुव्यवहार किये। रसाली चमारो को निरवस्त्र करके गाँव से दुर ले गए भागने की प्रयास करने पर उसे लाठी से मारा गया। ठाकुरों की यह हैवानियत देखकर पूरा गांव इसके विरूद्ध प्रतिशोध लेने के लिए उतारू हो जाता है। वे लोग प्रण करते है कि अब वे ठाकुरो का जुल्म सहन नही करेगे।'' अंधेरे घिरने से पहले उन्होने ऐलान कर दिया। हम अनशन करेगे भूख हड़ताल करेगे। हमारी समाधिया यही बनेगी 'अन्न का एक दाना भी न खाएंगे 'उनके मरने के बाद ही अब गांव के लोग उनकी अर्थियो को कंधा दे। अब और न सहेगे। संयुक्त अहवान था उनका''[9]

कर्ज कहानी में रामदीन महाजनों से कर्ज लिया था। पुरी जिन्दगी वह उनकी गुलामी करके ब्याज तो वूका लिया पर मूल अब भी रह गया था और उसका मृत्यु हो जाता है। उनके दो बच्चे कमला और आकाश उनकी पत्नी का नाम रामप्यारी था। रामदान के मृत्यु के पश्चात महाजन उनके बेटे आकाश से कर्ज चुकाने को कहा अशोक कर्ज चुकाने से इनकार करते हुए कहता है कि ''तुम लोग इन भोले भालो को धर्म का सबक पढ़ाकर कर्ज लेने के लिए मजबू करते हो। उन्हे तैतीस करोड देवताओ के चक्कर में डालकर झूठी धार्मिकता के बहाने उनका शोषण करते हो।''[10] और वह शहर चला जाता है। उसके बाद महाजन ने उनके मां और बहन कमला की इज्जत लूट कर उसकी हत्या कर देता है। इस बात का बदला लेने के लिए अशोक महाजन की हत्या करने को जाता है। और कहता है कि ''नही महाजन मै तुम्हे किसी कीमत पर न छोडूगा मैने अपनी मां और बहन की जलती चिता के सम्मूख कसम खाई थी कि उनकी चिता की आग ठण्डी होने से पहले हत्यारे को मृत्यु के घाट उतार दूँगा।।''[11] और वह आगे बढ़कर उसपे वार कर देता है। ''धाय अंधेरे में डुबे वातावरण को चीरती हुई गोली चलने की आवाज खामोशी से सीने को चीरती हुई निकल गई।''[12] इस तरह अशोक अपने पर हुए जायति का बदला लेकर समाजिक चेतना को जागृत करता है।

'आवाजे' कहानी में दलित अपने हक और अधिकार के लिए आवाज उठाते है। एक दिन आँधी की तरह यह बात उठी हम न जूठने लेगे और न गंदगी साफ करेगें''[13] दलितो में परिवर्तन की आग धीरे–धीरे बढ़ती जा रही थी। फूस में आग की तरह लपलपाती परिवर्तन की भावना दिन पर दिन पकडती जा रही थी ''ठाकुर की बहू को बच्चा हुआ पर मेहतरो के टोले से इस बार कोई नही आया सभी मेहतरो की पंचायत हुई थी जिसमें अधिकांश ने कसम खाई मैला उठाने कोई नही जाएगा जो जाता है उसका हुक्का पानी बंद''[14] दलित समझ चुके थे की आजाद भारत में सभी एक है। न कोई बड़ा न कोई छोटा। ठाकुरो पुराने दिन लद गये अब तुम्हारी ठकुराहट नही चलेगी जिनको तुम अब तक छोटा समझ रहे वे अब छोटे नही आजाद भारत में सब बराबर है।''[15] आज दलित अत्याचार और अन्याय सहने को तैयार नही है उनमें बदलाव आया है नई चेतना जाग गई है।

सुशीला टाकभौरे कहानी के क्षेत्र में अपना विशेष स्थान रखता है। अब तक इनकी चार कहानी संग्रह प्रकाशित हो चुकी है। तथा 2021 तक की पूरी कहानी कथारंग नामक संग्रह में प्रकाशित हो चूकी है। स्वयं दलित होने के नाते उन्होने जो सहा उसी को अपनी कहानी के माध्यम से समाज में नई रोशनी लाने का प्रयास करती है।

संघर्ष कहानी में शंकर बहुत शैतान बालक था रोज स्कूल में कुछ न कुछ सरारत करता ही रहता है। बच्चे उनके नानी को लेकर उसे चिढाते थे। क्योकि उसकी नानी गांव में झाडू लेकर साफ–सफाई का काम करती थी ये सब शंकर को अच्छा नही लगता था जब बच्चे उन्हे चिढ़ाते थे तो वह यह जवाब देता था। ''तुम लोग क्यो मेरी नानी को बुलाते हो? मेरी नानी को बुलाकर जूठन क्यो देते हो? तुम खुद चाहते हो मेरी नानी यह लेती रहे और हम तुम्हारा जूठा खाते रहे तुम जानबुझ कर ऐसा क्यो करते हो? पहले अपने घर के लोगो को समझा दो। मेरी नानी को अब किसी ने बुलाया तो देख लेना, मै तुम सबकी पिटाई करेगा।''[16] शंकर को नानी पर भी गुस्सा आया उसने मन ही मन कहा– ''कितनी बार मना किया हो फिर भी वह मानती नही गलती नानी की भी है''[17] शंकर अपनी नानी को समझाया करता था कि ''भगवान हमारी मदद नही करते है क्योकि भगवान होते ही नही है यदि भगवान होते तो हमे जरूर मिलते हमे अपनी मदद खुद करनी चाहिए''[18] और शंकर मन ही मन यही सोचता रहता है कि ''वह अपनी शक्ति को कैसे बढ़ाये? अपनी साथियो से कैसे आगे बढे अपने दम पर कैसे सम्मान पाये कैसे बडा बने अब शंकर समझने लगा था कि पढाई करने से ही ज्ञान मिलता है। मान सम्मान मिलता है। अच्छी नौकरी मिलती है। इसी से धन दौलत कमाकर बडे बन सकते है''[19] और शंकर का मन पढ़ाई लिखाई में लग जाता है और वह अपने गाँव का अपने जाति का पहला मैट्रिक पास करता है। जिसके कारण पूरे गाँव में उसका मान सम्मान किया जाता है। इस तरह समाज में चेतना जागृत होती है।

'सिलिया' कहानी मे सिलिया एक होनहार लडकी है। कम उम्र में ही उसका विवाह करना चाहते थे लेकिन सिलिया पढ़ाई करना चाहती थी। जब वह कक्षा पांचवी की पढ़ाई के दौरान खेल टूर्नामेंट में गई थी तब वह अपनी सहेली हेमलता ठाकुर के बहन के घर आयी बहन की सास ने हस कर बात की हेमलता को पानी का गिलास दिया और दूसरा गिलास हाथ मे लेकर सिलिया के बारे में पुछने लगी कौन है यह लडकी ठाकुर है क्या मौसी जी सिलिया से जाति पूछी हेमलता ने धीरे से बता दिया जाति का नाम सुनते ही उसने पानी का गिलास वापिस ले लिया। सिलिया को लग रही थी फिर भी वह माँग न सकी तब से उनके मन में जातिवाद को लेकर तरह तरह के विचार आने लगी। तब सिलिया ने कुछ संकल्प किया। ''मै बहुत आगे तक पहूचूंगी पढ़ती रहूंगी। उन सभी परम्पराओ के मूल कारणो का पता लगाउंगी जिन्होने हमे हिन्दू समाज में अछूत बना दिया है मै विद्या बल बुद्धि और विवके से अपने आपको ऊँचा साबित करके रहूँगी किसी के सामने झुकुंगी नही कभी अपना अपमान सहन करूंगी''[20] और उस संकल्प को वह पूरा करती है। जो दलित समाज में चेतना जागृत करती है दलित समाज को नई राह दिखाती है।

जन्मदिन कहानी में मुन्ना प्रेम राठौर के बेटे के जन्मदिन में गया था वहा उसने दो गाड़ी खडी हुई देखा उसने प्रेम राठौर से पूछा ये गाड़ी यहा क्यू रखी गई है। प्रेम भइया कहते है – ''ये मैला गाडिया यहा रखते है इसलिए इस जगह का नाम गाड़ी खाना है। उन्होने यह भी बताया इन गाडियो को चलाने की जिम्मेदारी गोरे लाल की और मेरी है''[21] और कहा कि इस गाडी मे मैला ढोने का काम करते है। इसीलिए इस जगह का नाम गाडीवान रखा गया। मुन्ना को यह बात सुनकर बहुत गुस्सा आया और इस का विरोध करते हुए कहता है ''हमारा देश

स्वतंत्र होकर कितने वर्ष बीत गए फिर भी हम वही के वही है। हमारी आजादी हमे कब मिलेगी? आज तक इन लोगो मे से किसी ने भी यह नही सोचा किसी ने भी इस पुश्तैनी काम को छोड़ने का साहस नही किया हम क्यो उठाये अपने सिर पर दुसरो का मैला? ऐसा आपने क्यो नही सोचा''[22] वास्वत में कहानी में दलित समाज को पराधीन की दलदल से बाहर निकाने के लिए है। जिन्हे सदियो से भारतीय समाज की मुख्य धार में अस्पृश्य और कमजोर बनाये रखा। आज दलित समाज ने महापुरूष बाबा साहब अम्बेडकर की पहचान लिए है। और उनके विचार धारा के अनुरूप चन पढ़ते है। मुन्ना ने निश्चय किया कि ''मै बाबा साहेब के कार्यो और विचारो से अपनी विरादरी को परिचित कराऊंगा उन्हे सच्चाई का ज्ञान कराऊंगा।''[23]

निष्कर्ष रूप में कहा जा सकता है कि दलित कहानियो में समाज में चेतना भरने वाला साहित्य है। दलित कहानिया सामाजिक परिवर्तन की मांग करता है। इनका उद्देश्य है पूर्ण परिवर्तन आज दलित कहानियो के माध्यम से दलित जनता अपने अधिकारो के प्रति सजक हो रहे है। दलित कहानियो में अपनी अस्मिता की पुकार है। अपितु कहा जा सकता है कि दलित कहानियां केवल अपनी पीडा दुख व अन्याय को ही व्यक्त नही करता अपितु समाज में व्याप्त शोषण एवं अन्यायो के विरूद्ध आवाज उठाकर समाज को नई दिशा प्रदान करता है।

❐

सन्दर्भ –

1. *वाल्मीकि, ओमप्रकाश, 'सलाम' कहानी संग्रह, राधा कृष्ण प्रकाशन, दिल्ली, दुसरा संस्करण 2014 पृ. 16*
2. *वही पृ. 118*
3. *वाल्मीकि, ओमप्रकाश 'घुसपैठिये' कहानी संग्रह राधा कृष्ण प्रकाशन, दिल्ली संस्करण 20 पृ. 24*
4. *वही पृ. 28*
5. *वही पृ. 29*
6. *डॉ. कर्दम, जयप्रकाश, तलाश, विक्रम प्रकाशन, दिल्ली, प्रथम संस्करण 2005 पृ. 94*
7. *वही पृ. 28*
8. *वही पृ. 113*
9. *नैमिशराय मोहनदास आवाजे, नटराज प्रकाशन, दिल्ली संस्करण 2022 पृ. 43*
10. *नैमिशराय मोहनदास हमारा जवाब, नटराज प्रकाशन, दिल्ली संस्करण 2022 पृ. 20*
11. *वही पृ. 28*
12. *वही पृ. 29*
13. *नैमिशराय मोहनदास आवाजे, नटराज प्रकाशन, दिल्ली संस्करण 2022 पृ. 16*
14. *वही पृ. 17*
15. *वही पृ. 21*
16. *टाकभौरे सुशीला, कथारंग सम्पूर्ण कहानी संग्रह प्रलेख प्रकाशन, प्रथम संस्करण, 2022, पृ. 17*
17. *वही पृ. 17*
18. *वही पृ 22*
19. *वही पृ. 22*
20. *वही पृ. 51*
21. *वही पृ. 36*
22. *वही पृ. 23*
23. *वही पृ. 28*

पूर्वदेवा– सामाजिक विज्ञान शोध पत्रिका
वर्ष 29, अंक, 116, जनवरी–मार्च, 2024 पृ. 88–99

UGC Care Listed Journal
ISSN 0974 -1100

हरियाणा की आर्थिक स्थिति का विश्लेषणात्मक अध्ययन (1920 - 1947 ई.)

निखिल कुमार
शोधार्थी, इतिहास एवं पुरातत्त्व विभाग, महर्षि दयानंद विश्वविद्यालय, रोहतक (हरियाणा)
Email: nkrc777.rs.history@mdurohtak.ac.in

सारांश

20वीं शताब्दी का पूर्वार्द्ध केवल हरियाणा एवं भारत हेतू ही नहीं अपितु संपूर्ण विश्व के लिए एक परिवर्तनशील, युगांतकारी एवं विभिन्न क्षेत्रों में अनेक नए आयामों को धरातल पर उकेरने वाला समय था। इस दौरान मानवता ने जहाँ एक ओर विश्वयुद्धों एवं स्पेनिश फ्लू जैसी विनाशकारी घटनाओं का सामना किया, वहीं दूसरी ओर इसी समय नई परीपाटी की राजनीतिक धाराओं का उभार एवं वैश्विक आर्थिक–सामाजिक परिदृश्य में सकारात्मक गतिशीलता जैसी रचनात्मक प्रक्रियाएँ भी दृष्टिगोचर हुई। इन परिवर्तनों का प्रभाव भारत जैसे उपनिवेश देश पर भी पड़ा जहाँ परम्परागत तौर पर पिछड़े रहे दलित वर्ग एवं महिलाओं को कुछ राजनीतिक एवं आर्थिक रियायतें हासिल हुई। प्रस्तुत शोध–पत्र का उद्देश्य भारत के हरियाणा क्षेत्र में 1920 से 1947 ई. के दौरान हुए इन्हीं आर्थिक परिवर्तनों को रेखांकित करना है। इस हेतु उक्त कालखंड में अर्थव्यवस्था के विभिन्न क्षेत्रों यथा–प्राथमिक, द्वितीयक एवं सेवा क्षेत्रक का क्षेत्रवार विवरण शोध–पत्र में प्रस्तुत किया जा रहा है। साथ, ही इन क्षेत्रकों के परम्परागत तौर पर पिछड़े रहने के कारणों एवं इस दौरान हुए बदलावों का बिन्दुवार विश्लेषण भी प्रस्तुत किया जा रहा है। तत्पश्चात् इस दौरान अर्थव्यवस्था एवं आधारभूत सरंचना से जुड़े प्राथमिक आंकड़ों का विश्लेषणात्मक विवरण भी शोधपत्र में दिया जा रहा है ताकि उक्त विषय की एक समग्र एवं समावेशी छवि प्रस्तुत की जा सके।

संकेत शब्द :– कृषि अर्थव्यवस्था, ऋणजाल, आधारभूत संरचना, कृषि आधारित उद्योग, रक्षासेवा एवं आर्थिक समावेश।

भूमिका

20वीं शताब्दी के आरंभिक दशकों में वैश्विक परिदृश्य काफी उठापटक भरा रहा था। पूंजीवाद से प्रेरित आर्थिक संसाधनों पर आधिकाधिक आधिपत्य स्थापित करने की होड़ ने

समस्त औपनिवेशिक ताकतों को एक विध्वंसक युद्ध के मुहाने पर लाकर खड़ा कर दिया था। दूसरी ओर पूंजीवाद के विरोध में खड़ी हुई 'आर्थिक संसाधनों पर समान अधिकार' में विश्वास रखने वाली समाजवाद की विचारधारा भी विश्व को अत्यंत गहराई तक प्रभावित करने जा रही थी। फिर अपने स्वार्थों की पूर्ति हेतु उपनिवेशों को जबरन युद्ध में शामिल कर दिये जाने के फलस्वरूप भारत एवं अन्य अनेक उपनिवेश इन परिवर्तनों में सांझीदार बन गए। उदाहरणार्थ, भारत से लगभग 9,43,344 सैनिकों एवं अन्य सहायकों को ब्रिटेन की ओर से प्रथम विश्व युद्ध में भाग लेने के लिए बाहर के क्षेत्रों में भेजा गया था।[1] फलतः भारत के अनेक भागों में दो तरह के प्रभाव दिखाई पड़े। प्रथमतः इन युवकों द्वारा लाई गई नगद राशि के फलस्वरूप इन क्षेत्रों में आर्थिक गतिशीलता एवं बेहतर आर्थिक समावेशिता देखने को मिली। दूसरे इन सैनिकों के युद्ध के मोर्चे पर चले जाने की वजह से महिलाओं सहित अन्य अपरम्परागत वर्गों को पहले से बड़ी भूमिका का निर्वहन करते हुए विभिन्न आर्थिक गतिविधियों में सम्मिलित होना पड़ा, जिससे अंततः उनकी सामाजिक स्थिति में भी सुधार हुआ। भारत में इस प्रक्रिया का सर्वाधिक लाभ संभवतः हरियाणा के क्षेत्र को ही प्राप्त हुआ। ध्यातव्य है कि अंग्रेजी ईस्ट इण्डिया कम्पनी को यह क्षेत्र मराठों से 30 दिसम्बर, 1803 ई. को हुई सर्जीअंजन की संधि से प्राप्त हुआ था। फिर 1833ई. के चार्टर एक्ट के तहत इसे उत्तर–पश्चिमी प्रांत के छह डिविजनों में से एक 'दिल्ली डिवीजन' में शामिल कर दिया गया। तत्पश्चात् 1857ई. के विद्रोह को कुचल देने के बाद अंततः फरवरी, 1858 में इसका विलय पंजाब प्रांत के साथ कर दिया गया।[2] इसी के बाद हरियाणा के क्षेत्र से अधिकाधिक सैन्य भर्ती एवं इनसे उपजे सामाजिक–आर्थिक परिवर्तनों की पृष्ठभूमि तैयार होनी प्रारम्भ हुई जिसका विस्तृत विवरण शोध–पत्र के आगे के हिस्से में प्रस्तुत किया जाएगा। इसी तरह हरियाणा सहित भारत के समस्त हिस्सों में 20वीं शताब्दी के प्रारम्भिक दशकों में राजनीतिक जागृति एवं जनांदोलन की एक नई बयार बहनी प्रारम्भ हो गई थी। इस बयार ने न केवल वंचित वर्गों का राजनीतिक समायोजन किया अपितु उनके आर्थिक अवसरों में भी वृद्धि की। इसका सीधा प्रभाव क्षेत्र की आर्थिक स्थिति पर पड़ा। फिर अंततः पहले 1919ई. के भारत सरकार अधिनियम के तहत प्रांत में 'दोहरी प्रणाली' के अंतर्गत बनी सरकारों तथा फिर 1935ई. के भारत सरकार अधिनियम के तहत बनी 'उत्तरदायी सरकारों' के नेतृत्व में भी क्षेत्र की आर्थिक स्थिति को सुधारने हेतु कुछ प्रयास किये गये। इन प्रयासों में मुख्यतः युनियनिस्ट पार्टी के अंतर्गत बनी उत्तरदायी सरकारों के कार्य ही प्रमुख थे। इन प्रयासों, इनके अतिरिक्त हुए कुछ निजी आर्थिक प्रयासों तथा इनसे उत्पन्न हुई आर्थिक परिस्थितियों का विश्लेषण करने से पहले अत्यावश्यक है कि तत्कालीन आधारभूत ढांचे की स्थिति का अवलोकन किया जाए ताकि अर्थव्यवस्था के विभिन्न क्षेत्रकों की दशा का बेहतर आंकलन किया जा सके।

हरियाणा में आधारभूत संरचना की स्थिति (1920–47ई.)

इस खंड के तहत हम उक्त कालखंड के दौरान हरियाणा में सड़कों, रेलवे, दूरसंचार, बैंकिंग संरचना एवं सिंचाई व्यवस्था के ढांचे का विश्लेषण करेंगे। ध्यातव्य है कि इस समय फैली जागरूकता ने भी खेती, उद्योग एवं सेवा क्षेत्रक के विकास में योगदान दिया था। अतः इस संदर्भ में प्राथमिक–माध्यमिक एवं तकनीकी शिक्षा की स्थिति का अवलोकन भी किया जाएगा।

सड़क मार्ग :– तीव्र गति से सेना के आवागमन, व्यापार के संचालन एवं कानून व्यवस्था की

स्थिति को ठीक बनाए रखने के लिए सड़कों का ठीक दशा में होना अत्यंत आवश्यक था। फिर हरियाणा की स्थिति रणनीतिक रूप से महत्वपूर्ण होने के कारण यह बात और भी जरूरी थी। फलतः 1857ई. के महासमर से पहले ही प्रदेश में पक्की सड़कों का विकास प्रारम्भ कर दिया गया था, जब दिल्ली–अम्बाला–पेशावर की जरनेली सड़क का निर्माण आरम्भ हुआ। लॉर्ड कैनिंग के हस्तक्षेप के पश्चात् इसके करनाल तक के हिस्से को 1864ई. तक पुनः निर्मित किया गया था।[3] इसके पश्चात् दिल्ली से रोहतक, हांसी व हिसार होते हुए फाजिल्का तक एक और मुख्य सड़क का निर्माण किया गया था। वस्तुतः इस मामले में क्षेत्र को दिल्ली से निकटता का अत्याधिक लाभ मिला क्योंकि दिल्ली से आगरा, अलवर व जयपुर जाने वाली तीन प्रमुख सड़कें भी यहाँ से गुजरी। इनके अतिरिक्त अन्य अनेक छोटी व स्थानीय सड़कों का निर्माण व मरम्मत भी इस समय करवाया गया। उदाहरणार्थ–कैथल–पेहवा सड़क, रोहतक–महम सड़क, रोहतक–हांसी सड़क व रेवाड़ी–झज्जर सड़क इत्यादि। वस्तुतः आजादी के समय तक हरियाणा में लगभग 1895 किलोमीटर पक्की सड़कों का निर्माण किया जा चुका था।[4] वर्ष 1950–52ई. के आंकड़ों के अनुसार हरियाणा के विभिन्न जिलों में सड़कों की स्थिति निम्नानुसार थी[5]–

क्रम संख्या	जिला	सड़क लम्बाई (मील में)
1	हिसार	240
2	रोहतक	309
3	गुड़गांव	210
4	करनाल	212
5	महेन्द्रगढ़	30
6	अम्बाला	181
7	**कुल**	**1182**

परन्तु इसके बावजूद हरियाणा के कुछ हिस्सों में तो सड़कों की दशा अत्यंत दयनीय ही बनी रही। उदाहरणार्थ–1947ई. में आजादी के समय भिवानी में कुल 42.73 किलोमीटर ही पक्की सड़क थी।[6] इस स्थिति में आमूलचूल परिवर्तन आजादी तथा फिर हरियाणा के पृथक् राज्य बन जाने के बाद ही आया।

रेलमार्गः– व्यापार एवं सैनिकों की आवाजाही की दृष्टि से रेलमार्ग अत्यंत महत्वपूर्ण थे। इसीलिए सोनीपत होते हुए दिल्ली से अमृतसर लाईन को अक्तूबर 1870ई. तक बना लिया गया था। 1883–84ई. तक दिल्ली से रेवाड़ी–भिवानी होते हुए हिसार तक लाईट ट्राम दौड़ने लगी थी। इसी तरह 1891ई. में दिल्ली–अम्बाला–कालका लाईन व 1904ई. में रेवाड़ी–कलेरा व अम्बाला–सहारनपुर लाईन भी शुरू हो गई। परन्तु इसमें मुख्य सुधार एकवर्थ समिति की सिफारिश पर 1925ई. के बजट से प्रारंभ हुए पृथक् रेल बजट के माध्यम से ही हुआ।[7] इसके तहत पहले 1927 ई. में रोहतक–पानीपत रेललाईन शुरू हुई तथा फिर 1941 तक दिल्ली–बीकानेर लाईन के अंतर्गत आने वाले सादुलपुर–लोहारू व सादुलपुर–रेवाड़ी के हिस्से को भी शुरू कर दिया गया। परन्तु ध्यातव्य है कि प्रारम्भ में तो यह मुख्यतः एक औपनिवेशिक उपकरण ही बनी रही परन्तु आजादी के बाद के समय में इसने क्षेत्र के विकास में महत्वपूर्ण भूमिका अदी की।

बैंकिंग ढांचा :– कृषि एवं उद्योगों के विकास एवं ऋणजाल से मुक्ति के संदर्भ में इसका विकास अत्यंत महत्वपूर्ण था। हरियाणा में इसकी शुरूआत सिरसा सेंट्रल को–ऑपरेटिव बैंक खुलने से हुई। फिर ये प्रदेश के लगभग हर क्षेत्र में फैल गई। उदाहरणार्थ– 1937–38ई. में पानीपत में इन सोसाइटियों ने बुनकरों को 6500/– रूपये ऋण के रूप में दिए थे। इसी तरह महेन्द्रगढ़ में 1941ई. तक इनकी संख्या 31 थी जो 1951ई. में बढ़कर 297 हो गई थी।[8] गुड़गांव में भी 1944ई. में 4 केन्द्रीय व 852 प्राथमिक कृषि ऋण समितियां कार्यरत थीं।[9] इन समितियों का विकास आजादी के बाद भी जारी रहा। 1964ई. तक इन कृषि ऋण समितियों की स्थिति का विवरण अग्रलिखित है–[10]

क्रं.सं.	जिला	समिति संख्या	सदस्य संख्या
1	हिसार	1216	86,689
2	रोहतक	937	64,197
3	गुड़गांव	1555	83,418
4	करनाल	1216	74,035
5	महेन्द्रगढ़	490	43,248
6	अम्बाला	1043	59,422
7	जींद	368	40,698
	कुल	**6825**	**4,51,677**

बेहतर तकनीक व संसाधनों हेतु वित्त पोषण एवं कर्जमुक्ति में इन समितियों ने महत्वपूर्ण भूमिका निभाई। इनके अतिरिक्त इस कालखंड में दूरसंचार, सिंचाई एवं शिक्षा से जुड़ी स्कूली एवं संस्थात्मक अवसंरचना के विकास हेतु भी कुछ प्रयास किये गए थे। इन अवसंरचनात्मक पहलों का विवरण शोध–पत्र के आगे के प्रासंगिक भागों में प्रस्तुत किया जाएगा। अब हम क्रमवार ढंग से उक्त कालखंड में हरियाणा के विभिन्न आर्थिक क्षेत्रकों की स्थिति का विश्लेषण करेंगे।

1920–47ई. के दौरान हरियाणा में प्राथमिक क्षेत्रक अर्थव्यवस्था की दशा

भारतवर्ष प्रारम्भ से ही कृषि प्रधान प्राथमिक क्षेत्रक अर्थव्यवस्था वाला देश रहा था। अतएव हरियाणा क्षेत्र की आर्थिक स्थिति में भी प्रमुख हिस्सेदारी प्राथमिक क्षेत्रक की ही बनी हुई थी। परन्तु इसके बावजूद भी ब्रिटिशकाल में कृषि एवं इसकी सहायक गतिविधियों यथा– पशुपालन का अपेक्षित विकास नहीं हो पाया था। इस परम्परागत अल्पविकास हेतु मुख्यतः तीन कारक उत्तरदायी थे। प्रथम, भू–राजस्व की दर अत्यधिक होना जिसके कारण जहाँ एक ओर कृषक अपनी भूमि की गुणवत्ता में सुधार हेतु निवेश नहीं कर सकता था वहीं दूसरी ओर उसके ऋणचक्र में फंसने की संभावनाएं भी बढ़ जाती थी। दूसरा, कृषि हेतु परम्परागत तौर–तरीकों का इस्तेमाल किया जाना तथा आधुनिक कृषि हेतु अपेक्षित उपकरणों एवं कृषि शिक्षा व अनुसंधान का उपलब्ध न हो पाना। ऐसे ही तीसरा महत्वपूर्ण कारक था– भौगोलिक तौर पर हरियाणा का प्राकृतिक जल–विभाजक रेखा पर अवस्थित होना। जिसके फलस्वरूप यहाँ

सिंचाई के साधनों के पर्याप्त विकास के बिना खेती से अपेक्षित उपज प्राप्त नहीं की जा सकती थी। कुओं के माध्यम से सिंचाई करने हेतु 1915ई. तक हरियाणा में कुओं की अल्प स्थिति को अग्रलिखित तालिका के माध्यम से समझा जा सकता है–[11]

क्रं.सं.	जिले का नाम	खुदे हुए कुओं की संख्या	आपूर्ति बढ़ाए गए कुओं की संख्या
1	गुड़गांव	54	45
2	हिसार	01	01
3	करनाल	14	09
4	अम्बाला	15	07
	कुल	**84**	**62**

इस तालिका में कुओं की संख्या में क्षेत्रवार अंतर को स्पष्टतः देखा जा सकता है, जिसका मुख्य कारण भू–जल स्तर का अंतर था। परन्तु 20वीं शताब्दी के प्रारम्भिक दशकों से स्थिति में कुछ परिवर्तन दिखाई देना प्रारम्भ हुआ। फिर प्रथम विश्व युद्ध में क्षेत्र की अत्यधिक संलिप्तता ने भी प्राथमिक क्षेत्रक पर मिले–जुले प्रभाव छोड़े जो इस प्रकार थे–

- भर्ती करवाने में ब्रिटिशों की सहायता करने वाले वर्गों को न केवल अनेक उपाधियां बांटी गई बल्कि उन्हें अनेक जागीरें एवं मुरब्बे भी प्रदान किए गए जिससे इस उच्च वर्ग की आर्थिक स्थिति और मजबूत हुई।
- युद्ध हेतु अनेकों युवकों के बाहर जाने के फलस्वरूप जहाँ एक ओर वंचित वर्गों व महिलाओं को आर्थिक गतिविधियों में सम्मिलित होकर अपना सशक्तिकरण करने का मौका मिला, वहीं दूसरी ओर इसके तथा अनाजों के अनावश्यक निर्यात से क्षेत्र में महंगाई अत्यधिक बढ़ गई जिसे आगे दी जा रही तालिका से समझा जा सकता है–[12]

क्रं.सं.	वस्तु का नाम	1914 से 1919ई॰ के दौरान दामों में हुई वृद्धि (प्रतिशत में)
1	गेहूँ	47 %
2	चीनी	65 %
3	भारतीय कपड़ा	100 %
4	यूरोपीय कपड़ा	175 %

- इन बढ़ी हुई कीमतों के फलस्वरूप सेना में कार्यरत नवयुवकों द्वारा भेजी गई अधिकतर नकद राशि दैनिक जीवन की जरूरतों को पूरी करने में ही खप गई तथा उसका कृषि एवं उद्योगों के विकास हेतु अधिक लाभकारी निवेश नहीं किया जा सका।
- युद्ध के दौरान एवं उसके बाद के काल में पशुओं की मांग में वृद्धि हुई। ऐसे ही युद्धजन्य वस्तुओं के निर्माण हेतु आवश्यक कच्चे माल की पूर्ति के लिए कृषि के

व्यवसायीकरण पर बल दिया गया। फलतः इससे हुई पशुपालन व नगदी फसलों की वृद्धि का कुछ लाभ नहर द्वारा सिंचित क्षेत्र में रहने वाले लोगों को अवश्य प्राप्त हुआ।

इस प्रक्रियात्मक विकास के अतिरिक्त इस दौरान कुछ सरकारी एवं निजी प्रयास भी प्राथमिक क्षेत्रक की उन्नति हेतु किए गए। इन प्रयासों में अग्रणी थी– 1920–21ई. के दौरान गुड़गांव में डिप्टी कमिश्नर एफ.एल. ब्रेन के सुधारवादी कार्य तथा युनियनिस्ट सरकारों द्वारा कृषकों की ऋणजाल मुक्ति एवं आपदा राहत हेतु उठाए गए कदम।

वस्तुतः लोगों की गरीबी, कृषि की दुर्दशा एवं स्वास्थ्य की गिरावट जैसे चिन्हों से चिंतित ब्रेन ने कई परीक्षण किए तथा उनके परिणामों को 'गुड़गांव योजनाओं' के नाम से लोगों के समक्ष रखा। इस योजना का मुख्य उद्देश्य कृषि को उन्नत एवं आधुनिक बनाना ही था। इस हेतु उसने अच्छे किस्म के बीज, उन्नत किस्म के कृषि यंत्र और औजार, आधुनिक ऋण संस्थाएं एवं जागरूकता हेतु शिक्षा संस्थान कृषकों को प्रदान किए। साथ ही उन्हें अपव्यय रोकने एवं साफ–सफाई रखने हेतु भी प्रेरित किया गया। 1921ई. से 1927ई. के बीच चले इस अभियान ने क्षेत्र की प्राथमिक क्षेत्रक की अर्थव्यवस्था में क्रांतिकारी परिवर्तन ला दिया। गुड़गांव जिले के अंदर हुए इन परीक्षणों एवं उससे उत्पन्न हुए उत्साहपूर्णक परिणामों का वर्ष 1921ई. व 1927ई. के बीच तुलनात्मक विवरण अग्रलिखित तालिका के माध्यम से प्रस्तुत किया जा रहा है–[13]

क्र.सं.	**उपलब्धि का विवरण**	**संख्या** (1921ई॰में)	**संख्या** (1927ई॰में)
1.	उत्तम नस्ल के सांड	8	557
2.	हल (लोहे के)	0	1600
3.	पर्सियन व्हील(रहट, लोहे के)	0800	
4.	नई किस्म के गेहूँ के अधीन भूमि	0 (एकड़)	36750 एकड़
5.	खाद के गड्डे	0	40000
6.	सहकारी संस्थाएँ	153	822
7.	सहकारी संस्थाओं के सदस्य	3303	19126

इन प्रयासों से उपजे सकारात्मक परिणामों एवं लोगों की आधारभूत समझ में हुई वृद्धि ने न केवल तात्कालिक तौर पर क्षेत्र की आर्थिक उन्नति की अपितु आगामी समय हेतु भी गुड़गांव क्षेत्र की आर्थिक तरक्की हेतु एक सुदृढ़ लाँच पैड के रूप में कार्य किया। वहीं दूसरी ओर युनियनिस्ट सरकारों द्वारा कृषक उत्थान हेतु उठाए गए कदमों की यदि बात करें तो इनमें आर्थिक मंदी एवं प्राकृतिक आपदाओं के दौरान भू–राजस्व में छूट प्रदान किया जाना, किसानों को ऋणजाल के कुचक्र से बाहर निकालने हेतु कानूनी प्रयास किया जाना तथा कृषकों की आय में वृद्धि करवाने हेतु कृषि आधारित कुटीर उद्योगों के विकास पर बल देना प्रमुख थे। इन सभी प्रयासों में युनियनिस्ट पार्टी के हरियाणा क्षेत्र के कद्दावर नेता चौधरी छोटूराम का प्रमुख योगदान रहा था। उदाहरणार्थ सरकार ने आर्थिक मंदी एवं 1932–33 ई. में आई बाढ़ के दौरान खरीफ की फसल हेतु भारी मात्रा में कर माफी की। इसका जिलेवार विवरण इस प्रकार है–[14]

क्र.सं.	जिले का नाम	माफ की गई राजस्व राशि (रूपये में)
1.	हिसार	46341
2.	गुड़गांव	143674
3.	करनाल	215182
4.	रोहतक	264885

ध्यातव्य है कि ब्रिटिश सरकार भू–राजस्व की नगद वसूली करती थी जिससे एक ओर तो भूमि सुधारों पर राशि खर्च नहीं हो पा रही थी तथा दूसरी ओर साहूकारों की अनिवार्य उपस्थिति के फलस्वरूप किसान ऋणजाल के कुचक्र में फंसकर अपनी भूमि गवाँ रहे थे। अतएव 1937ई. के चुनावों के बाद बनी उत्तरदायी युनियनिस्ट सरकार के 1938ई. में दो अधिनियम (पंजाब एक्ट, 1938 संख्या 5, सैक्शन 3 एवं पंजाब एक्ट, 1938, संख्या 10) लाकर पहले तो कृषि भूमि की बेनामी खरीद पर रोक लगा दी तथा फिर एक अन्य अधिनियम *रेस्टूट्युशन ऑफ मर्ज्ड लैंड एक्ट*, 1938 लाकर 18 जून 1909ई. से पहले के कर्जे माफ कर दिए एवं एक कर्ज निवारण बोर्ड बनाकर साहूकारों हेतु लाईसेंस लेना अनिवार्य कर दिया।[15] साथ ही किसानों की आर्थिक जरूरतों को पूरा करने हेतु पहले से चली आ रही कृषि सहकारी समितियों को और सशक्त करना प्रारम्भ कर दिया। इन सहकारी ऋण समितियों की भूमिका का विस्तृत विवरण पीछे दिया जा चुका है। ध्यातव्य है कि क्षेत्र में बाद के समय में विकसित हुई कुछ नहर सिंचाई प्रणालियों की अग्रिम योजनाएँ भी इसी समय बननी प्रारम्भ हो गई थी। इस तरह यदि देखें तो 1920 से 1947ई. के बीच का यह कालखंड हरियाणा क्षेत्र में प्राथमिक क्षेत्रक की गतिविधियों के विकास हेतु अत्यंत महत्वपूर्ण साबित हुआ तथापि इससे क्षेत्र की समस्त आर्थिक समस्याओं का निवारण नहीं हो सका एवं सरकार व लोगों को द्वितीयक क्षेत्रक में विशेषतः कृषि आधारित उद्योगों के विकास की ओर भी ध्यान केन्द्रित करना पड़ा। इसका विस्तृत ब्यौरा आगे के भाग में दिया जा रहा है।

1920ई. से 1947ई. के दौरान हरियाणा में उद्योग क्षेत्र की दशा

परम्परागत तौर पर यदि देखें तो हरियाणा के क्षेत्र में उद्योगों की दशा अत्यंत डावांडोल रही थी। इसका मुख्य कारण क्षेत्र में कच्चे माल की अनुपलब्धता थी। फिर कच्चे माल का आयात कर उद्योग चलाना काफी अलाभकारी होता था। साथ ही आर्थिक पिछड़ेपन व लैंडलॉक्ड होने के कारण क्षेत्रवासियों के पास उद्योग लगाने हेतु पर्याप्त पूंजी भी नहीं होती थी। इसी तरह तकनीकी शिक्षा के अभाव व औपनिवेशिक सरकार की भेदभावपरक नीतियों के चलते भी क्षेत्र में उद्वोगों का विकास नहीं हो सका था। ध्यातव्य है कि नगरों का आकार छोटा होने के कारण जो उद्योग लगे भी वो भी बड़े आकार के ना होकर घरेलू वर्कशॉप मात्र ही थे। इन्हीं का दुष्परिणाम था कि 1879ई. में पंजाब प्रांत में कुल 12 पंजीकृत औद्योगिक कम्पनियां थीं जिनमें से एक भी हरियाणा के क्षेत्र में कार्यरत नहीं थी।[16]

परन्तु 20वीं शताब्दी के प्रारम्भ में ही यह स्थिति बदलनी प्रारम्भ हो गई थी। सर्वप्रथम तो राष्ट्रीय आंदोलन के बढ़ते प्रभाव की वजह से स्वदेशी का खूब प्रचार हुआ। फलतः हथकरघे से बने सामान के केन्द्र खूब पनपने लगे। पानीपत की अनेक छोटी खड्डियों में बनी बेहतरीन दरी, खेस व चादर इत्यादि इसी का उदाहरण थे।[17] इसके पश्चात् प्रथम विश्व युद्ध जनित मांग

ने परिस्थितियों को चमत्कारिक तौर पर परिवर्तित करना प्रारम्भ कर दिया। साथ ही, प्रथम विश्व युद्ध से लौटे लोगों की पूंजी, ज्ञान, कौशल एवं अनुभवों ने भी उद्योगों की स्थिति को सकारात्मक रूप से प्रभावित किया। आगे फिर 6 नए तकनीकी प्रशिक्षण संस्थानों की स्थापना के बाद तकनीकी कौशल युक्त कामगारों की उपलब्धता भी हो गई। अंत में युनियनिस्टों के अंतर्गत बनी सरकारों से मिले औद्योगिक ऋण एवं गारंटी सहयोग के वादों के पश्चात् प्रदेश में उद्योगों के विकास हेतु उर्वर भूमि बननी प्रारम्भ हो गई। वस्तुतः सर छोटूराम सहित युनियनिस्ट पार्टी के समस्त नेतागण भी 1916ई. के 'इंडियन इंडस्ट्रियल कमीशन' की सिफारिशों की तर्ज पर क्षेत्र में कृषि आधारित उद्योग लगाने की ओर ही अधिक झुकाव रखते थे। उपरोक्त वर्णित परिदृश्य के आलोक में क्षेत्र की औद्योगिक इकाईयों का क्रमवार एवं क्षेत्रवार विवरण आगे दिया जा रहा है।

- **सूती वस्त्र उद्योग** :– पंजाब एवं उससे संलग्न इलाकों में कपास का अच्छा उत्पादन होता रहा था। फिर प्रथम विश्व युद्ध द्वारा उत्पन्न मांग को पूरा करवाने के लिए सरकार ने भी अपनी हस्तक्षेप की नीति को छोड़कर इन उद्योगों को प्रोत्साहन देना शुरू कर दिया। फलतः सर्वप्रथम घरेलू स्तर पर सूत कताई की इकाईयां लगनी प्रारम्भ हुई। फिर आगे 1928–32 ई. के दौरान मंदी एवं अकाल के समय में हांसी, हिसार व फतेहाबाद में 16 कताई केन्द्र लगाए गए, जिनमें 6000 से अधिक लोग कार्यरत थे।[18] इसी तरह भिवानी में भी 1938ई. में 2 बड़ी कपड़ा मिल स्थापित की गई। इनमें पहली थी–श्री घनश्याम दास बिड़ला की भिवानी कॉटन मिल तथा दूसरी थी– पंजाब कॉटन मिल्स की एक इकाई। बाद में भिवानी में ही श्री बिड़ला द्वारा 1943ई. में तकनीकी संस्थान खोलकर उसे भिवानी कॉटन मिल्स के साथ जोड़ दिया गया ताकि कुशल विशेषज्ञों की कमी को दूर किया जा सके।[19] आगे फिर द्वितीय विश्व युद्ध के समय मांग की पूर्ति हेतु इनमें बिजली चलित मशीनों को भी प्रतिस्थापित किया गया।
- **ऊनी वस्त्र उद्योग**– इसके मुख्य केन्द्र सिरसा, हिसार, पानीपत एवं रोहतक थे जहाँ लोई, कंबल एवं शाल का निर्माण किया जाता था। ध्यातव्य है कि द्वितीय विश्व युद्ध के दौरान जब सैनिक मांग दस हजार कंबल प्रतिदिन तक पहुँच गई तो इसने न केवल इस उद्योग को ही बढ़ावा दिया अपितु हरियाणा एवं राजस्थान के क्षेत्र में पशुपालन को भी बढ़ावा दिया। इन पशुओं से ऊन की आपूर्ति को सुनिश्चित करने में पीछे वर्णित सड़कमार्गों की अत्यधिक महत्वपूर्ण भूमिका का निर्वहन किया साथ ही बैंकिंग अवसरंचना ने इन बुनकरों एवं कारीगरों हेतु आवश्यक वित्त उपलब्ध करवाने में अग्रणीय भूमिका निभाई।
- **चमड़ा व चीनी उद्योग**– 1937ई॰ के चुनावों में युनियनिस्ट पार्टी की सरकार बनने के पश्चात् अपनाई गई उदार नीतियों के फलस्वरूप हरियाण के ग्रामीण इलाकों में भी चमड़ा उद्योग लगने प्रारम्भ हो गए। तत्पश्चात् सिरसा एवं हिसार इसके दो सबसे प्रमुख केन्द्र बनकर उभरे।

  इसी तरह चीनी उद्योग भी छोटे स्तर पर तो 1930 के दशक से ही लगने प्रारम्भ हो गए थे। परन्तु इन उद्योगों में व्यापकता आजादी के समय के आस–पास ही आनी शुरू हुई। इस दौरान 1947ई. में सरस्वती औद्योगिक सिंडिकेट मिल्स लिमिटेड ने अपनी

सरस्वती चीनी मिल यमुनानगर में खोली। इसका मूल कारखाना लाहौर में 1933ई. में खोला गया था। हरियाणा के अलावा यह मिल पश्चिमी उत्तर प्रदेश के किसानों के गन्नों को भी आकृष्ट करने लगी। आजादी के कुछ समय पश्चात् रोहतक में भी एक चीनी मिल की स्थापना की गई।

- **अन्य उद्योग एवं उनके केन्द्र**– पीछे वर्णित प्रमुख उद्योगों के अतिरिक्त शेष गौण उद्योगों के प्रमुख केन्द्रों का विवरण अग्रलिखित तालिका में प्रस्तुत किया जा रहा है–

क्र.सं.	उद्योग का नाम	प्रमुख केन्द्र
1.	चूड़ी उद्योग	पानीपत एवं करनाल
2.	शीशा उद्योग	अम्बाला एवं कुरूक्षेत्र
3.	सीमेंट उद्योग	डालमिया सीमेंट लिमिटेड, दादरी
4.	तांबा–पीतल बर्तन उद्योग	रेवाड़ी, जगाधरी, पानीपत

उपरोक्त विवरण के आलोक में 1950–51 ई. तक हरियाणा में कुल पंजीकृत उद्योगों की प्रमुख जिलों में स्थिति को आगे दी जा रही तालिका के माध्यम से समझा जा सकता है–[20]

क्र.सं.	जिले का नाम	कुल पंजीकृत उद्योगों की संख्या
1.	अम्बाला	215
2.	रोहतक	27
3.	करनाल	88
4.	हिसार	33
	कुल	**360**

इन सबके बावजूद भी आजादी के समय तक हरियाणा में औद्योगिक विकास की स्थिति बहुत अच्छी एवं क्षेत्रवार संतुलित नहीं थी। उदाहरणार्थ– अम्बाला क्षेत्र में तो उद्योगों का संतोषजनक विकास हो गया था, परन्तु महेन्द्रगढ़ एवं उससे संलग्न क्षेत्रों में उद्योगों का अति अल्पविकास ही हो सका था। किन्तु हाँ इन प्रारम्भिक प्रयासों ने क्षेत्रवासियों को आगे के औद्योगिक दौर हेतु प्रशिक्षित अवश्य ही बना दिया। आजादी के बाद के वर्षों में भी हरियाणा क्षेत्र की औद्योगिक स्थिति में बदलाव की गति थोड़ी तीव्र तो अवश्य हुई। परन्तु पृथक् प्रांत बनने तक यह अपेक्षाकृत कम ही जान पड़ती है। इसका विकास मुख्य तौर पर हरियाणा के पंजाब से पृथक् हो जाने के पश्चात् विकसित हुए फरीदाबाद, बहादुरगढ़ व धारूहेड़ा जैसे नए औद्योगिक नगरों के माध्यम से ही हो सका।

हरियाणा में तृतीयक अर्थात् सेवा क्षेत्रक की स्थिति (1920–47 ई.)

उक्त कालखंड के दौरान हरियाणा क्षेत्र के सेवा क्षेत्रक में सबसे अहम् योगदान ब्रिटिश भारतीय सेना में भर्ती हुए सैनिकों, व्यापार सेवा, शिक्षा सेवा एवं आधुनिक शिक्षा की बदौलत उपजे लिपिक व राजस्व कर्मचारी वर्ग का था। वस्तुतः प्रथम विश्व युद्ध के दौरान भारी संख्या में युवाओं को सेना में भर्ती करके फ्रांस, पूर्वी अफ्रीका, मेसोपोटामिया, इजिप्ट, गैलीपोली, सलोविका, अदन खाड़ी व पर्शियन खाड़ी जैसे मोर्चों पर भेजा गया था। इनमें काफी संख्या में गैर–लड़ाकू मजदूर भी शामिल थे, जिन्होंने ब्रिटिश सेना को लॉजिस्टिकल समर्थन देने में अहम् भूमिका निभाई थी। इनका औसत वेतन लगभग 18 से 20 रूपये प्रतिमाह होता था। इस

नगद धनराशि ने क्षेत्र की आर्थिक उन्नति में अहम् योगदान दिया जिसका विश्लेषण पीछे किया जा चुका है। प्रथम विश्वयुद्ध के दौरान हरियाणा के विभिन्न क्षेत्रों से हुई जनशक्ति की भर्ती को आगे दी गई तालिका से समझा जा सकता है—[21]

क्र.सं.	क्षेत्र का नाम	भर्ती की गई जनशक्ति की संख्या
1	रोहतक	22144
2	गुड़गांव	18867
3	हिसार	15461
4	अम्बाला	8341
5	जींद	7238
6	करनाल	6563
7	दुजाना	273
8	लोहारू	159
9	पटौदी	108
	कुल	**79144**

इसी प्रकार द्वितीय विश्वयुद्ध के दौरान हरियाणा से हुई भर्तियों का क्षेत्रवार विवरण इस प्रकार है—[22]

क्र.सं.	क्षेत्र का नाम	कुल भर्ती संख्या
1	रोहतक	34873
2	गुड़गांव	33295
3	हिसार	22405
4	अम्बाला	19170
5	जींद	14634
6	करनाल	7904
7	दुजाना	1149
8	लोहारू	802
9	पटौदी	471
	कुल	**134703**

उपरोक्त आंकड़ों से स्पष्ट है कि सेवा क्षेत्रक में रक्षा सेवा से जुड़े लोगों का सर्वाधिक महत्वपूर्ण योगदान हरियाणा के रोहतक, हिसार, गुड़गांव व अम्बाला आदि क्षेत्रों में रहा। जैसा कि पीछे वर्णित किया जा चुका है कि इस समय में हरियाणा में मूलभूत अवसंरचनात्मक ढांचे में काफी सुधार हुआ था। विशेषतः सड़क मार्गों एवं रेल परिवहन के विकास की बदौलत प्रदेश में क्षेत्रीय व्यापार को काफी बढ़ावा मिला। विशेषतः छोटी व स्थानीय सड़कों ने न केवल गांवों को ही मंडियों से जोड़ा अपितु विभिन्न मंडियों में आपसी अंतर्जुड़ाव भी उत्पन्न किया। फलतः इस कालखंड में लाडवा, कैथल, भिवानी व रेवाड़ी जैसी मंडियों का तेजी से विकास हुआ।[23]

ध्यातव्य है कि लाडवा मंडी उत्तरी पंजाब, भिवानी मंडी पूर्वी पंजाब, कैथल मंडी पटियाला–जींद रियासत एवं रेवाड़ी मंडी राजस्थान से व्यापार करने हेतु एक प्रमुख केन्द्र के रूप में स्थापित हुई। प्रारम्भ में तो व्यापार कृषि प्रधान ही था परन्तु फिर बाद में समय में पीछे बताए गए सूती कपड़ें, बर्तन व शीशे के सामान जैसे औद्योगिक उत्पादों का भी व्यापार होने लगा जिससे क्षेत्र की आर्थिक गतिविधियों में काफी बढ़ोतरी हुई। हालांकि यहां यह भी स्मरणीय है कि इन मंडियों तथा इस अंतर्राज्यीय व्यापार को सम्पूर्ण विकास तो स्वतंत्रता प्राप्ति के बाद के समय में ही हो सका।

हरियाणा में इस दौरान युनियनिस्ट सरकारों तथा कुछ अन्य निजी प्रयासों के माध्यम से प्राथमिक एवं माध्यमिक शिक्षा में भी काफी बढ़ोतरी हुई थी। हरियाणा के विभिन्न जिलों में 1911ई. एवं 1946–47 ई. के मध्य हाई एवं मिडिल स्कूलों की तुलनात्मक बढ़ोतरी का विवरण इस तालिका में दिया जा रहा है–[24]

क्रम संख्या	क्षेत्र का नाम	वर्ष 1911 में मिडिल स्कूल	वर्ष 1946–47में मिडिल स्कूल	वर्ष 1911 में हाई स्कूल	वर्ष 1946–47 में हाई स्कूल
1	गुड़गांव	6	21	1	12
2	करनाल	8	24	1	18
3	अम्बाला	9	23	7	18
4	हिसार	8	25	1	16
5	रोहतक	8	20	1	23

स्कूलों की संख्या में हुई उपरोक्त बढ़ोतरी एवं तकनीकी संस्थानों की बढ़ती संख्या द्वारा जहां एक ओर हरियाणा के सेवा क्षेत्रक में इन संस्थानों में कार्यरत शिक्षक एवं गैर–शिक्षक कर्मचारियों का हिस्सा बढ़ा। वहीं इनसे पढ़कर निकले युवाओं ने आगे लिपिक एवं राजस्व कर्मचारियों आदि के रूप में कार्य कर प्रदेश के सेवा क्षेत्रक को बढ़ाने में अपना योगदान दिया। स्वतंत्रता प्राप्ति के बाद के काल में तो यह क्षेत्रक अर्थव्यवस्था का सबसे महत्वपूर्ण भाग बनकर उभरा।

निष्कर्ष

पीछे दिए गए विश्लेशण से यह स्पष्ट हो जाता है कि आर्थिक दृष्टि से हरियाणा में 1920ई. से 1947 ई. का समय कई नए बदलावों को लेकर आया था। जहां एक ओर कृषि के मूलभूत ढांचे में सुधार से कृषकों को लाभ पहुंचा, वहीं दूसरी ओर इसका कुछ फायदा कृषि आधारित उद्योगों को भी मिला। फिर इन दोनों क्षेत्रकों ने व्यापार में वृद्धि को भी बढ़ावा दिया। यह सब कुछ सरकार एवं अन्य गैर–सरकारी प्रयत्नों से ही संभव हो सका। सेवा क्षेत्रक में महत्वपूर्ण योगदान रक्षा सेवा में कार्यरत लोगों का रहा। इनके द्वारा लाई गई नगद धनराशि ने निश्चित तौर पर क्षेत्र के सामाजिक–आर्थिक रूपांतरण में महत्वपूर्ण भूमिका निभाई। परन्तु इन सबके बावजूद भी स्वतंत्रता प्राप्ति के समय तक क्षेत्र की आर्थिक हालत को बहुत स्थिर एवं स्वस्थ नहीं कहा जा सकता। क्षेत्र का आर्थिक रूपांतरण मुख्यतः आजाद सरकार के अधीन बनाई गई बड़ी सिंचाई योजनाओं, हरित क्रांति, पृथक राज्य बनने के बाद अपनाई गई प्रगतिशील औद्योगिक नीति एवं संरचना व संचार तकनीक की क्रांति के फलस्वरूप ही हो सका।

तथापि उक्त समयकाल में हुए परिवर्तन आने वाले समय में घटित हुई विस्मयकारी आर्थिक गतिविधियों हेतु एक मजबूत आधारशिला प्रदान करने के साथ–साथ तत्कालीन जनमानस के आर्थिक जीवन स्तर को थोड़ा ऊपर उठाने एवं विभिन्न वंचित वर्गों के आर्थिक समायोजन में महत्वपूर्ण भूमिका निभाई।

❐

सन्दर्भ –

1. *इंडिया'ज कन्ट्रीब्यूशन टू द वार,* द गवर्नमेंट प्रिंटिंग प्रैस, कलकत्ता, 1923, पृ.96–97
2. सिंह, मोहिन्दर, *हिस्ट्री एंड कल्चर ऑफ पंजाब,* एटलांटिक पब्लिशर्ज एंड डिस्ट्रीब्यूटर्स, नई दिल्ली, 1988, पृ. 79
3. यादव, के.सी., *हरियाणा का इतिहास : आदिकाल से 1966ई. तक,* होप इंडिया पब्लिकेशंज, गुड़गांव, 2012, पृ. 522
4. गजेटियर ऑफ इंडिया, हरियाणा राज्य, भिवानी जिला, राजस्व एवं आपदा प्रबन्धन विभाग, 1982, पृ. 235
5. यादव, के.सी., *हरियाणा का इतिहास ;1803–1966द्ध,* भाग–3, मैकमिलन इंडिया लिमिटेड, नई दिल्ली, 1981, पृ.220
6. भिवानी जिला गजेटियर, 1982, पृ. 98
7. सेन, सत्येन्द्र नाथ, *एन एडवांस्ड हिस्ट्री ऑफ मॉडर्न इंडिया,* प्राईमस बुक्स पब्लिकेशन, दिल्ली, 2017, पृ.314
8. पंजाब डिस्ट्रिक्ट सेन्सस हैंडबुक, महेन्द्रगढ़ डिस्ट्रिक्ट, 1966, पृ. 26
9. गुड़गांव जिला गजेटियर, 1983, पृ. 216
10. यादव, के.सी., *हरियाणा : इतिहास एवं संस्कृति, खण्ड–2, मनोहर* पब्लिशर्स एंड डिस्ट्रीब्यूटर्स, नई दिल्ली, 1992, पृ. 319
11. ईयरबुक ऑफ द पंजाब एग्रीकल्चर डिपार्टमेंट, पंजाब गवर्नमेंट प्रिंटिंग प्रेस, लाहौर, 1916, पृ. 78
12. रिपोर्ट ऑफ कमेटी अपॉइंटेड टू इंवेस्टिगेट द डिस्टरबेंसिस इन पंजाब, 1920, वाल्यूम–14
13. यादव, के.सी., *पूर्वोक्त,* 1981, पृ. 226
14. सर छोटूराम, राईटिंग एंड स्पीचीज, *जाट गजट,* वाल्यूम–5, पृ. 94
15. यादव, के.सी., *पूर्वोक्त,* 1992, पृ. 318
16. यादव, के.सी., *पूर्वोक्त,* 1981, पृ. 228
17. करनाल जिला गजेटियर, 1976, पृ. 171
18. पंजाब जिला गजेटियर, हिसार, 1935, पृ. 199
19. भिवानी जिला गजेटियर, 1982, पृ. 182
20. द स्टेस्टिकल एबस्ट्रेक्ट ऑफ हरियाणा, 1968, पृ. 141
21. लेह, एम.एस., *द पंजाब एंड द वार,* पंजाब गवर्नमेंट प्रिंटिंग प्रेस, लाहौर, 1922, पृ. 59
22. प्रसाद, बिश्वेश्वर, *एक्सपेंशन ऑफ द आर्मड फोर्सेस एंड डिफैंस ऑग्रेनाइजेशंस, 1939–45,* मिनिस्ट्री ऑफ डिफेंस, दिल्ली, पृ. 8–52
23. यादव, के.सी., *पूर्वोक्त,* 1981, पृ. 229–30
24. यादव, के.सी., *मॉडर्न हरियाणा : हिस्ट्री एंड कल्चर,* 1803–1966, मनोहर पब्लिकेशंस, नई दिल्ली, 2002, पृ. 257

पूर्वदेवा– सामाजिक विज्ञान शोध पत्रिका
वर्ष 29, अंक, 116, जनवरी–मार्च, 2024 पृ. 100–108

UGC Care Listed Journal
ISSN 0974 -1100

सूर्योपासना-निरंतरता एवं परिवर्तन की ऐतिहासिकता, समाज, संस्कृति और पर्यावरण
(वैदिक काल से गुप्तकाल तक)

मधु

शोध अध्येता, इतिहास एवं पुरातत्व विभाग, महर्षि दयानंद विश्वविद्याळय, रोहतक

E-mail: madhu.rs.history@mdurohtak.ac.in Mob.. 9992364043

चंद्रशेखर

प्रोफेसर, सर छोटू राम राजकीय कन्या महाविद्यालय, सांपला

सारांश

हिंदू देवमंडल में सूर्य प्रत्यक्ष देवता है जिसकी कल्पना जगत के प्रकाश के स्वामी (जगत के नेत्र) के रूप में की जाती है। सूर्य के कारण ही दिन, रात, मास, पक्ष, संवत आदि का सर्जन होता है। अतः सूर्य संसार का प्रकाशक और आधार स्तंभ है जो सुख, सत्ता, समृद्धि, ऐश्वर्य, वैभव आदि प्रदान कर मानव जीवन को उन्नत करता है। वैदिक साहित्य, महाकाव्यकालीन साहित्य, बौद्ध साहित्य, विष्णुधर्मेत्तर पुराण, मत्स्य पुराण, भविष्य पुराण, गुप्तकालीन ग्रंथ वृहत्तसंहिता आदि अनेक साहित्यिक ग्रंथों से तथा सिक्कों, मुहरों, मृदभांडो, मूर्तियों आदि पुरातात्विक स्त्रोतों के माध्यम से हमें प्राचीन काल में प्रचलित सूर्योपासना (सूर्यपूजा) की जानकारी प्राप्त होती है।

प्रागैतिहासिक काल से ही मानव प्राकृतिक शक्ति के रूप में सूर्य देव की सत्ता को स्वीकार करता आया है तथा अपना सम्मान इस सत्ता के प्रति प्रकट करने हेतु निरंतर अनेक रूपों में इसकी उपासना भी करता रहा है। सूर्योपासना पाषाण काल से गुप्त काल तक निरंतरता एवं परिवर्तन के साथ प्रचलन में रही। इस निरंतरता और परिवर्तन का मुख्य कारण समय के साथ–साथ राजनीतिक, सामाजिक, सांस्कृतिक, आर्थिक जीवन में होने वाले परिवर्तनों को माना जाता है। अतः प्रस्तुत शोध पत्र का उद्देश्य वैदिक काल से गुप्त काल तक सूर्योपासना की निरंतरता एवं परिवर्तन की ऐतिहासिकता को प्रकाश में लाना तथा यह सिद्ध करने का प्रयास करना है कि समय के साथ–साथ मनुष्य की सामाजिक, सांस्कृतिक, धार्मिक स्थिति में होने वाले परिवर्तनों के बावजूद भी समाज, संस्कृति और पर्यावरण मानव जीवन के पूरक रहे हैं जिनमें किसी भी एक कारक के बिना मनुष्य की पूर्णता की कल्पना नहीं की जा सकती।

संकेत शब्द :– सूर्योपासना, पर्यावरण, समाज, संस्कृति, निरंतरता।

वैदिक काल से पूर्व प्रचलित सूर्योपासना

सूर्य प्रकृति की उन सभी शक्तियों में श्रेष्ठ माना जाता है जिनमें सर्वप्रथम देवत्त्व की कल्पना की गई। प्रागैतिहासिक संस्कृतियों में प्रचलित आदिम जनजातियों की मान्यताओं, प्रथाओं द्वारा अप्रत्यक्ष रूप में तथा शैल चित्रों में उकेरे गए कुछ मांगलिक चिन्हों– चक्र, स्वास्तिक आदि का संबंध सूर्य पूजा से जोड़ा जाता है। इससे अधिकांश इतिहासकारों का यह विचार हैं कि भारत में सूर्योपासना की प्रथा प्रागैतिहासिक काल से ही प्रचलन में थी। पाषाण कालीन मनुष्यों द्वारा चट्टानों, गुफा आवासों, पाषाण उपकरणों पर सूर्य का अंकन कभी–कभी केवल प्रतीकात्मक रूप में तथा कभी–कभी अपरिष्कृत रूप में देखा जा सकता है। मध्य प्रदेश के रायगढ़ जिले में मांडा नदी के पूर्व में पहाड़ियों की श्रेणी में स्थित एक बलुआ चट्टान पर अर्धवृत्ताकार उगते हुए सूरज की आकृति मिलती है। जिसमें अपसारी रेखा जैसी किरणें है। इसके ठीक नीचे एक खड़ी हुई मानव आकृति है जिसके हाथ उगते सूरज की ओर उठे हुए हैं। अतः इस प्रतीकात्मक चित्र से यह आभास मिलता है कि वह आदमी उगते सूरज को अपनी श्रद्धांजलि दे रहा है।[1] पिक्लीहल से प्राप्त नवपाषाणिक मृदभांड पर घिरे हुए चक्र का चित्रण प्राप्त होता है जिसे इतिहासकारों ने सूर्य से जोड़ा है।[2] नवपाषाणकालीन बेल्लारी जिले (कर्नाटक) की कपगल्लु पहाड़ियों में छह किरणों वाले तारे का चित्रण मिलता है। इतिहासकारों ने इसकी व्याख्या करते हुए इसे सूर्य माना है जिसकी छह किरणें इस विश्वास के साथ उकेरी गई है कि वह पृथ्वी पर छह ऋतुओं का निर्माणकर्ता है। आदिम कृषि अर्थव्यवस्था की दृष्टि से भी प्रकाश, ऊर्जा, उर्वरता और वर्षा के स्त्रोत के रूप में सूर्य के महत्व को प्रागैतिहासिक काल से ही मनुष्य प्रमुख मानकर उसके प्रति अपनी कृतज्ञता व आदर को प्रकट करता रहा है और शायद इसी विश्वास ने उसे सूर्योपासना के लिए प्रेरित किया।

हड़प्पा सभ्यता के विभिन्न क्षेत्रों की खुदाई से प्राप्त मृदभांडो, मुहरो, ठीकरो पर स्वास्तिक (सूर्य की गति का प्रतिनिधित्वकर्ता एक मांगलिक चिह्न), पहिया, विकिरण किरणों या संकेतों वाले चक्र, आंख, मोर जैसे पक्षी तथा बैल के चित्रण को बहुत से इतिहासकारों ने संभवतः सूर्य प्रतीक के रूप में माना है। ताम्रपाषाणकालीन प्रकाश, नवदाटोली, रंगपुर, बहाल आदि स्थलों की खुदाई से प्राप्त मृदभांडो के ऊपर भी सूर्य का अनेक प्रतीकों के रूप में अंकन देखा जा सकता है। प्रकाश नामक ताम्रपाषाणकालीन स्थल से प्राप्त काले व लाल रंग के मृदभांड के ऊपर विकिरण युक्त चक्र की आकृति है जिसे पुरातत्वविद सूर्य प्रतीक स्वीकार करते हैं। अतः वैदिक काल पूर्व प्राप्त पुरातात्विक अवशेषों के माध्यम से तत्कालीन लोगों के प्राकृतिक तत्व सूर्य के लिए सम्मान की भावना व्यक्त होती है जो बाद की अवधि में भी जारी रही।

ऋग्वैदिक काल में सूर्योपासना (1500–1000 ईसा पूर्व)

सूर्य को ऋग्वेद के प्रथम मंडल में जगत की आत्मा, उसका आश्रय और निवास कहा गया है।[3] जिसे परब्रह्म के रूप में सर्वोच्च देवता माना गया है। इस काल में सूर्योपासना की जानकारी केवल प्रतीकों की व्याख्या तथा अनुमान पर निर्भर नहीं रह गई थी अपितु सूर्य पूजा की जानकारी प्राप्त करने के संदर्भ में लिखित साक्ष्य भी महत्वपूर्ण भूमिका निभाते हैं। ऋग्वेद में वर्णित सौर देवताओं में सूर्य (प्रत्यक्ष दृश्यमान, चमकदार) सबसे प्रमुख देवता है जिसे अकाश का रतन कहा गया है। ऋग्वेद के लगभग दस सूक्तो में सूर्य की महिमा तथा मानव जीवन के

लिए उसकी उपयोगिता का गौरवगान किया गया है। सूर्य को द्यौस और अदिति का पुत्र बताया गया है तथा उसकी पत्नी का नाम उषा वर्णित है। उषा के संदर्भ में ऋग्वेद में कहा गया है कि वह अन्न की स्वामिनी, सूर्य की पत्नी एवं विचित्र धन से युक्त सभी धनो की अधिकारिणी है।[4] ऋग्वैदिक साहित्य में सूर्य के रथ को एक या सात घोड़ों द्वारा खींचा बताया गया है।[5] **यस्मा आदित्या अध्वनो रदन्ति मित्रो अर्यमा वरुणः सजोशाः (ऋग्वेद 7.60.4)** अर्थात मित्र, अर्यमा व वरुण समान प्रीति वाले होकर उनके लिए मार्ग निश्चित करते हैं।[6] पूषन उसका दूत है। कहीं–कहीं ऋग्वैदिक सुक्तो में सूर्य का प्रतिनिधित्व घोड़ा व पक्षी (मुख्यतः चील) भी करते बताए गए है। कहा गया है कि वह एक श्वेत अश्व है जिसे उषा लाती है।

ऋग्वैदिक साहित्य में सूर्य की पारिस्थितिक तंत्र में भूमिका का भी प्रतिपादन किया गया है। साहित्य में वर्णित है कि सूर्य प्रकाश का स्त्रोत है, जल का केंद्र है, औषधियों का पोषक है और रोग, शत्रु, कुमति को दूर करता है। सभी वनस्पतियों को पकाता है।[7] अतः ऋग्वैदिक साहित्य में सूर्य से आह्वान की जानकारी मिलती है कि– **हे सूर्य! हमें दीर्घायु दे।**[8]

हे उदित होते हुए सूर्य! तुम क्षितिज में उठते हुए मेरे हृदय की व्याधि तथा पीत रोग को मिटाओ।[9]

ऋग्वेद के तीसरे मंडल में सूर्य देवता को समर्पित गायत्री मंत्र या सावित्री मंत्र (ऋ. 3. 62.10) पर्यावरण संरक्षण तथा प्राकृतिक प्रेम की भावना से स्पष्ट रूप से जुड़ा हुआ है। इसके साथ–साथ इस मंत्र के माध्यम से मानव बुद्धि को प्रेरित करने हेतु सूर्य देवता से आह्वान किया गया है। ऋग्वेद के विभिन्न मन्त्रों से जानकारी मिलती है कि इस काल में सूर्य की पूजा सविता, मित्र, पूषन, विष्णु, वरुण, आर्यामन आदि सौर देवताओं के रूप में की जाती थी।

उत्तर वैदिक काल में सूर्योपासना (1000–600 ईसा पूर्व)

उत्तर वैदिक काल में सौर परिवार के सदस्य देवों के रूप में सूर्य, मित्र, वरुण, विष्णु, आर्यामन, पूषन आदि सौर देवताओं की उपासना ऋग्वैदिक काल की भांति जारी रही। जिनमें कुछ देवता महत्वपूर्ण हो गए तथा कुछ अन्य सूर्य देवता भी अस्तित्व में आए। सामवेद में सूर्य को विश्व की सभी चल और अचल शक्तियों की आत्मा कहा गया[10] तथा सात पीले घोड़ों से जुड़ी गाड़ी पर उसे सवार बताया गया जो उसकी सात किरणों का प्रतिनिधित्व कर रही है। छंदोंग्य उपनिषद में सौर देवता आदित्य को ही ब्रह्मा कहा गया है जिसकी पूजा उस समय विशेष रूप से प्रचलन में थी। छंदोंग्य उपनिषद में इस काल में प्रचलित छह सौर संप्रदायों का भी वर्णन मिलता है।[11] अथर्ववेद में सूर्य की उपासना एक अन्य नाम 'रोहिता' के रूप में किए जाने का वर्णन भी आया है जिसे घी पीने वाले सुर्ख के रूप में वर्णित किया गया है तथा प्रकाशमान, गतिशील और अमर अश्व (किरणें) सूर्य के रथ को चलाती है। इन पुष्टिप्रद किरणों से युक्त तेजस्वी सूर्यदेव विविध वर्णयुक्त प्रभा के साथ द्यूलोक में प्रवेश होता है।[12] ऋग्वैदिक काल में प्रचलित सूर्य के प्रतीकात्मक रूप घोड़ा, चील आदि की निरंतरता के साथ–साथ उत्तर वैदिक कालीन यज्ञों के दौरान कुछ अन्य प्रतीक सूर्य प्रतीक के रूप में प्रचलन में देखे जा सकते है जिनमें पहिया, करधनी, चक्र (सूर्य के आकार व उसकी गति का प्रतिनिधित्व कर्ता) आदि है जिन्हें सूर्यदेव के सांसारिक प्रतिनिधित्व के रूप में माना गया है।

वैदिक काल में अश्वमेध यज्ञ को सूर्योपासना का माध्यम तथा इसमें प्रयुक्त घोड़े सूर्यदेव के प्रतीक के रूप में लिए गए हैं। घोड़ा मुख्यतः सफेद रंग का जिस पर काले रंग के धब्बे हैं। यज्ञ के समय सोने के एक टुकड़े को सूर्य प्रतीक के रूप में रखा जाता है। जिस पर घोड़े की बलि दी जाती है। यह सूर्य देव के लिए वैदिक काल में घोड़े की बलि दिए जाने की प्रथा को स्पष्ट करता है।[13] अतः स्पष्ट है कि जहां एक तरफ ऋग्वैदिक काल में घोड़े को सूर्य प्रतीक के रूप में लिया जाता है तथा उसके प्रति सम्मान प्रकट किया गया है वही उत्तर वैदिक काल में सूर्य को प्रसन्न करने के लिए उसी की बलि दी जा रही है।

वैदिक साहित्य से पता चलता है कि इस काल में सूर्य पूजा न केवल इसके भौतिक रूप में अपितु ईश्वर, राजा, ज्ञानी, विद्वान, परिव्राजक, सन्यासी, नवविवाहिता वधु के रूप में होती थी।

एश स्य मित्रावरुणा नश्चक्षा उभे उदेति सूर्य अभि ज्मन्
विश्वस्य स्थातुर्जगतच्श्र गोपा ऋजु मर्तेशु वशचिना च पश्यन् (ऋग्वेद 7.7.60)[14]

अर्थात सूर्य जो ईश्वर, विद्वान, ज्ञानी रूपी देव है वह ऋजु मार्ग (सरल व सच्चा मार्ग) और वर्जिन मार्ग (पाप मार्ग) को बताने वाला है।

महाकाव्य काल में सूर्योपासना

महाकाव्य काल (रामायण और महाभारत काल) में हमें पहली बार सूर्य के मानवीय स्वरूप का विवरण मिलता है। इस काल के दौरान सूर्य देवता की अवधारणा, पूजन विधि तथा सूर्य देवता की लोकप्रियता पहले की अपेक्षा और अधिक बढ़ गई। रामायण में श्रवणकुमार के माता–पिता को संध्योपासना (सुबह–शाम सावित भगवान का आह्वान) करते हुए वर्णित किया गया है।[15] इसी तरह राम, लक्ष्मण और सीता तथा अन्य ऋषियों को अपने हाथ ऊपर की ओर उठाकर उगते सूरज को नमन देते हुए वर्णित किया गया है (अयोध्याकांड 87.18)। सुंदरकांड में हनुमान श्रीलंका के लिए प्रस्थान करने से पहले सूर्य देवता, पवन देवता तथा ब्रह्मा को हाथ जोड़कर अपनी श्रद्धांजलि प्रकट करते हैं (सुंदरकांड 1.8)। युद्ध कांड के अंतर्गत अगस्त्य ऋषि राम को रावण के साथ युद्ध पर जाने से पहले सूर्य देवता (जिसे आदित्य ह्रदय कहा गया है) की पूजा करने की सलाह देते हैं क्योंकि वह देवताओं और राक्षसों दोनों के द्वारा सम्मानित है। जो शरीर को प्रकाश देता है तथा सभी लोको का स्वामी है।[16]

महाभारत में सूर्य को देवताओं के स्वामी (देव) के रूप में वर्णित किया गया है।[17] महाभारत में सूर्य देव के लिए 108 नाम दिए गए हैं तथा अब सूर्य की पूजा केवल आह्वान, भजनों, मंत्रों के माध्यम से किए जाने की जानकारी ही नहीं मिलती बल्कि उसे फूल–माला, पुष्प, व्रत करके भी प्रसन्न किए जाने के वर्णन मिलते हैं। युधिष्टिर उगते हुए सूर्य को गंगा नदी में खड़े होकर पुष्प अर्पित तथा स्तुति गाते महाभारत कथा में वर्णित है। अरण्य कांड के वनपर्व के अंतर्गत पेड़ लगाने तथा तालाब खोदने के कार्य को अत्यंत लाभकारी माना है तथा कहा गया है कि ऐसा करने से सूर्य देवता प्रसन्न होते हैं। अतः महाभारत काल में हमें मंत्रों के माध्यम से सूर्य देवता के आह्वान के साथ–साथ उसकी उपासना की नई विधियों का पता चलता है जिसमें उसे फूल, सुगंध व अन्य वस्तुएं अर्पित कर तथा वृक्ष लगाकर, तालाब खुदाई जैसे लोक कल्याणकारी कार्यों के द्वारा प्रसन्न किए जाने के साक्ष्य मिलते हैं। इसके अतिरिक्त मानवीय रूप

में कुंती पुत्र कर्ण में सूर्य का अंश विद्यमान है। कर्ण सूर्य उपासना करके ही हमेशा युद्ध के लिए जाता था (कर्णपर्व)। जब कुंती द्वारा आह्वान किया गया तो वह अपना सूर्य रूप प्रकट भी करता है।

महाजनपद काल से मौर्य काल में सूर्योपासना

छठी शताब्दी ईसा पूर्व वैदिक आस्तिक धर्म के प्रतिरोध स्वरुप जैन और बौद्ध धर्म जैसे नास्तिक धर्म का उत्थान हुआ। जिसके परिणामस्वरूप तत्कालीन राजनीतिक, सामाजिक, आर्थिक, धार्मिक, सांस्कृतिक सभी क्षेत्रों में महत्वपूर्ण परिवर्तन हुए। वज्जि, मल्ल, शाक्य, कौलिय, अवंति, कौशल, मगध, वत्स आदि ऐसे सोलह महाजनपदों का उत्थान हुआ। परंतु चौथी शताब्दी ईसा पूर्व अन्य सभी महाजनपदों में मगध राज्य ने श्रेष्ठता प्राप्त की।[18] पाणिनी की अष्टाध्यायी में सूर्योपासना का कोई प्रत्यक्ष उल्लेख नहीं किया गया है परंतु अपने विभिन्न सूत्रों में सूर्य, सौर्य, सौरी जैसे शब्दों की संरचना पर अवश्य प्रकाश डाला है जिसके माध्यम से उन्होंने कहा है कि सूर्य सभी के लिए प्रेरक शक्ति है तथा यह विश्व को कार्य करने के लिए प्रेरित करता है।[19] पंचमार्क (आहत सिक्कों) पर बहुत सारे प्रतीकों को इतिहासकारों ने सूर्योपासना से जोड़ा है। बौद्ध साहित्य के निकाय भागों में सूर्य देवता का वर्णन मिलता है इनके सुत्तो में सूर्य देव को आकाश का देवता माना गया है जो निरंतर वर्षा की आपूर्ति करता है तथा मानव का कल्याण करता है। समयुत्त निकाय में सूर्य सूक्त के अंतर्गत सूर्य को बुद्ध की शक्ति स्वीकार करते हुए उससे सुरक्षा हेतु पूछने तथा असुरों के स्वामी राहु से उसे छुटकारा पाने के लिए प्रेरित करते हुए दिखाया गया है।[20] विभिन्न जातकों में भी हमें बौद्ध काल में प्रचलित सूर्योपासना तथा उसकी विधियों की जानकारी मिलती है। मयूर जातक में मोर के रूप में पैदा हुए एक बोधिसत्व के दंडक की सुनहरी पहाड़ियों पर सूर्य की पूजा करने का वर्णन मिलता है। यहां सूर्य को एक राजा जो सभी को देख रहा है तथा एक गौरवशाली प्राणी के रूप में वर्णित किया गया है जो अपने सुनहरे प्रकाश से सभी को उज्जवल करता है (जातक संख्या 159) तथा बुराइयों को दूर करता है। दीघनिकाय के ब्रह्मजाल सुत्त के अंतर्गत आजीविका के गलत साधनों की एक सूची दी गई है तथा ब्राह्मणों द्वारा की जाने वाली सूर्य पूजा को इसमें शामिल किया गया है।[21] मुख्यतः इस काल में ब्राह्मणों को सूर्य पूजा करवाने वाले पुजारी के रूप में सम्मान सहित बहुत से उपहार दिए जाते थे, बौद्धों ने इसे आजीविका का अच्छा साधन न मानते हुए उपपूजकों का उपहास किया है।

मौर्य काल में सूर्य देव का विशिष्ट रूप में कोई उल्लेख नहीं मिलता परंतु अशोक के अभिलेखों से प्राप्त जानकारी के आधार पर यह पता चलता है कि अशोक सूर्य तथा चंद्र की अनंतता में विश्वास करता था। अशोक कालीन स्तंभों पर विभिन्न जानवरों में घोड़े के रूपांकन को बहुत से इतिहासकारों ने सूर्य देवता के प्रतीक के रूप में जोड़ा है। मेगास्थनीज के विवरण से भी हमें इस काल में अप्रत्यक्ष रूप से सौर संप्रदाय की जानकारी प्राप्त होती है।

उत्तर मौर्य काल में सूर्योपासना

शुंग काल जिसे ब्राह्मणवादी संस्कृति के पुनरुत्थान का काल माना जाता है। पुष्यमित्र शुंग के प्रमुख आचार्य पतंजलि ने अनेक वैदिक देवताओं के साथ सूर्य का भी उल्लेख किया है। शुंगकाल में सूर्य देवता की अनेक टेराकोटा प्रतिमाएं प्राप्त होती हैं। जिनमें सूर्य को मुख्यतः

चार घोड़ों के द्वारा खींचे जाने वाले रथ पर बैठा दिखाया गया है। बोधगया की वेदिका पर चार घोड़ों के रथ पर सवार सूर्य देव की प्रतिमा का रूपांकन है। भाजा गुफा (द्वितीय शताब्दी ईसा पूर्व) में चार घोड़ों के रथ पर एक आकृति है जो राक्षसों की पीठ पर सवार है जिसे सूर्य देव के रूप में लिया जाता है।[22] अतः शुंग काल में वैदिक मान्यताओं का अनुकरण करते हुए सूर्य को चार घोड़ों के रथ में बैठा रूपांकित किया गया है जिसे अरुणा तेजी से चलाती है। पारिवारिक प्रतिमाओं के रूप में ऊषा और प्रत्यूषा कहीं कहीं उसके साथ चित्रित की गई है जो अंधेरे के राक्षस को मारने के लिए उसकी मदद के लिए आती है। इस काल तक सूर्य का प्रतीकों के रूप में पूजन का प्रचलन नहीं रहा बल्कि मानव रूप में सूर्य चित्र बनाकर उसकी पूजा प्रचलित हुई। यद्यपि अभी भी कुछ कबिलाई सिक्कों पर सूर्य प्रतीक के रूप में पहिया, चक्कर जैसे चिन्ह देखे जा सकते हैं।

ईसा की पहली शताब्दी में विदेशी प्रभाव के फलस्वरुप सूर्योपासना की पद्धति में परिवर्तन देखने को मिलता है। आर. जी. भंडारकर का विचार है कि यह परिवर्तन मग नामक ईरानी पुरोहित (भविष्य पुराण के अनुसार चंद्रभागा नदी के तट पर सूर्य मंदिर में पूजा हेतु बुलाया गया) के एक वर्ग के भारत आगमन के कारण हुआ।[23] हिंद यवन शासक अपोलोडोटस द्वितीय के सिक्कों पर यूनान देश के सूर्य देवता अपोलो को जूते पहने दिखाया गया है।[24] कुषाणकालीन ललितविस्तार ग्रंथ में सूर्योपासना के संदर्भ मिलते हैं लेकिन मुख्यतः उन पर विदेशी (यूनानी) प्रभाव देखा जा सकता है। कुषाण शासक कनिष्क, हुविष्क के सिक्कों पर सूर्य का अंकन मानव रूप में विदेशी प्रभाव के अनुसार किया गया। जिनमें सूर्य को बूट पहने दिखाया गया है उनके विस्तारित दाहिने हाथ पर उन्हें कुछ पकड़े हुए तथा उनके बाएं हाथ में उनकी कमर के नीचे लटकती हुई तलवार है। सिर पर एक विकीर्ण प्रभामंडल (देवत्व का प्रतीक) है। एक अन्य प्रयोग यह है कि उनके शरीर पर ओढ़नी उकेरी गई है। अतः स्पष्ट है कि इस काल की सूर्य मूर्तियों में हमें तत्कालीन कलाकारों द्वारा कला क्षेत्र में किए गए नए–नए प्रयोग देखने को मिलते हैं।

गुप्त काल में सूर्योपासना

गुप्त काल जो धार्मिक दृष्टि से सहिष्णुता का काल था। इस काल में हमें विभिन्न देवी–देवताओं के साथ सूर्योपासना के साक्ष्य भी मिलते हैं। गुप्त काल में सूर्य को सावित्त, विवस्वान, आदित्य, अर्का, भानु आदि नामों से संबोधित किया गया। कुमारगुप्तकालीन मंदसौर अभिलेख से वर्णन मिलता है कि दशपुर के तंतुवाय श्रेणी (रेशमी वस्त्र बुनने वाले बुनकरों की श्रेणी) ने शिल्प से प्राप्त धन से सूर्य का एक मंदिर बनवाया तथा क्षतिग्रस्त होने पर पुनः उसकी मरम्मत करवाई।

शिल्पावाप्तैर्धनंसमुदयै पट्टवायैरुदारम्।
श्रेणीभूतैर्भवनमतुलं कारितं दीप्ति रश्मेः।[25]

गुप्तकालीन इंदौर ताम्रपत्र लेख सूचित करता है कि देव विष्णु नामक एक ब्राह्मण ने सूर्य मंदिर में लगातार दीपक जलाए रखने के लिए अपना चीर स्थायी योगदान दिया।[26] अतः स्पष्ट है कि गुप्त काल के लोग सूर्य उपासक थे तथा गुप्तकालीन शासको, धनी व्यापारियों, सामंतो आदि के द्वारा सूर्य मंदिरों में अथाह दान दिया जाता था।

समाज, संस्कृति और पर्यावरण

मनुष्य एक सामाजिक प्राणी है। समाज में रहकर ही मनुष्य अपनी सांस्कृतिक, धार्मिक आस्थाओं, रीति–रिवाजों, परंपराओं आदि के माध्यम से प्राचीन काल से ही अपने पर्यावरण के साथ अपना अंतर्संबंध स्थापित करता आया है। वास्तव में समाज, संस्कृति और पर्यावरण एक दूसरे के पूरक हैं। पर्यावरण के विभिन्न तत्वों में सूर्य प्रमुख तत्व है। सारा सौरमंडल, ग्रह, उपग्रह, नक्षत्र आदि सूर्य से शक्ति पाकर इसके इर्द–गिर्द घूमते हैं। सूर्य जगत का प्रकाशक, संचालक है। अपने तेज से शरीर को शक्ति प्रदान करने तथा अन्न को पचाने का काम भी सूर्य ही करता है। सूर्य अपनी चेतन तरंगों द्वारा मस्तिष्क की गतिशीलता, उर्वरता और सूक्ष्मता के विकास तथा विनाश के लिए भी उत्तरदायी है। सूर्य की किरणों से प्रकाश पाकर ही वनस्पतियां उत्पन्न होती है। अतः जगत की सृष्टि और पालनकर्ता सूर्य ही है। सूर्य की इन अद्‌भुत शक्तियों की जानकारी प्राचीन काल से ही मनुष्यों को थी। यही कारण है कि हमें प्रागैतिहासिक काल से ही किसी न किसी रूप में मनुष्य द्वारा सूर्योपासना के संकेत मिलते हैं यद्यपि समय के साथ–साथ सूर्योपासना पद्धति में परिवर्तन होता रहा लेकिन भारत में इसकी निरंतरता हमेशा से बनी रही। प्राचीन काल से ही हमें सामाजिक, सांस्कृतिक व धार्मिक मूल्य–मान्यताओं से जुड़े आदर्शों में भारतीयों की पर्यावरण चेतना, पर्यावरण संरक्षण आदि अन्य पर्यावरण पहलुओं की झलक देखने को मिलती है।

वैदिक कालीन मनुष्यों ने यज्ञ के माध्यम से प्राकृतिक तत्व सूर्य को अर्ध्य अर्पित कर अपना सम्मान सूर्य के प्रति प्रकट किया। यज्ञ के दौरान अग्नि में छोडी गयी आहुति सूर्य को प्राप्त होती है। सूर्य से ही वृष्टि होती है, वृष्टि से अन्न उत्पन्न होता हैं और अन्न से प्रजाए। अतः वैज्ञानिक भी इस बात को सिद्ध कर चुके हैं कि अग्नि में डाला गया द्रव्य विद्युतकणी भूत हो जाता है। उसके कणों में से कुछ धन तडित और ऋण तडित को वहन करके बाहर निकलते हैं। सूर्य का तेज सकारात्मक होता है। इस कारण वह नकारात्मक ऋण तडित कणों को अपनी ओर खींचता है।[27] जिससे यज्ञ आहुति सूर्य को प्राप्त होती है। सूर्य देवता को समर्पित **गायत्री मंत्र या सावित्री मंत्र (ऋग्वेद 3.62.10)** पर्यावरण संरक्षण तथा प्राकृतिक प्रेम से जुड़ी भावना को स्पष्ट करता है। इसके द्वारा मानव बुद्धि को प्रेरित करने हेतु सूर्य देवता से आह्वान किया जाता है। प्राचीन कालीन साहित्य से जानकारी मिलती है कि चील, बाज आदि पक्षियों को सूर्य के प्रतीकात्मक रूप में वर्णित किया गया है। जिनकी पारिस्थितिक महत्ता सिद्ध हो चुकी है ये शिकार में मजबूत पक्षी होने के कारण प्राकृतिक संतुलन को बनाए रखने में महत्वपूर्ण योगदान देते हैं। कई विषैले जीवों को खाकर, मरे हुए पशु–पक्षियों को खाकर पर्यावरण को शुद्ध रखने में महत्वपूर्ण भूमिका निभाते हैं। समय के साथ–साथ सामाजिक, धार्मिक जीवन में होने वाले परिवर्तनों के परिणामस्वरूप सूर्य देवता को समर्पित मूर्तियां, मंदिर बनाए जाने लगे तथा समाज में सूर्य उपासकों का अलग सौर संप्रदाय आस्तित्व में आया। उत्तर मौर्य काल में इन मूर्तियों, मंदिरों में विदेशी प्रभाव स्पष्ट रूप से देखा जा सकता है। अतः कहा जा सकता है कि समाज, संस्कृति तथा लोगों के धार्मिक दृष्टिकोण में होने वाले परिवर्तनों के साथ–साथ मनुष्य का पर्यावरण तथा पर्यावरण के विभिन्न तत्वों के प्रति दृष्टिकोण भी बदलता रहा है।

निष्कर्ष

पर्यावरण के सभी तत्वों में धरती पर जीवन को संचालित करने में प्राकृतिक तत्व सूर्य का महत्वपूर्ण योगदान है। सूर्य अपनी प्रकाश और ऊर्जा से वनस्पतियों को पकाता है। सूर्य के कारण ही वर्षा होती है तथा अन्न उत्पन्न होता है। सूर्य मानव जीवन में शक्ति का संचार करता है। अतः प्राचीन काल से ही प्रागैतिहासिक मानव इस रहस्यमयी शक्ति के स्त्रोत सूर्य के प्रति अपना सम्मान भाव रखते आया हैं। मानव बुद्धि के विकास के साथ–साथ होने वाले सामाजिक, धार्मिक परिवर्तनों के परिणामस्वरूप सूर्योपासना की प्रवृत्ति समय के साथ–साथ यद्यपि बदलती रही। जैसे– पाषाण काल व हड़प्पा काल में प्रतीक रूप में, वैदिक काल में मंत्रों के माध्यम से, महाकाव्य काल में मानवीय रूप में, शुंग काल में सूर्य की पारिवारिक (परिवार सहित), स्थानक (खड़ी हुई), आसन (बैठी हुई) बहुभुजी, नवग्रह, दक्षिण भारतीय शैली में बनी मूर्तियों के माध्यम से, कुषाण काल में मूर्तियों पर विदेशी प्रभाव के साथ तथा गुप्त काल में सूर्य मंदिरों के माध्यम से सूर्योपासना निरंतरता में बनी रही। आधुनिकता के इस दौर में भी संपूर्ण भारत के मनुष्य अपनी–अपनी मान्यताओं के अनुसार सूर्य के प्रति अपना सम्मान प्रकट करते हैं। मध्य तथा पूर्वी भारत के बहुत से राज्य जिनमें बिहार, झारखंड, पूर्वी उत्तर प्रदेश में आज भी कार्तिक शुक्ल पक्ष की षष्ठी को उदित और अस्त होते हुए सूर्य की पूजा अत्यधिक लोकप्रिय है। जिसमें पूर्ण विधि–विधान पूर्वक फल–फूल तथा अन्य सामग्रियों के साथ सूर्य देव को अर्घ्य अर्पित किया जाता है। पर्यावरणीय दृष्टिकोण से भी इसका वैज्ञानिक महत्व सिद्ध हो चुका है क्योंकि कार्तिक शुक्ल की षष्ठी के दिन सूर्य की पराबैंगनी किरणें पृथ्वी की सतह पर सामान्य से अधिक मात्रा में एकत्रित हो जाती है। लेकिन इस पर्व के माध्यम से सूर्य की ओर मुख करके जल का जो अर्घ्य दिया जाता है उसके माध्यम से सूर्य की पराबैंगनी किरणें जब उस जलधारा को पार करती है तो प्रिज्म प्रभाव के कारण अनेक किरणों में विखंडित हो जाती है। जिससे मानव के शरीर पर उन पराबैंगनी किरणों का हानिकारक प्रभाव नहीं पहुंच पाता। यह स्पष्ट करता है कि आज भी मानव सूर्य के प्रति अपनी धार्मिक आस्था के माध्यम से अपने पर्यावरण को संरक्षित रखने में अपना अहम योगदान दे रहे हैं। निष्कर्ष रूप में कहा जा सकता है कि सूर्योपासना की निरंतरता यह सिद्ध करती है कि किस तरह मनुष्य समाज, संस्कृति और उसका धार्मिक जीवन पर्यावरण से अभिन्न रूप में जुड़ा हुआ है। प्राचीन काल से ही मनुष्य विभिन्न सामाजिक, धार्मिक मूल्य–मान्यताओं, रीति–रिवाजों, परंपराओं, प्रकृति पूजा आदि के माध्यम से अपने पर्यावरण के प्रति अपने प्रेम को प्रकट करता रहा है जिसके माध्यम से आज भी पर्यावरण को संरक्षित रखने में मनुष्य अपना महत्वपूर्ण योगदान दे रहे है।

❐

सन्दर्भ –

1. *Pandey, L. P., 'Sun-Worship in Ancient India', Motilal Banarsidass, Delhi, 1971, p. 1-2*
2. *Shrivastava, V. C., 'Sun-Worship in Ancient India', Indo logical Publication, Allahabad, 1972, p. 20*
3. *Chacko, A., 'Worship of Sun in Rigveda', International Journal of Scientific and Research Publications, Vol. 3, Issue 2, 2013, p. 2Pandey, L. P., 'Sun-Worship in Ancient India', Motilal Banarsidass, Delhi, 1971, p. 1-2*
4. ऋग्वेद 7.75.5, शर्मा, गंगासहाय, *'ऋग्वेद'*, संस्कृत साहित्य प्रकाशन, नईदिल्ली, 1979, पृ. 112

5. *Keith, A. B., 'The Religion and Philosophy of the Vedas and Upanishads', Vol. 32, Motilal Banarsidass, Delhi, 1925, p. 105*
6. ऋग्वेद 7.60.4, शर्मा, गंगासहाय, पूर्वोक्त, 1979, पृ. 1104
7. द्विवेदी, कपिल देव और द्विवेदी, भारतेंदु, *'ऋग्वेद सुभाशितावली',* वेदाम तरमः, विश्व भारती अनुसंधान परिषद, वाराणसी, 1989, पृ. 336–337
8. ऋग्वेद 10.36.14, *'सविता नो रासवां दीर्घमायुः'*।
9. ऋग्वेद 1.50.11, *'हृदयरोग मम सूर्य, हरिणामं च नाशय'*।
10. *सामवेद* 6.5.14
11. *Pandey, L. P., op. cit., p. 29*
12. अथर्ववेद 13.1.24, शर्मा, श्रीराम, *'अथर्ववेद संहिता',* ब्रह्मवर्चस प्रकाशन, शांतिकुंज, हरिद्वार, भाग 2, 2002, पृ. 4
13. *Kane, P. V., 'History of Dharmashastra', Vol. II,Bhandarkar Oriental Research Institute, Pune, 1941, p. 1234*
14. ऋग्वेद 7.7.60
15. महाभारत, 'अयोध्याकांड', 64.34
16. *Pandey, L. P., op. cit., p. 55*
17. महाभारत 11.50.16, *'भाषि दिविदेवेश्वरोयथा'*।
18. कौर, ए. बी., *'मगध साम्राज्य का इतिहास',* यूनिवर्सिटीपब्लिकेशन, 2013, पृ. 26
19. सरस्वती, दयानंद, *'अष्टाध्यायी भाष्यम',* भाग 11, वी. एस. अजमेर, 1987, पृ. 111
20. *Pandey, L. P., op. cit., p. 50*
21. *Kasyapa, Bhikshu J. (ed.), 'Digha-Nikaya', Devanagari Pali Series, 1958, p. 12*
22. *Singh, A. P., 'Concept of Environment in Ancient Art and Architecture' , Agam Kala Prakasan, Delhi, 2003, p. 28*
23. श्रीवास्तव, कृष्णचंद, *'प्राचीन भारत का इतिहास तथा संस्कृति',* यूनाइटेड बुक डिपो, इलाहाबाद, 2007, पृ. 816
24. *Banerjea, J. N., 'The Development of Hindu Iconography' , Ist edition, p. 439*
25. श्रीवास्तव, कृष्णचंद, पूर्वोक्त, पृ. 816
26. *Pandey, L. P., op. cit., p. 79*
27. गौतम, सूर्यनारायण ,*'वेद, यज्ञ और पर्यावरण',* एजुकेशन बुक सर्विस, नईदिल्ली, 2014, पृ. 90

पूर्वदेवा– सामाजिक विज्ञान शोध पत्रिका
वर्ष 29, अंक, 116, जनवरी–मार्च, 2024 पृ. 109–117

UGC Care Listed Journal
ISSN 0974 -1100

भारत-रूस सांस्कृतिक सहयोग

डॉ. राखी कुशवाह

37/396, विद्यानगर, नागला पाडी, आगरा–282005 (उ.प्र.)

Email- rakhikushwah06@gmail.com Mobile No. 9548753120

डॉ विनोद खोब्रागडे

प्रोफेसर,राजनीति विज्ञान विभाग, बाबा साहब भीमराव अम्बेडकर, केन्द्रीय विश्वविद्यालय लखनऊ–226025 (उ.प्र.)

Email- vinoo_d2003@yahoo.com

सारांश

ऐतिहासिक दृष्टिकोण से भारत–रूस संबंध सांस्कृतिक क्षेत्र में मधुर तथा सुदृढ़ रहे हैं। वर्तमान समय में, दोनों देशों द्वारा लोगों से लोगों के मध्य संपर्क को विस्तृत करने के लिए सांस्कृतिक गतिविधियाँ तथा कार्यक्रमों को आयोजित किया जाता है। भारतीय भाषाओं जैसे तमिल, मराठी, गुजराती, बंगाली, उर्दू, हिंदी, संस्कृत और पाली में रूसी विशेषज्ञों द्वारा रूस में शिक्षा प्रदान की जाती हैं। हालांकि दोनों राष्ट्रों के मध्य वर्तमान रणनीतिक परिप्रेक्ष्य में बदलाव विद्यमान है। विशेष रूप से इस शोधपत्र के अन्तर्गत् भारत–रूस के सांस्कृतिक सहयोग से सम्बन्धित विदेश नीति का व्याख्यात्मक एवं 21 वीं शताब्दी में बदलते समकालीन सांस्कृतिक सहयोगों का विश्लेषणात्मक अध्ययन किया गया है। इसके अतिरिक्त उन तथ्यों तथा अवसरों को ज्ञात करने का प्रयास किया है जो दोनों देशों के मध्य दीर्घकालिक संबंधों को विकसित करने में महत्वपूर्ण भूमिका का निर्वहन कर सकते है।

प्रस्तावना

सोवियत संघ के विघटन के पश्चात् से एक स्वतंत्र राज्य के रूप में उत्पन्न हुए रूस को सोवियत संघ का उत्तराधिकारी होने का गौरवपूर्ण स्थान का अवसर प्राप्त हुआ। सोवियत विघटन के पश्चात् सार्वजनिक दृष्टिकोण से रूस के पूर्व राष्ट्रपति बोरिस येल्तसिन ने घोषणा की थी, कि रूस, भारत के साथ 'पांरपरिक रूप से अनुकूल संबंध' और द्विपक्षीय सहयोगों को निरन्तरता प्रदान करते हुए क्रियान्वित रखेगा। ऐतिहासिक संबंधों को पुर्नविकसित करने के लिये अक्टूबर 2000 में रूसी राष्ट्रपति पुतिन और पूर्व भारतीय प्रधानमंत्री अटल बिहारी वाजपेयी के नेतृत्व में "रणनीतिक साझेदारी एवं सहयोग" के समझौते पर हस्ताक्षर, मधुर संबंधों के रूप में अतिविशिष्ट है। इस समझौते का प्रमुख उद्देश्य द्विपक्षीय सहयोगों को विकसित करना तथा प्रतिवर्ष नियमित रूप से दोनों देशों द्वारा एक दूसरे के यहां शिखर सम्मेलनों का आयोजन करना

है।[1] इसके अतिरिक्त पुनः पुतिन की भारत यात्रा के दौरान दिसम्बर 2010 में 'रणनीतिक साझेदारी' के नामक स्थान पर "विशेष और विशेषाधिकारपूर्ण रणनीतिक साझेदारी" को महत्वपूर्ण स्थान प्रदान करते हुए संधि पर हस्ताक्षर किए गए।[2] यह सहयोग दोनों देशों के बीच मधुर रणनीतिक सम्बधों का महत्वपूर्ण उदाहरण है। सांस्कृतिक सहयोग के संदर्भ में भी दोनों देश एक–दूसरे के अत्यन्त समीप आए हैं। जैसा कि प्रधानमंत्री नरेन्द्र मोदी (2017) ने अपने वक्तव्य में कहा था कि, "भारत–रूस संबंध संस्कृति से सुरक्षा के मुद्दों तक जुड़े हुए हैं"।[3]

वर्तमान समय में रूस में, भारतीय अध्ययनों की एक सुदृढ़ परम्परा रही है। मॉस्को में स्थित भारतीय दूतावास में पंडित जवाहरलाल नेहरू के द्वारा जवाहरलाल नेहरू सांस्कृतिक केंद्र (जेएनसीसी) की स्थापना की गई, जिसके द्वारा रूस की सभी संस्थाओं के साथ घनिष्ठ संबंध स्थापित किए गए, जिसके अन्तर्गत निम्न संस्थान (मास्को) सम्मिलित हैं, मानवता के लिए रूसी राज्य विश्वविद्यालय (मास्को), ओरिएंटल अध्ययन संस्थान (मॉस्को), मॉस्को स्टेट यूनिवर्सिटी में एशियाई और अफ्रीकी अध्ययन संस्थान, सेंट पीटर्सबर्ग विश्वविद्यालय में अंतर्राष्ट्रीय संबंध के स्कूल, ओरिएंटल पांडुलिपि संस्थान (सेंट पीटर्सबर्ग), पीटर नृविज्ञान और नृवंशविज्ञान के महान संग्रहालय– सेंट पीटर्सबर्ग, सुदूर पूर्वी संघीय विश्वविद्यालय (व्लादिवोस्तोक), और रूसी सांस्कृतिक अनुसंधान संस्थान। जेएनसीसी के द्वारा प्रतिमाह लगभग 500 रूसी विद्यार्थियों को हिंदी, भारतीय नृत्य तथा संगीत एवं योगा में प्रशिक्षण दिया जाता है। इसके अतिरिक्त रूस के प्रमुख विश्वविद्यालयों और स्कूलों सहित लगभग 20 रूसी संस्थाओं में 1,500 रूसी विद्यार्थियों को हिंदी की शिक्षा दी जाती है। हिंदी के अलावा, रूसी संस्थानों में तमिल, मराठी, गुजराती, बंगाली, उर्दू, संस्कृत और पाली जैसी भाषाओं का अध्ययन कराया जाता है। महत्वपूर्ण रूप से, रूसी लोगों में भारतीय नृत्य, संगीत, योग और आयुर्वेद के प्रति अत्यधिक रुचि है। मॉस्को में स्थित दर्शनशास्त्र संस्थान में, भारतीय दर्शन के अध्ययन हेतु महात्मा गांधी पीठ स्थापित की गई।[4] इसके अतिरिक्त भारतीय संस्कृति मंत्रालय, रूस में भारतीय संस्कृति के प्रसार के लिए 20 से अधिक मैत्री समितियों/समाजों को अनुदान के रूप में प्रतिवर्ष लगभग 118 लाख रूपए प्रदान करता है। इन संस्थाओं के माध्यम से दोनों देशों के नागरिकों के लिए एक दूसरे के राष्ट्रों की संस्कृति व शिक्षा के ज्ञान को सीखने का एक महत्वपूर्ण सुअवसर है। ये संस्थाएं न केवल शिक्षा के ज्ञान के विस्तार तक सीमित है बल्कि दोनों राष्ट्रों के 'लोगों से लोगों' के मध्य सम्पर्क को बढ़ाने तथा सांस्कृतिक सहयोगों को विकसित करने में अनिवार्य रूप से योगदान दे रही हैं।

भारत–सोवियत रूस सांस्कृतिक संबंध

एक महाशक्ति एवं एक विकासशील देश के मध्य सर्वोत्कृष्ट संबंधों का उदाहरण भारत व सोवियत रूस संबंधों को माना जा सकता है। भारत–रूस के मध्य विभिन्न उतार–चढ़ावों के बावजूद कभी भी संघर्ष की सीमा तक न पहुँचने वाले संबंध, सांस्कृतिक सहयोग के स्वरूप की महान ऐतिहासिक पृष्ठभूमि में रहे हैं। यह न केवल भारत की स्वतन्त्रता पश्चात् से बल्कि स्वतन्त्रता से पूर्व भी दोनों देशों के मध्य सांस्कृतिक क्षेत्र में समन्वय रहा है। रूस में भारत की फिल्में, संगीत तथा नृत्य को अत्यधिक लोकप्रियता प्राप्त है।[5] इन ऐतिहासिक संबंधो ने दोनों राष्ट्रों के मध्य सद्भावना उत्पन्न करने में विशेष योगदान दिया है। उदाहरण स्वरूप, भारत के प्रधानमंत्री नरेंद्र मोदी ने अपनी टिप्पणी में कहा था कि, भारत में प्रत्येक बच्चा जानता है कि

रूस हमारे देश का सबसे बड़ा मित्र है और सबसे कठिन क्षणों में सदैव हमारे साथ खड़ा रहा ह।[6] 14 वीं शताब्दी में रूसी साम्राज्य की स्थापना और विस्तार के बाद से ही सदैव रूस को यूरोप की बड़ी महाशक्तियों में सम्मिलित किया गया। वास्तविकता यह है कि रूस सिर्फ यूरोपीय नहीं बल्कि एक यूरेशियाई शक्ति है। रूस की सांस्कृतिक पहचान जितना यूरोपीय है उतना ही एशियाई भी। इसके साक्ष्य–प्रमाण ग्यारहवीं एवं बारहवीं शताब्दी में रूसी लेखकों द्वारा भारत की जानकारी से सम्बन्धित रूचि के प्रथम दस्तावेज लैटिन कहानियों (रूसी रूपांतर) से मिलते है। इनमें प्रमुख कहानियां **"भारत के साथ संबंध'** एवं **'समृद्ध देश भारत की गाथा"** थी। इसके उपरांत भारत और सोवियत रूस के लोगों के मध्य संपर्क का इतिहास कई शताब्दियों पुराना रहा है।[7] Rosj (Tver) के एक रूसी व्यापारी, अफनासी निकितिन 1469 ई. में भारत पहुंचे और तीन वर्ष भारत में व्यतीत किए, जो की पंद्रहवीं शताब्दी में भारत की यात्रा करने वाले वे संभवतः प्रथम रूसी थे। निकितिन का यात्रा वृत्तांत, "A Journey Across Three Seas" में भारतीय संदर्भ का विस्तृत वर्णन मिलता है।[9] इसके अतिरिक्त सोवियत वृहत शब्दकोष में व्यापारी ग्रेशिम लेबेदेव और निकोलस रोरिक जैसे रूसी विद्वानों की भारत यात्रा का वर्णन भी मिलता है। इन्होने भारतीय संस्कृति एवं दर्शन के अध्ययन के साथ महाकाव्य 'महाभारत' का रूसी में अनुवाद भी किया। इसीलिए इन्हें प्रथम रूसी भारतीय विशेषज्ञ के नाम से सम्बोधित किया गया। रूसियों के साथ–साथ भारत के नागरिकों ने भी सोवियत रूस का भ्रमण कियाए जिसमें 17 वीं शताब्दी में बहुत से व्यापारियों ने न केवल सोवियत रूस की यात्रा की बल्कि कुछ गुजराती व्यापारी सोवियत रूस की परम्पराओं तथा संस्कृति से प्रभावित होकर अस्त्राखान क्षेत्र में जाकर सदैव के लिए रहने लगे।[10]

इन व्यापारियों के अतिरिक्त नवम्वर 1927 में नेहरू ने सोवियत संघ की यात्रा की। उस यात्रा के दौरान नेहरू सोवियत रूस की महान उपलब्धियां जैसे शिक्षा, स्त्री उद्धार तथा किसानों की स्थिति में सुधार से अत्यधिक प्रभावित हुए थे। मॉस्को की अपनी इस यात्रा के बाद, इन्होंने भारत में सोवियत रूस की उपलब्धियों की प्रशंसा की और समाजवाद के विचारों को लोकप्रिय बनाने का कार्य भी आरम्भ कर दिया था। सोवियत रूस से प्रभावित होकर नेहरू ने **''सोवियत रशिया''** पुस्तक लिखी।[11] इस कृति के अन्तर्गत रूस के भ्रमण का विषद् वर्णन करते हुए नेहरू ने लिखा है कि, ''सम्पूर्ण विश्व रूस को अवलोकित कर रहा है, कुछ भय और घृणा के साथ, और अन्य उत्साही आशा और उसकी राह पर चलने की लालसा के साथ''[12] इन्होंने रूस के सन्दर्भ में ब्रिटिश प्रचार के खिलाफ लिखा कि, ''हम, इंग्लैण्ड द्वारा सावधानी पूर्वक सिखाई गई, सोवियत रूस के प्रति शत्रुता की परम्परा में बड़े हुए हैं। पिछले अनेक वर्षो में हमको रूसी आक्रमण का भय दिखाया गया, और शस्त्रों पर किए जा रहे अपार व्यय का बहाना भी बनाया गया। दोनों देशों के बीच घनिष्ठ संबंधों के कारण यह कहा गया कि वर्तमान में दोनों देशों में इतनी समानता है कि कोई किसी का शोषण कर ही नहीं सकता है, और भारत के लिए लोभी होने का रूस का कोई आर्थिक अभिप्राय भी तो नहीं है'' सामान्यतया भारत और रूस को विवाद के न्यूनतम मुद्दों के साथ श्रेष्ठ पड़ोसियों की भाँति रहना चाहिए।[13] साथ ही कहा कि भारत जैसे गरीब विकासशील देशों को पूंजीवादी मार्ग का पालन करने की आवश्यकता नहीं है, बल्कि एक विकास मॉडल जिसमें सामाजिक न्याय, समानता और मानव गरिमा पर बल

दिया हो, को स्वीकारने की आवश्यकता है।[14] सोवियत रूस के इन पारम्परिक व सांस्कृतिक और राजनीतिक कृत्यों के आधार पर नेहरू न केवल सोवियत रूस के साथ घनिष्ठ और मैत्रीपूर्ण संबंध विकसित करने के लिए उत्साहित थे बल्कि सोवियत रूस की समाजवादी व्यवस्था से भी अधिक प्रभावित थे। हालांकि भारत और रूस के मध्य भारत स्वतंत्र होने से पूर्व ही सांस्कृतिक संबंध अत्यधिक महत्वपूर्ण हो चुके थे, जिसने भारत की विदेश नीति में महत्वपूर्ण भूमिका का निर्वहन किया।

सन् 1930 में रवीन्द्रनाथ टैगोर द्वारा भी रूस का दौरा किया गया था और वे सोवियत रूस की रचनात्मक शिक्षा के विस्तार से बहुत प्रभावित हुए थे। रूसी नागरिक भी रवीन्द्रनाथ टैगोर की कृति एंव कविताओं से प्रसन्न थे। महात्मा गाँधी अराजकतावादी कवि लियो टॉल्स्टॉय की पुस्तक "The Kingdom of God is Within You" में ग्रामीण, निश्चल–सरल जीवन व्यतीत करने की शैली की प्रेरणा के ज्ञान से प्रभावित हुए थे।[15] न केवल भारतीय बल्कि रूसी जन भी भारत की परम्पराओं एवं संस्कृति से अधिक प्रभावित थे। इसका सबसे अच्छा उदाहरण रूस में भारतीय फिल्में व संगीत के प्रति अधिक लोकप्रियता का होना था'' जिसमें सभी राज कपूर की फिल्मों, विशेष रूप से 'परदेशी' नामक फिल्म से अधिक प्रभावित थे और आवारा फिल्म का संगीत 'मुड़ मुड़ के ना देख मुड़ मुड़ के' तथा 'सिर पर लाल टोपी रूसी फिर भी दिल है हिन्दुस्तानी' जैसे गीतों के प्रशंसक थे और आज भी ये संगीत और भारतीय फिल्में रूसी प्रशंसकों की जुबान पर है।[16] इसके अतिरिक्त भारतीय चाय की भी रूस में अधिक लोकप्रियता है। साथ ही भारतीय योग रूस के प्रमुख शहरों और शहरी केंद्रों में लगातार लोकप्रिय होता जा रहा है। दोनों देशों के मध्य ऐतिहासिक, भाषा, खाद्यान्न, सिनेमा, साहित्य, जनजीवन शैली की बहुत अधिक समानताएँ विद्यमान हैं। इसका उदाहरण 1991 से 1996 तक हुए विभिन्न सांस्कृतिक आदान–प्रदान एवं समझौतों से अनुमानित किया जा सकता है। पूर्व भारतीय प्रधानमंत्री नरसिम्हाराव की जून, 1994 की यात्रा के दौरान भी विभिन्न समझौतों के साथ–साथ कई सामाजिक एवं सांस्कृतिक आदान–प्रदान के समझौतों पर हस्ताक्षर किए गए।[17] इस प्रकार दोनों देशों के मध्य 1971 व 1993 की मैत्री सन्धियों के अतिरिक्त 30 जून, 1994 के 'सहयोग के विकास एवं बढ़ोतरी संबंधित घोषणा' एवं 'बाहुल्यवादी राष्ट्रों के हितों की रक्षा संबंधित मास्को घोषणा' ने राष्ट्र स्तर पर सांस्कृतिक सहयोगों को सुदृढ़ता प्रदान की है तथा वर्ष 1996 में, रूसी जनता द्वारा भारत महोत्सव का उत्सव मनाना सांकृतिक संबंधों का प्रत्यक्ष प्रमाण है। ऐतिहासिक रूप से ये सभी छवियां भारत और रूस के बीच सांस्कृतिक संबंधों को घनिष्ठ बनाने में महत्वपूर्ण योगदान देती है।

21 वीं शताब्दी में भारत–रूस सांस्कृतिक सहयोग

21 वीं शताब्दी में दोनों देशों के मध्य जनमानस तक संबंधों को विकसित करने के लिए शिक्षा व सांस्कृतिक सहयोग के विस्तार पर अनिवार्य रूप से बल दिया गया है। उदाहरणस्वरूप, वर्ष 2001 की पूर्व प्रधानमंत्री अटल बिहारी वाजपेयी की यात्रा के समय शिक्षा संस्थानों में सहयोग से सम्बन्धित चार सहमति के ज्ञापनों (MoU) पर हस्ताक्षर किए गए। इसके अंतर्गत भारत ने भारतीय विद्या से जुड़े तीन पीठों एवं दो सहयोगी परियोजनाओं पर हस्ताक्षर किए, जिन संस्थानों के साथ समझौते हुए वे हैं – इन्स्टीट्यूट ऑफ ओरियण्टल स्टडीज (Institute

of OrientalStudies), रशियन अकेडमी ऑफ साइंसेज, मास्को (Russian Academy of Sciences] Moscow); सेंट पीटरबर्ग स्टेट यूनिवर्सिटी, सेंट पीटरबर्ग (Saint Petersburg State University, Saint Petersburg); कजान स्टेट यूनिवर्सिटी (Kazan State University), तातारस्तान एवं फॉरईस्ट नेशनल यूनिवर्सिटी, वलाडीवोस्तोक (Tatarstan andForest National University, Vladivostok)। प्रधानमंत्री वाजपेयी ने मास्को में 'इण्डो एशियन साईंस सेण्टर' (Indo - Asian Science Centre) उद्घाटित करने की भी घोषणा की थी। साथ ही दोनों राष्ट्रों के परामर्श पर नई दिल्ली में 'जैव प्रौद्योगिकी केंद्र' की स्थापना पर भी सहमति व्यक्त की गई थी। इस प्रकार से शिक्षा व सांस्कृतिक क्षेत्र में भी दोनों देशों के लोगों को और समीप लाने के प्रयास किए गए। दोनों देश एक–दूसरे के राष्ट्रों की संस्कृति के विस्तार के लिए नियमित रूप से प्रतिवर्ष सम्मेलनों का आयोजन, समितियों का गठन तथा समय–समय पर सांस्कृतिक महोत्सवों को मनाना इत्यादी ने सौहार्दपूर्ण संबंध सुदृढ़ किये। 26 सितम्बर से 4 अक्टूबर 2005 तक 'रूस में भारतीय दिवस' का आयोजन[18] तथा 2005–2006 में 'डेज ऑफ दी सिटीज मास्को एण्ड दिल्ली' कार्यक्रम के आदान–प्रदान की संरचना के अन्तर्गत सांस्कृतिक सहयोगों को प्रसाारित करने का कार्य सम्पन्न हुआ।[19] इसके अलावा दोनों देशों के लोगों के मध्य संपर्क को अग्रसित करने के उद्देश्य से कई अन्य सांस्कृतिक कार्यक्रमों का आयोजन किया गया हैं, जिसमें एक–दूसरे की संस्कृति के वर्षों का आयोजन शामिल है। रूस में भारतीय कला एवं संस्कृति, चित्रकला और कला वस्तुओं, विज्ञान और प्रौद्योगिकी इत्यादि के क्षेत्र में उपलब्धियों को दर्शाते हुए 150 से अधिक कार्यक्रमों के आयोजन सहित वर्ष 2008 को "भारत में रूस वर्ष" के रूप में 20 तथा वर्ष 2009 को "रूस में भारत वर्ष" के रूप में मनाया गया। इसी प्रकार से सितंबर 2011 में रवींद्रनाथ टैगोर की 150 वीं जयंती के अवसर पर रूस में भारतीय संस्कृति का महोत्सव तथा 4 अक्टूबर से 29 नवंबर, 2012 तक भारत में रूसी संस्कृति का उत्सव मनाया गया, क्योंकि वर्ष 2012 में भारत एवं रूस के कूटनीतिक संबंधों की स्थापना के 65 वर्ष पूर्ण हुए थे।[21] इसी दौरान 26–29 अक्टूबर, 2012 तक दिल्ली में 'मॉस्को के दिन' कार्यक्रम को आयोजित किया गया था।[22] भारत सरकार की वर्तमान रिपोर्ट के अनुसार, रूस में लगभग 15,000 भारतीय मूल के लोग निवास करते है तथा लगभग 4,500 भारतीय विद्यार्थी रूस की चिकित्सा एवं तकनीकी संस्थाओं में अध्ययन कर रहे है। इनमें से लगभग 90 प्रतिशत छात्र रूस के 20 विश्वविद्यालयों/संस्थानों में चिकित्सा सम्बन्धी अध्ययन कर रहे हैं।[23] रूस ITEC छात्रवृत्ति के लिए एक सक्रिय भागीदार देश रहा है, जिसमें 2018–19 में लगभग 76 रूसी लाभ उठा रहे हैं। वर्तमान में छात्रवृत्ति की संख्या प्रतिवर्ष लगातार बढ़ रही है।[24] पारस्परिक समझौते के अनुसार, भारत और रूस के बीच नियमित सांस्कृतिक आदान–प्रदान वर्श 2015 से हो रहा है। दोनों देशों द्वारा निरन्तर शैक्षिक परियोजनाओं, युवा आदान–प्रदान और पर्यटन को अधिक सक्रिय रूप से बल दिया जा रहा है। भारत के तत्कालीन राष्ट्रपति प्रणव मुखर्जी ने 10 मई 2015 को मॉस्को में भारतीय संस्कृति वर्ष ''नमस्ते भारत'' का उद्घाटन किया। ''नमस्ते भारत'' के भाग के रूप में इस अवसर पर रूस के 8 शहरों में 15 प्रदर्शनों की योजना का निर्माण किया गया था।[25] 21 जून, 2015 को, रूस में लगभग 45000 से अधिक योग उत्साहियों ने प्रथम अंतर्राष्ट्रीय योग दिवस मनाया।

अंतर्राष्ट्रीय सांस्कृतिक सम्मेलन के लिए भारतीय सांस्कृतिक संबंध परिषद (Indian Council for Cultural Relations : ICCR) के अध्यक्ष विनय सहस्रबुद्धे की अप्रैल 2018 की रूस यात्रा से दोनों देशों के मध्य द्विपक्षीय सांस्कृतिक संबंधों को पुनः प्रोत्साहन मिला। संस्कृति मंत्रालय द्वारा प्रदान किए गए अनुदान के माध्यम से भारतीय दूतावास ने क्रेमलिन पैलेस में 6 सितंबर 2018 से मार्च 2019 तक 'रूस में भारत समारोह' का भव्य उद्घाटन किया, जो की भारतीय संस्कृति के विभिन्न पहलुओं का प्रतिनिधित्व करने वाले दस समूहों के 34 प्रदर्शनों के साथ 22 रूसी शहरों में विस्तृत रूप से समारोह का आयोजन किया गया। जिसमें भारतीय संगीत, नृत्य, भोजन और आध्यात्मिक परंपराओं का सर्वश्रेष्ठ प्रदर्शन सम्मिलित था।[26] परम्परागत संस्कृति के अतिरिक्त दोनों देशों के लोगों के मध्य सांस्कृतिक संहयोग महात्मा गांधी, लियो टॉल्स्टॉय इत्यादी विचारको की विचारधाराओं से प्रभावित है। महात्मा गांधी की 150वीं जयंती के अवसर पर रूस द्वारा डिजिटल प्रदर्शनी और साइकिल रैली का आयोजन किया गया। 2 अक्टूबर को, महात्मा गांधी की 150 वीं जयंती के उपलक्ष्य और रूसी लेखक लियो टॉल्स्टॉय के साथ उनकी गहरी मित्रता के संदर्भ में एक दिवसीय प्रदर्शनी रूसी संघ के ड्यूमा द्वारा और भारत के सहयोग से 28 सितंबर, 2019 को यास्ना पोलीना में टॉल्स्टॉय संग्रहालय (Tolstoy Museum) तथा एस्टेट एण्ड इंस्टीट्यूट ऑफ ओरिएंटल स्टडीज (Estate and the Institute of Oriental Studies) के सहयोग से "टॉल्स्टॉय–गांधीः सार्वभौमिक प्रेम की अनंत संभावनाओं से बंधे महाद्वीपों में व्यक्तिगत परिवर्तनों की कहानी" वाले शीर्षक से प्रदर्शनी और अकादमिक सम्मेलन के आयोजन का शुभारम्भ किया गया था।

वर्तमान परिवर्तन

इन घनिष्ठ सांस्कृतिक सहयोगों के बावजूद भी दोनों देशों के मध्य परस्पर सांस्कृतिक सहयोगों में भी परिर्वतन विद्यमान है। शिक्षा के क्षेत्र में नियमित और बड़ा आदान–प्रदान होता था और हजारों भारतीय विद्यार्थी रूसी विश्वविद्यालयों मे अध्ययन करते थे। सैंकडों रूसी विशेषज्ञ भारत में रहते थे और बांधों के निर्माण, कोयला खाद्यानों और उद्योगों इत्यादि में सहायता प्रदान करते थे। रूसी भाषा के पाठ्यक्रमो में साधरणतः सबसे अधिक आवेदक होते थे। यही कारण था कि भारत में रूसी भाषा बोलने वालों की संख्या काफी अधिक थी, परन्तु वर्तमान में भारत की छवि पूर्व की भांति नही रही। रूसी भाषा के पाठयक्रमों में नामांकनों का अभाव हो गया हैं। वर्तमान में भारत और रूस के अभिजात वर्ग की कल्पना में दोनों देशों की प्रमुखता विलुप्त हो गयी है, परस्पर राष्ट्रों के एक दूसरे से मतभेद हो या पश्चिम की ओर ध्यान केंद्रित करने के कारण हो। इसलिए दोनों देशों में एक–दूसरे के प्रति जानकारी का गंभीर अभाव बढ़ रहा है।[27] पिछले दो वर्षों की तुलना में रूस में भारतीय पर्यटकों और भारत में रूसी पर्यटकों की संख्या में उल्लेखनीय अवमूल्यन हुआ है।[28] हालांकि दोनों ही देश एक दूसरे के नागरिकों तक आसानी से पहुंच बनाने तथा सम्पर्क को बढ़ाने के लिए कई कार्यक्रमों व योजनाओं को लागू करने पर बल दे रहे हैं। दोनों राष्ट्र सांस्कृतिक कार्यक्रमों के आदान–प्रदान को नवीनीकृत करने पर सहमत हुए तथा लोगों से लोगों के मध्य सम्पर्क को विकसित करने के लिए भारत और रूस ने वर्ष 2018 को ''पर्यटन वर्ष'' के रूप में मनाने का निर्णय लिया था। अब दोनों देशों के संबंधों का आधार केवल सहयोगी न होकर पारस्परिक और यथार्थवादी हो गया है, जो

राष्ट्रिय हितों से पूर्णतया प्रेरित हैं, क्योंकि भारत और रूस का अवधान अब पारस्परिक केन्द्रित न होकर अन्य देशों पर पूर्णतः अग्रसित हो रहा है। विशेष रूप से चीन और रूस के बीच सामरिक संबंध अत्यधिक मधुर हो चुके है। साथ ही रूस ने, भारत का पड़ोसी शत्रु पाकिस्तान के साथ संबंध विकसित कर चुका हैं। वहीं दूसरी ओर भारत की विदेश नीति में रूस के साथ रणनीतिक सहयोगों पर अत्यधिक बल न देकर संयुक्त राज्य अमेरिका की ओर अवधान अधिक अग्रसित किया जा रहा है। इसके कारणवश भारत–रूस के संबंधो में तनाव उत्पन्न हो रहा है। जिसका प्रभाव न केवल भारत और रूस के बीच सांस्कृतिक सहयोगों को प्रभावित कर रहा है बल्कि दोनों राष्ट्रों के रणनीतिक सहयोगात्मक संबंधों पर प्रभाव पड़ रहा हैं। अतः जिसके कारण दोनों देशों के कूटनीतिक संबंधों में पूर्व की अपेक्षा अधिक गिरावट उत्पन्न हुई है।

निष्कर्ष

भारत और रूस के मध्य ऐतिहासिक रूप से सांस्कृतिक संबंध मित्रतापूर्ण रहे हैं, जो दोनों राष्ट्रों के मध्य कूटनीतिक संबंधों को सुदृढ़ बनाने के लिए महत्वपूर्ण भूमिका का निर्वहन करते हैं। वर्तमान दृष्टिकोण से रूस में भारत की सांस्कृतिक लोकप्रियता के कारण इसे मृदुल शक्ति (Soft Power) का लाभ प्राप्त है। समकालीन भारत की विदेश नीति में सार्वजनिक कूटनीति (Public Diplomacy) के बढ़ते महत्व की दृष्टि से इसे भारत की उपलब्धि कहा जा सकता है। परंतु भारत और रूस के द्वारा बदलते सांस्कृतिक संबंधों को और अधिक सुदृढ़ तथा मधुर बनाने या पट्री पर लाने के लिए अनेक महत्वपूर्ण सुझाव अग्रलिखित है। भारतीय भाषाओ में रूसियों के हितों को ध्यान में रखते हुए, रूसी विश्वविद्यालयों में कुछ भारतीय–भाषाओं से सम्बधित कार्यक्रम प्रारम्भ किए जा सकते है। भारत को रूसी अध्ययन में पुनः निवेश करनें की आवश्यकता है और इस अध्ययन का क्षेत्र केवल भाषा, साहित्य तक सीमित न होकर, इतिहास और संस्कृति के दायरों तक विस्तारित हो। अतः इंडोलॉजीकल या रूसी अध्ययन के क्षेत्र में सांस्कृतिक सम्बन्ध, भारत–रूस संबंधों का एक पक्ष है और ये पूर्ण रूप से तब तक सफल नहीं हो सकता जब तक की भारत–रूस के कूटनीति संबंधों को सुदृढ़ न बनाया जाए। रूसी अध्येताओं ने दुःख के साथ बताया की एक वक्त था जब एक भारतीय पत्रकार स्थायी रूप से मास्को में रहा करता था। अब ऐसा नही है संस्कृति के आदान–प्रदान के लिए आईसीसीआर परियोजना का निर्माण कर सकता है जिसमें वह इंडोलॉजी अध्ययन के माध्यम से भारत–रूस के सहयोग में भागीदारी करना, समितियों का निर्माण तथा प्रतिलिपियों को संकलित किया जा सकता है। इसके अतिरिक्त दोनों पक्षों को इंडो–रशियन इंस्टीट्यूट ऑफ इंडोलॉजिकल स्टडीज की स्थापना हेतु सहयोग भी करना होगा।[29] साथ ही जनसंपर्क के साधनों में एक–दूसरे के सन्दर्भ में सूचना को आदान–प्रदान करने की आवश्यकता है और एक–दूसरे के विषय में जानकारी के प्रसारण को निश्चित रूप से बढ़ावा देने की आवश्यकता है। शैक्षणिक क्षेत्र में 'परस्पर वार्तालाप' को भी बढ़ावा दिया जाना चाहिए। भारत और रूस को एक प्रबुद्ध वर्ग के लोगों का समूह बनाना चाहिए जो समय–समय पर सरकार को कुछ इस तरह की समस्याओं का समाधान करने में सलाह दें। सरकारों को दोनों देशों में आसान और अपमूल्य (सस्ते) पर्यटन को बढ़ावा देना चाहिए ताकि दोनों राष्ट्रों के नागरिकों को एक बार फिर से दोनों स्थानों की समृद्ध सांस्कृतिक संपदा से परिचित हो सकें।[30]

वर्तमान समय में, भारत और रूस को एक महत्वपूर्ण सामरिक सहयोगी राष्ट्रों के रूप में माना जाता है, जो कि दोनों देशों के घनिष्ट मैत्रिपूर्ण संबंधों को दर्शाते है। इसीलिए दोनों देशों को संयुक्त रूप से ऐसे क्षेत्रों पर कार्य करने की आवश्यकता है, जिससे कि भविष्य में घनिष्ठ द्विपक्षीय सहयोगों की संभावनाओं में वृद्धि की जा सके। हालांकि दोनों राष्ट्र पारस्परिक सांस्कृतिक सहयोग में महत्वपूर्ण भूमिका का निर्वहन करते है। सांस्कृतिक सहयोग में नव विचार और साझेदारी को और अधिक विकसित करने के लिए नवीन आयाम एवं नवीन अवसरों के दृष्टिकोण को स्वीकारने की आवश्यकता हैं।

❐

सन्दर्भ –

1. *Sachdeva, G. (2011): "India's Relations with Russia" (edited by David Scott in book Hand Book of India's International Relations) London and New York: Routhledge, P. 213 at http://www.jnu.ac.in/sis/makingSISvisible/publications/IndiaRussiaHandbookG.saca.pdf accessed on 7/3/2017*
2. *Kugiel, P. (2013): "India - Russia Relations: An Enduring Patnership?" , Polski Instytuy Spraw Miedzynarodowych: The Polish Institute of International Affairs, No. 2 (455), P. 1 at available File/ //C:/Users/libcomp110Desktop/Bulletin.20PISM.20no.202.20(455),.202.20 . January. 20201. pdf accessed on 7/4/2017*
3. *Mitra, Arpita (2018): "Commentary: Exploring India-Russia Cultural Linkages at 70", Vivekananda International Foundation, **May 03, 2018 at available** https://www.vifindia.org/article/2018/may/03/exploring-india-russia-cultural-linkages-at-70 access on October 31, 2018*
4. *Government of India (2017): "India-Russia Relation" May/2017, at available http://www.mea.gov.in/Portal/ForeignRelation/India_Russia_May.pdf accessed on April/22/2019*
5. *Muni, S. D. (1993): "India and Its Neighbors: Persisting Dilemmas and New Opportunities", London: International Studies (SAGE), Volume-30, No. 2, April-June, April/1, P. 189 available at https://doi.org/10.1177/002088179303000 2006 accessed on November/09/2018*
6. *Embassy of India in Moscow (2017): "Ambassador Pankaj Saran's visit to Chechnya Republic", available at https://indianembassy-moscow.gov.in/70-years-of-india-russia-relations-a-historic-milestone.php accessed on June/30/2019*
7. *Kamalakaran, Ajay (2016): "From Tver to Calicut: Retracing Afanasy Nikitin's life in India", Moscow: Russia and India Report, August/5, available at http://in.rbth.com/arts/history/2016/08/06/from-tver-to-calicut-retracing-afanasy-nikitins-life-in-india_618137 accessed on June/21/2019*
8. *Gapanovich, J. J. (2015): "AfanasyNikitin's 'Journey across three seas", London: Journal of the Australasian Universities Language and Literature Association, Vol. 20, 1963-Issue 1, May/06, pp. 331-340,availableathttps://www.tandfonline.com/doi/abs/10.1179/aulla.20.1.009? journalCode =yjli19%20Google%20Scholar accessed on June/15/2019*
9. *Appadorai, Angadipuram and Rajan, Mannaraswamighala Sreeranga (1985): "India's Foreign Policy and Relations", New Delhi: South Asian Publishers, P. 115*
10. *Zabrodina, Ekaterina (2016): "The pioneering Russian cultural icon who created "magic" in India", Moscow: Russia and India Report, November/21, available at https://www.rbth.com/arts/people/2016/11/21/the-pioneering-russian-cultural-icon-who-created-magic-in-india_649725 accessed on June/23/2019*
11. *Foshko, Katherine (2011): "Re-energizing the India-Russia Relationship: Opportunities and Challenges for the 21st Century", Gateway House: Indian Council on Global Relations, No. 3, September, pp. 1-96, at available http://www.gatewayhouse.in/wp-content/uploads/2011/09/3.-India-Russia-Paper-PDF_no-crops.pdf accessed on April/18/2017*
12. *Nehru, Jawaharlal (1928): "Soviet Russia: Some Random sketches and Impression", Allahabad: Law Journal Press, Pp. 62-74*

13. *Nanda, Bal Ram (1998): "Jawaharlal Nehru: Rebel and Statements", London: Oxford University Press*
14. *Sikri, Rajiv (2009): "Challenge and Strategy: Rethinking India's Foreign Policy", London: SAGE, Pp. 153-54*
15. *Varma, Aparna (2017): "India Russia Relations: Pressing the Reset Button", EPRA International Journal of Economic and Business Review, Vol. 5, Issue-6, June, P. 111, available at https:// www.academia.edu/37798303/INDIA_RUSSIA_RELATIONS_PRESSING_THE_RESET_BUTTO Naccessed on February/2/2019*
16. *Tasn, Katherine Foshko (2012): "Re-Energizing the Indian-Russian Relationship: Opportunities and Challenges for the 21st Century", Jindal Journal of International Affairs, Vol. 2, Issue 1, August, P. 141, available at http://www.jsia.edu.in/wp-content/uploads/2019/03/katherine-re-energizing_0.pdf accessed on April/04/2017*
17. *Kaushik, Devendra (1998): "India and the Russia in the Post Cold War Period: Imperetive for Building a Strategic Relationship", Edited by LalitMansinghet. al. in book: Indian Foreign Policy: Agenda for the 21st Century, India: Foreign Service Institute, Volume 2, P. 295*
18. *Annual Report" (2005-2006): New Delhi: Ministry of External Affairs, P. 39, available at http:// www.mea.gov.in/Uploads/PublicationDocs/167_Annual-Report-2005-2006.pdf accessed on December 09, 2018*
19. *Annual Report" (2004-2005): New Delhi: Ministry of External Affairs, P. 47, available at http:// www.mea.gov.in/Uploads/PublicationDocs/166_Annual-Report-2004-2005.pdf accessed on December/06/2018*
20. *Annual Report" (2009-2010): New Delhi: Ministry of External Affairs, P. 36, available at https:// www.mea.gov.in/Uploads/PublicationDocs/169_Annual-Report-2007-2008.pdf accessed on December/09/2018*
21. *Riamei, Lungthuiyang (2013): "Sustaining Multi-Dimensional Indo-Russian Relations", in this Journal "AIR POWER Journal of Air Power and Space Studies", Vol. 8, No. 2 (April-June), P. 125, available at http://capsindia.org/files/documents/APJ-vol-8-no-2-Apr-Jun-2013.pdf accessed on 10/1/19*
22. *Government of India (2012): "India-Russia Relation", August/2012 available at http:// www.mea.gov.in/Portal/ForeignRelation/august-2012-russia-fr.pdf accessed on September/12/2017*
23. *Embassy of India (?): "Indian Community in Russia" available at http://www.indianembassy-moscow.gov.in/indian-community-in-russia.php accessed on October 07, 2022*
24. *Ministry of External Affairs, Government of India: "India-Russia Relation", January/2020, available at https://www.mea.gov.in/Portal/ForeignRelation/India_Russia_Jun_2020.pdf accessed on October 25, 2022*
25. *Government of India (2015): "India –Russia Relation", June/2015, available at http:// www.mea.gov.in/Portal/ForeignRelation/Russia_2015_07_hi.pdf accessed on Feb/03/2021*
26. *Annual Report" (2018-2019): New Delhi: Ministry of External Affairs, P. 100, available at http:// www.mea.gov.in/Uploads/PublicationDocs/31719_MEA_AR18_19.pdfaccessed on January/25/2020*
27. *Unnikrishnan, Nandan (2014): "India-Russia Relations: Looking Ahead", edit. By Rajiv K. Bhatia, Vijay Sakhuja et. al. in book: "India and Russia: Deepening the Strategic Partnership", New Delhi: Indian Council World Affairs, Pp. 13-16*
28. *Embassy of India in Moscow (2017): "Ambassador Pankaj Saran's visit to Chechnya Republic", available at https://indianembassy-moscow.gov.in/70-years-of-india-russia-relations-a-historic-milestone.php accessed on June/30/2019 29 Ibid, 3*
30. *Ibid, 27*

पूर्वदेवा– सामाजिक विज्ञान शोध पत्रिका
वर्ष 29, अंक, 116, जनवरी–मार्च, 2024 पृ. 118–121

UGC Care Listed Journal
ISSN 0974 -1100

भारतीय राजनीति एवं गांधीवादी दर्शन

लोकेश कुमार डेविड
शोधार्थी, इतिहास विभाग,शासकीय दिग्विजय स्वशासी स्नातकोत्तर महाविद्यालय, राजनांदगांव, (छ.ग.)
E.Mail ID: lokeshkumardavid@gmail.com Mob. 8766286657

डॉ. शैलेंद्र सिंह
शोध निर्देशक एवं इतिहास विभागाध्यक्ष,शासकीय दिग्विजय स्नातकोत्तर स्वशासी महाविद्यालय
राजनांदगांव (छ.ग.)

सारांश

प्राचीन समय से ही भारत में धर्म की तुलना में राज्य रूपी संस्था का महत्व कम रहा है गाँधी दर्शन का उद्देश्य ही राज्य संस्थाओं के सम्बन्ध में व्यापक सिद्धान्तों का अन्वेषण करना है। इसलिये प्राचीन भारतीय दर्शन में 'राजनीति' के बदले 'धर्मनीति' या 'राजधर्म' शब्द का अधिक प्रयोग हुआ, गाँधी जी ने पाश्चात्य राजनीतिक चिन्तन को दोषपूर्ण बताकर धर्म और अहिंसा के आधार पर राज्य की नवीन कल्पना प्रस्तुत की। पश्चिमी लोकतंत्र को गाँधी जी दोषपूर्ण एवं हिंसक मानते हैं अतः ऐसे राज्य से व्यक्ति का कल्याण सम्भव नहीं है। 'हिन्द स्वराज' नामक प्रसिद्ध पुस्तक में वर्तमान प्रचलित प्रणाली 'संसदीय लोकतंत्र की आलोचना करते हुए कहा है कि इसमें जन प्रतिनिधि दलगत राजनीति से प्रेरित होकर कार्य करते है। इनकी निष्ठा अपने दल के प्रति होती है न कि राज्य के प्रति। ये प्रतिनिधि जनता की भलाई के लिये कुछ भी नहीं कर पाते। ''अतः उनकी स्थिति उस वेश्या और वंध्याकृत महिला की स्थिति है जो क्रमशः न तो किसी के प्रति वफादार होती है और न जिसमें सृजन की क्षमता होती है।'' अतः स्वशासन (स्वराज) की गांधीवादी अवधारणा वास्तविक लोकतंत्र है, जहां लोगों की शक्ति व्यक्तियों में निहित होती है और प्रत्येक व्यक्ति यह महसूस करता है कि वह स्वयं का वास्तविक स्वामी है।

मूल शब्द– गांधी, मानवता, लोकतंत्र,अहिंसा, अपरिग्रह, राजधर्म, राजनीति,

भारतीय राष्ट्रीय आन्दोलन के सूत्रधार, संतों में राजनीतिज्ञ और राजनीतिज्ञों में सन्त,सत्य एवं अंहिसा के पुजारी विश्व मानवता के प्रतीक महात्मा गाँधी एक ऐसे महापुरुष थे जिन्होंने चिन्तन प्रक्रिया को सारगर्भित किया और आने वाली पीढ़ियों के लिये प्रकाश स्तम्भ की भाँति पथ प्रदर्शक का कार्य किये।[1] गाँधी जी साधनों की पवित्रता और चरित्र की उत्कृष्टता पर बल देते हुए सत्य, अहिंसा, राज्य सरकार, समाज, शासन और सत्याग्रह के सम्बन्ध में अपने मौलिक विचार प्रस्तुत किये जिन्हें गाँधी दर्शन कहा गया।

राज्य की सार्वभौमिकता के सम्बन्ध में कई प्रकार की विचारधाराएं विभिन्न विचारधाराओं अद्वैतवादी सिद्धान्त (हीगल, ऑस्टिन, हाब्स), बहुलवादी (फालेट, लास्की फिग्गिस, लिंडर्स, दुर्खीम) अराजकतावादी विचारधारा के विपरीत गाँधी जी न तो राज्य को ईश्वर या कानून के आधार पर निरपेक्ष, निरंकुश संप्रभुत्ता प्रदान करते हैं और न ही अराजकतावादियों के सामन सम्पूर्ण सत्ता सहित राज्य को ही समाप्त करना चाहते हैं।[2] गाँधी जी इस सम्बन्ध में अपना विचार समन्ववादी रूप में प्रस्तुत करते है। जो पश्चिमी राजनीतिक बहुलवाद के समीप है। इनका समर्थन इंग्लैण्ड में डॉ. फिग्गिस, लिंडसे, लास्की, फ्रांस ने लियोन डिग्वत तथा कावे करते है। गाँधी जी की सम्प्रभुत्ता का आधार मात्र जनता की इच्छा न होकर नैतिक शक्ति भी है।

गाँधी जी ने राज्य को निरपेक्ष तथा सार्वभौमिक राजसत्ता प्रदान नहीं की है क्योंकि उन्होंने तात्विक दृष्टि से संसार की सभी वस्तुओं को क्षणभंगुर बताया है और आध्यात्मिक वस्तुओं की प्रमाणिकता को स्वीकार किया है। गाँधी जी राज्य मुक्त समाज को ही आदर्श समाज मानते है और राज्य मुक्त समाज की स्थापना करना ही उनका प्रमुख लक्ष्य है। इस आदर्श समाज तक पहुँचने के लिये 'अहिंसक प्रजातंत्र' की पद्धति को उपयुक्त माना है। उनका मानना है कि हिंसा और प्रजातंत्र एक साथ नाव में सवार नहीं हो सकते। हिंसात्मक साधन विरोधियों की इच्छाओं तथा विचारों का दमन होता है। इससे व्यक्ति की स्वतंत्रता की हत्या हो जाती है। गाँधी जी के आदर्श अहिंसक राज्य में पूर्वाग्रह, अज्ञान और अंधविश्वासों के लिये कोई स्थान नहीं है। यह पूर्णतः ज्ञान और अनुशासन पर आधारित है। आदर्श राज्य में सभी प्रकार के शोषण के अंत एवं सबको प्रगति करने के लिए समान अवसर उपलब्ध कराने की बात करते है। अतः इससे सबल और दुर्बल सभी को विकास का समान अवसर मिलता है। आदर्श राज्य जिसको 'रामराज्य' कहा है वह धर्मनिरपेक्ष एवं सहिष्णुता पर आधारित होगा जिसमें सभी को विचार अभिव्यक्ति की स्वतंत्रता प्राप्त होगी। गाँधी जी अपराधियों के साथ सुधारात्मक व्यवहार करने पर जोर देते है तथा उनके साथ रोगी के समान व्यवहार करने पर बल देते है। जेल ऐसे रोगियों का उपचार केन्द्र होगा जहाँ उनका मानसिक उपचार किया जायेगा। जेल पदाधिकारी डॉक्टर के समान व्यवहार करेंगे और उन्हें अपना मित्र मानेंगे। अहिंसक राज्य में सेना प्रयोग करना वर्जित मानते हैं तथा कहते है कि सेना मनुष्य के आत्मा का विनाश करती है। अतः सच्चे प्रजातंत्र में हिंसा और सेना का प्रयोग नहीं होना चाहिए।

अहिंसक राज्य के संगठन के बारे में विकेन्द्रीकरण के सिद्धान्त पर बल देते हैं और इसको राजनीतिक व आर्थिक दोनों ही क्षेत्रों में लागू करने की बात करते है । शक्ति के केन्द्रीकरण को शोषण का मुख्य आधार मानते हुए इसको हिंसा का केन्द्रबिन्दु मानते है। विकेन्द्रीकरण के अन्तर्गत प्रत्येक गाँव, संस्था तथा व्यक्ति को पूर्णरूपेण विकास करने का अवसर मिलता है।[3] गाँधी जी देश की आर्थिक व सामाजिक स्थिति को बिगड़ने का कारण केन्द्रीकरण को मानते हैं। उनका मानना है कि अहिंसक राज्य स्वालम्बी, स्वशासित तथा सत्याग्रही गाँवों का संघ होगा जो स्वेच्छा पर आधारित होगा। प्रत्येक गाँव अपने सम्पूर्ण अधिकारों का प्रयोग एक पंचायत के आधार पर करेगा। ये गाँव नैतिक एवं अहिंसक दृष्टि से इतने शक्तिशाली होंगे कि सत्याग्रह के माध्यम से अपनी पूर्ण सुरक्षा कर लेंगे। ग्राम का प्रत्येक नागरिक ग्राम समाज की रक्षा के लिये तत्पर रहेगा। प्रत्येक ग्राम पूर्णतः स्वतंत्र होगा। गाँवों के माध्यम से राज्य को शक्ति

मिलेगी और राज्य के माध्यम से गाँवों को अहिंसक राज्य में अनेक स्वतंत्र संगठन होंगे किन्तु उनमें कोई भी ऊँचा, छोटा या बड़ा नहीं होगा। व्यक्ति–व्यक्ति, गाँव–गाँव तथा अन्य सभी संस्थाओं का आपस में समान सम्बन्ध होगा और वे एक–दूसरे की स्वैच्छिक एवं समयानुकूल सहायता करते रहेंगे यह सहायता स्वतंत्रता व स्वेच्छा पर आधारित होगा।

गाँधी जी के 'अहिंसक राज्य के कार्य के सम्बन्ध में मुख्यतः दो प्रकारों का उल्लेख किया है प्रथम, वह सभी प्रकार के नागरिकों–के सर्वांगीण विकास के लिये सबों समान अवसर प्रदान करेगा।[4] द्वितीय, यह ऐसे कार्यों को करेगा जो छोटी–छोटी संस्थाओं के द्वारा नहीं किया जा सकता, परन्तु उसका होना जनता के हित के लिये आवश्यक है। यदि किसी ऐसे विशाल उद्योग की स्थापना की आवश्यकता हुई जिसे व्यक्ति ट्रस्टीशिप की भावना के अनुसार नहीं संचालित कर सकता तो राज्य राष्ट्रीयकरण के माध्यम से से उसे हाथ में ले लेगा। गाँधी जी ने अहिंसक राज्य का आधार 'लोक–शक्ति' को मानते हैं अतः ये ग्राम स्वराज की स्थापना के पक्षधर थे। गाँधी जी ने कहा है कि शोषण एवं अन्याय के लिाफ जनता द्वारा इस लोक शान्ति जब राज्य को धारण कर लेती है तो लोक सत्ता कहलाती है। अतः वे लोकशक्ति को जनता के बीच से विकसित करके लोकसत्ता तक पहुँचाना चाहते थे।

गाँधी जी के राज्य सिद्धान्त की प्रासंगिकता खत्म नहीं हुई तथा इसकी उपयोगिता बनी हुई है। आजादी के बाद देश के सामने सबसे बड़ी समस्या ही अहिंसक रूप में सरकार को किस प्रकार चलाया जाय। अहिंसा का भविष्य उतना उज्ज्वल नहीं हो सकता जब तक कि विश्व की शक्ति के सामने भारत अपनी आजादी को कायम रखने के लिये समर्थ न हो जाय। चूँकि गाँधी जी मशीनीकरण के विरोधी थे फिर भी अपनी शक्ति बढाने के लिये भारत में जिन विशाल योजनाओं का लक्ष्य बनाया गया चाहे वे औद्योगिक क्षेत्र हो या कृषि उसमें गाँधी जी के सिद्धान्तों को ही अपनाया गया। वर्तमान समय में देश की आवश्यकताओं को गाँधी जी के समाजवादी चिन्तन के आधार पर ही हल किया जा रहा है। आज जहाँ समाज की आवश्यकताओं की पूर्ति के लिये बड़े–बड़े स्वचालित उद्योग हैं वहीं लघु उद्योग कुटीर उद्योग, हथकरघा एवं हस्तकला को भी अपनाया गया है। भारत की पंचवर्षीय योजनाओं एवं सामुदायिक विकास कार्यक्रम को अपनाने का आधार गाँधी दर्शन ही है।[5]

लोकतंत्र की जो बुराईयां वर्तमान समय में दिख रही है, साथ ही मानवीय नैतिकता का ह्रास होकर हिंसात्मक समाज का जो नूतन रूप सामने दिखाई दे रहा है उससे गाँधी जी अज्ञात नहीं थे इसीलिये उन्होंने तत्कालीन समय में उस अहिंसात्मक समाज और रामराज्य की कल्पना की जिसमें राज्य शक्ति प्रबल न होकर नैतिक शाक्ति प्रबल हो और शासन के संदर्भ रामराज्य एवं अहिंसात्मक प्रजातंत्र की स्थापना हो। अहिंसात्मक प्रजातंत्र में उन्होंने जितनी भी व्यवस्थाओं, पुलिस, जेल, न्यायालय आदि को जो स्वरूप चित्रित किया उसका प्रभाव वर्तमान व्यवस्था में स्पष्ट दिखाई दे रहा है आज का राज्य संगठन की दृष्टि में गाँधी जी के विकेन्द्रीकरण के सिद्धान्त के आधार पर ही कार्यशील है। ग्राम पंचायत का जो स्वरूप आज दिखाई दे रहा है वह निश्चय ही गाँधी जी के ग्राम स्वराज की ही देन है। क्योंकि सर्वप्रथम उन्होंने ही कहा था कि भारत गाँवों का देश है अतः उसे पूर्ण स्वतंत्रता प्राप्त होनी चाहिए।

राष्ट्रीय ही नहीं वरन् अन्तर्राष्ट्रीय स्तर पर भी इनकी प्रासंगिकता बनी हुई है। उन्होंने सभी छोटे–छोटे सम्बन्धों को समेटकर विश्व परिवार से सम्बन्धित कर दिया और विश्व शान्ति की वकालत करके विश्व अहिंसक समाज की जो कल्पना की उसकी प्रासंगिकता वर्तमान समय में भी महसूस की जा रही है।[6] दो महायुद्धों को झेल चुकी विश्व के समझ ज्वलन्त समस्या है विश्व शांति की स्थापना । विश्व में एक तरफ जहाँ शांति का मार्ग खोजा जा रहा है वही दूसरी तरफ भीषण नर–संहारक यंत्रों का विकास व अविष्कार होता जा रहा है। ऐसे में वर्तमान परिप्रेक्ष्य में गाँधी दर्शन और प्रासंगिक होता जा रहा है क्योंकि गाँधी जी का मानना था कि जिसके हाथ खून से सने हुए है, वे अहिंसक विश्व का निर्माण नहीं कर सकते। अतः विश्व शांति की स्थापना में गाँधी विचार दर्शन एवं राज्य सिद्धान्त का महती जरूरत है।

निष्कर्ष

रोमेन रोलैंड ने महात्मा के कार्यों के नैतिक महत्व को पहचाना था। आइंस्टीन और टैगोर दोनों ने गांधी के आध्यात्मिक महत्व की गवाही दी। ऐसे समय में, जब सांस्कृतिक मानदंड ढह रहे हैं और सभ्यता की संरचना खतरे में है, गांधी दर्शन, जो मानव जाति की मुक्ति के लिए समर्पित लोगों के लिए शक्ति का एक बड़ा स्रोत है। संक्षिप्त रूप में कहा जा सकता है कि गाँधी का राज्य सिद्धान्त एक कोरा राजनीतिक सिद्धान्त नहीं है बल्कि वह एक ऐसा सन्देश है जिससे मानव जीवन व समाज में शक्ति का संचार होता है साथ ही मानव मूल्यों में वृद्धि होती है आज की वैज्ञानिक व औद्योगिक सभ्यता में मानव का अपना मूल्य ही समाप्त हो चुका है ऐसे में गाँधी जी का औचित्य प्रासंगिक है क्योंकि वे मानव मूल्यों को समस्त संस्थाओं से ऊपर स्थापित कर के उसकी उपयोगिता सिद्ध करते है, साथ ही राज्यों की राजनीति में 'राज' से अधिक 'नीति' पर बल देकर रामराज्य की स्थापना को महत्व प्रदान करते हैं जो कि वर्तमान व्यवस्था के लिये आदर्श बन गया है।

❒

सन्दर्भ –

1. *भावे, वी., :लोकतांत्रिक मूल्य (काशी सर्व सेवा संघ)*
2. *प्रसाद, डॉ. उपेन्द्र : गाँधीवादी समाजवाद, नई दिल्ली, नमन प्रकाशन*
3. *कुंजरू, एचएन, :"आध्यात्मिक राजनीति", महात्मा गांधी –100 वर्ष*
4. *नारायण, जेपीः भारतीय राजनीति के पुनर्निर्माण के लिए एक दलील*
5. *दामोदरन, के. : भारतीय चिन्तन परम्परा नई दिल्ली, पीपुल्स पब्लिशिंग हाउस प्रा.लि.*
6. *महात्मा गांधी का राजनीतिक दर्शनः यंग इंडिया(मेरा आदर्श समान वितरण है)*

पूर्वदेवा– सामाजिक विज्ञान शोध पत्रिका
वर्ष 29, अंक, 116, जनवरी–मार्च, 2024 पृ. 122–131

UGC Care Listed Journal
ISSN 0974 -1100

कार्योजित महिलाए एवं बच्चों की देखभाल एक समाजशास्त्रीय अध्ययन

संजय कुमार
शोधार्थी, समाजशास्त्र विभाग, सामाजिक विज्ञान संकाय काशी हिन्दू विश्वविद्यालय, वाराणसी
Email - sanjaysocio5@bhu.ac.in
डॉ. पंकज सिंह
सहायक आचार्य, समाजशास्त्र विभाग, सामाजिक विज्ञान संकाय काशी हिन्दू विश्वविद्यालय, वाराणसी
Email - pankajsocio@bhu.ac.ink

सारांश

परंपरागत समाज महिलाओ को एक गृहणी महिला के नजरिए से ही देखता रहा हैं, लेकिन पिछले कुछ दशकों में स्त्री शिक्षा और जेंडर समानतावादी कानून के प्रचार–प्रसार व कार्यान्वयन के बाद समाज में बड़ा बदलाव आया। जिसके परिणाम स्वरूप महिलाएं घर से बाहर निकल कर पुरुषों के साथ कंधे से कंधा मिलाकर सभी क्षेत्रों में प्रतिभाग करना शुरू किया और विभिन्न कार्यक्षेत्र में अपनी सफलता को सुनिश्चित किया हैं। महिलाओं का बाहरी कार्य क्षेत्र में विस्तार तो हुआ लेकिन उनकि परंपरागत भूमिका यथावत बनी रही जैसे बच्चे की देखभाल, गृह प्रबंधन का कार्य, बड़े और वृद्धों की सेवा करना आदि उसका नैतिक कर्तव्य माना जाता हैं। परिणाम स्वरूप दोहरी भूमिकाओं के निर्वहन में उसे अनेक समस्याओं का सामना करना पड़ता हैं। प्रस्तुत शोधपत्र का उद्देश्य, दोहरी भूमिका निर्वहन के फलस्वरुप बच्चों के पालन–पोषण एवं समाजीकरण पर पड़ने वाले प्रभाव और कार्यस्थल पर जाने के बाद बच्चों की देखभाल में आने वाली समस्या को जानना हैं। जिसका अध्ययन क्षेत्र वाराणसी जिले का काशी विद्यापीठ ब्लाक हैं। इस अध्ययन को पूर्ण करने के लिए अन्वेषणात्मक सह विवरणात्मक शोध प्रारूप व शोध की सुविधानुसार उद्देशात्मक प्रतिचयन का प्रयोग किया गया है । आंकड़े एकत्र करने हेतु साक्षात्कार अनुसूची का प्रयोग किया गया हैं ।

प्रमुख शब्द– कार्योजित महिला, देखभाल, दोहरी भूमिका, पालन–पोषण, समाजीकरण

प्रस्तावना

भारतीय समाज सदैव संस्कृति प्रधान एवं धर्म प्रधान देश रहा हैं। समाज में पुरुषों द्वारा किए गए कार्य जितने महत्वपूर्ण होते हैं उतने ही महिलाओं द्वारा किए गए कार्य भी होते हैं। मानव समाज का अवयव परिवार, जिसकी कल्पना बिना महिलाओं के नहीं की जा सकती

समाज का सबसे महत्वपूर्ण स्थान हैं । एक शिक्षित व्यक्ति के लिए नौकरी या व्यवसाय अर्थप्राप्ति का एक सहज व उपयोगी साधन होता हैं। स्वतंत्रता प्राप्ति के बाद सामाजिक और आर्थिक क्षेत्रों में परिवर्तन के कारण पुरुषों के साथ महिलाओ ने भी नौकरी पेशे के क्षेत्र में अपनी जगह बनाना शुरू कर दिया हैं। पिछले कुछ दशकों में स्त्री शिक्षा और जेंडर समानतावादी कानून के प्रचार–प्रसार व कार्यान्वयन के बाद समाज में बड़ा बदलाव आया है, लेकिन परंपरागत भारतीय समाज में महिलाओं के लिए नौकरी एवं व्यवसाय क्षेत्र में समानतावादी अवसर उपलब्ध नहीं थे। महिलाओं के कार्य घरेलू कार्यो तक ही सीमित थे, परंतु महिलाओं ने भी स्वतंत्रता के बाद समान अधिकारों की प्राप्ति और अनेक महिलाओं से संबंधित कानूनी अधिकार के परिणाम स्वरूप पुरुषों के साथ कंधे से कंधा मिलाकर सभी क्षेत्रों में अपनी भागीदारी को सुनिश्चित किया हैं।

आधुनिक समय में महिलाओं को कार्यक्षेत्र में भागीदारी होने के बावजूद परंपरागत पारिवारिक जिम्मेदारीयों का निर्वहन करना उसका प्राथमिक कर्तव्य समझा जाता हैं। अतः कार्योजित महिला को व्यवसायिक क्षेत्र के कार्य एवं पारिवारिक जिम्मेदारियों के मध्य समजस्य बनाने में भूमिका संघर्ष एवं तनाव का सामना करना पड़ता हैं। इससे कार्यस्थल पर कार्योजित महिला के कार्य सम्पादन पर नकारात्मक प्रभाव पड़ता हैं। यह स्थिति तब और भी जटिल हो जाती हैं जब उनके बच्चे शिशुवस्था या बाल्यावस्था में होते हैं।

बच्चे की देखभाल को एक विशेष प्रकार के कार्य के रूप में माना गया है क्योंकि बच्चे और देखभाल करने वाली मां या अन्य परिवारिक महिला के बीच एक भावनात्मक लगाव होता है जो देखभाल करने के दौरान उत्पन्न हो जाता हैं (Lorber 1994)[1] इसलिए भावनात्मक कार्य को आमतौर पर न तो महत्वपूर्ण कार्य की मान्यता दी जाती है और ना ही उसे मूल्यपरक कार्य समझा जाता हैं। कार्यस्थल पर जाते समय कार्योजित महिला अपने बच्चे को किस की देखरेख में छोड़े जिससे उसका पालन–पोषण देखरेख अच्छी तरह से हो सके यह प्रश्न उसके सामने एक विकट एवं धर्म संकट जैसी स्थिति पैदा करता हैं (Hochschild 1979)[2] जहां एक परिवार में पति एवं पत्नी दोनों कार्योजित हो बच्चे की उचित देखभाल करने की कठिन समस्या आ जाती हैं।

अवधारणात्मक पृष्ठभूमि

कार्योजित महिला– कार्योजित महिला प्रायः शब्द नौकरी करने वाली महिलाओं के संदर्भ में प्रयोग किया जाता है अर्थात वे महिलाएं जो नियमबद्ध रूप से बाहर आर्थिक और व्यवसाय कार्यों में संलग्न रहती है।

"कार्योजित महिला शब्द उन महिलाओं के लिए प्रयोग किया जाता है जो वेतन वाले कार्यों में लगी है" यहां पर कार्य करने से तात्पर्य स्वयं काम करना ही नहीं बल्कि दूसरे से काम लेना तथा उसके कार्यों की निगरानी करना व निर्देशित करना आदि भी शामिल है।

बच्चे की देखभाल– एक बच्चे की देखभाल उसके माता–पिता के अलावा अन्य किसी व्यक्ति द्वारा की जाने वाली देखभाल से है जिसमे उसके भोजन, साफ–सफाई, सोते व खेलते समय उसका ध्यान रखा जाता है। बच्चे की देखभाल उसके घर पर, देखभाल करने वाले के घर

पर, या एक पेशेवर केंद्र (डे केयर सेंटर) पर की जा सकती है देखभाल की अवधि माता–पिता की सुविधा अनुसार हो सकती है।

बच्चे की देखभाल के प्रकार

शिशुवस्था या बाल्यावस्था के बच्चे की देखभाल को निम्नलिखित स्वरूपों मे देख सकते हैं ।

1. माता पिता के द्वार देखभाल–बच्चे के माता पिता या अभिभावक द्वारा देखभाल, घर पर या कार्यस्थल पर ।
2. नातेदारी सदस्य के द्वारा देखभाल–बच्चे के नातेदारी द्वारा देखभाल, बच्चे के घर पर या कहीं और देखभाल।
3. फेमिली डेकेयर–बच्चे के परिवार और रिश्तेदारों के अलावा किसी फैमिली डे केयर प्रोवाइडर द्वारा देखभाल की जाती है जो प्राय बच्चे के घर से दूर होता हैं।
4. आया या दाई द्वारा देखभाल–बच्चे के घर में किसी ऐसे व्यक्ति द्वारा बच्चे की देखभाल किया जाता है जो एक सेवा प्रदाता होती है जिसे आया या दाई कहते हैं उसको उसके इस कार्य के लिए बदले एक निश्चित कीमत अदा की जाती ह ।
5. औपचारिक डे केयर–बच्चे की देखभाल औपचारिक डे केयर सेंटर के माध्यम से की जाती है।
6. परिवार द्वारा देखभाल–इसमें माता–पिता के अलावा किसी अन्य पारिवारिक सदस्य जैसे दादा–दादी, चाचा–चाची, बुआ, बड़े भाई–बहन आदि द्वारा बच्चे की देखभाल की जाती हैं ।(Boushey and Wright 2004)[3]

साहित्य पूर्वावलोकनः

De Laat, J (1999)[4], बहुत से परिवारों में महिलाओ की भूमिका एक मुखिया के रूप में हैं। इनकी जिम्मेदारी बच्चों का पालन–पोषण और आय अर्जन करना दोनों हैं। कई मामलों में मां ही सिर्फ कमाने वाली होती हैं। बच्चे वाले कई परिवार में दिनभर माता–पिता में से कोई भी उपलब्ध नहीं होता हैं। बच्चे की देखभाल गैर पारिवारिक सदस्य के माध्यम से या दादा–दादी द्वारा की जाती हैं। कई परिवारों में बच्चे स्कूल के बाद अकेले ही होते हैं, जहां पहले बच्चे की देखभाल की जिम्मेदारी मां की होती थी अब माता–पिता जिम्मेदारियों को शेयर करने के लिए तैयार रहते हैं।

Hoffman & Lise Young blade (2000)[5], ने अपने अध्ययन में पाया कि फुल टाइम जॉब करना सिर्फ बच्चों के लिए अच्छा नहीं था बल्कि काम करने वाली महिलाएं कम तनाव में थी और उनका मनोबल ऊंचा था, तुलनात्मक रूप से गृहणी या घर पर रहने वाली महिलाओं की अपेक्षा । आर्थिक रूप से आत्मनिर्भर होने पर वह सशक्त महसूस करती थी कोई आर्थिक संकट आने पर उनका निवारण आसानी से कर लेती थी ।

तिवारी एवं सिंह (2005)[6], का अध्ययन बताता है कि माताओं का महत्वपूर्ण योगदान प्रीस्कूल स्तर पर बच्चों की मानसिक प्रक्रिया के विकास में होता हैं । इस अध्ययन में पाया गया कि मात शिक्षा बच्चों की मानसिक क्षमता पर एक महत्वपूर्ण प्रभाव डालती हैं ।

Guttmacher (2006)[7], ने अपने लेख में यह बताया कि डे केयर सेंटर में समय बिताने वाले बच्चों पर सकारात्मक प्रभाव होता है क्योंकि वे अपने उम्र के बच्चों के साथ बातचीत करना सीखते हैं। हालांकि विपरीत मत भी है कुछ माँ यह भी मनती है कि अपने बच्चों को जल्दी डे केयर सेंटर में भेजना अच्छा निर्णय नहीं था क्योंकि उनके बच्चे अधिक आक्रामक और बात को ना मानने वाले व्यवहार की प्रव त्ति को अपना रहे थे ।

Cuddy (2013)[8], ने बताया कि समाज में महिलाओं को अक्सर बच्चे की देखभाल के लिए पर्याप्त समय नहीं देने के लिए आलोचना की जाती है जबकि पुरुषों को अपने बच्चे के साथ बिताए गए थोड़े समय के लिए प्रशंसा मिलती है जो महिलाओं में अधिक अपराध बोध का कारण बनता हैं ।

अध्ययन के उद्देश्य

दोहरी भूमिका निभाने के फलस्वरूप उनके बच्चों के पालन पोषण एवं सामाजिकरण पर पडने वाले प्रभाव ज्ञात करना ।

कार्यस्थल पर जाने के बाद बच्चों की देखभाल में आने वाली समस्या को ज्ञात करना ।

शोध प्रश्न

दोहरी भूमिका निभाने के फलस्वरुप उनके बच्चे के पालन पोषण एवं समाजीकरण पर क्या प्रभाव पड़ता हैं ।

कार्योजित महिला द्वारा कार्यस्थल पर जाने के बाद बच्चों की देखभाल में क्या समस्या आती हैं ।

पद्धतिशास्त्र

प्रस्तुत अध्ययन वाराणसी जिले के काशी विद्यापीठ ब्लाक में निजी स्कूल की शिक्षिकाओं पर आधारित हैं । वाराणसी जिले के निजी स्कूल में कार्यरत शिक्षिकाओं पर आधारित उपर्युक्त शोध का अभाव हैं । यह शोध पत्र पच्चास उत्तरदाताओं पर आधारित हैं । इस शोध पत्र में उत्तरदाता निजी स्कूल की शिक्षिकाओं के रूप में कार्यरत उन माताओं को चुना गया है जिनके बच्चे की आयु पाँच वर्ष या उससे कम हैं। इस अध्ययन को पूर्ण करने के लिए अन्वेषणात्मक सह विवरणात्मक शोध प्रारूप का प्रयोग किया गया हैं तथा शोधकर्ता द्वारा आकड़ा संकलन हेतु उद्देश्यात्मक प्रतिचयन का प्रयोग किया गया हैं । समय सीमा के अंदर शोधपूर्ण करने के उद्देश्य को ध्यान में रखते हुए प्राथमिक आंकड़े एकत्र करने हेतु साक्षात्कार अनुसूची का प्रयोग किया गया हैं।

क्षेत्र कार्य पर आधारित आंकड़ा विश्लेषण

सामाजिक अनुसंधान में व्यक्ति की सामाजिक–आर्थिक पृष्ठभूमि की एक महत्वपूर्ण भूमिका होती है, क्योंकि व्यक्ति का व्यवहार, मूल्य, मनोवृति तथा वैचारिक दृष्टिकोण उसके सामाजिक आर्थिक पृष्ठभूमि से प्रभावित होती हैं । इस पृष्ठभूमि के माध्यम से ही स्पष्ट होता है कि व्यक्ति किस प्रकार के वातावरण या माहौल से प्रेरित होकर समाज में अपनी कार्य करने की शक्ति को स्थापित करना चाहता हैं । व्यक्ति की सामाजिक प्रस्थिति में बदलाव होने के कारण उसकी भूमिका में भी बदलाव की संभावना बढ़ जाती हैं। अतः अध्ययन से संबंधित उत्तरदाताओं की व्यक्तिगत पृष्ठभूमि के विषय में सामान्य जानकारी उपलब्ध होने पर ही कोई भी शोधकर्ता उसके व्यवहार, मूल्य, मनोवृति तथा वैचारिक दृष्टिकोण का विश्लेषण प्रस्तुत करता हैं।

आयु (वर्ष में) के आधार पर उत्तरदात्रियों के वर्गीकरण में सबसे अधिक 60 % उत्तरदात्री 26–35 आयु वर्ग के बीच पायी गयी हैं, जबकि 24 % उत्तरदात्री 36–50 आयु वर्ग के बीच हैं। इसके अलावा 16 % उत्तरदात्री 18–25 आयु वर्ग के बीच की हैं।

मासिक आय के आधार पर आंकड़ों के विश्लेषण से ज्ञात होता है कि 72: उत्तरदात्री की मासिक आय 0–10 हजार रुपये के मध्य हैं, जबकि 28 % उत्तरदात्री की मासिक आय 11– 20 हजार रुपये के मध्य हैं ।

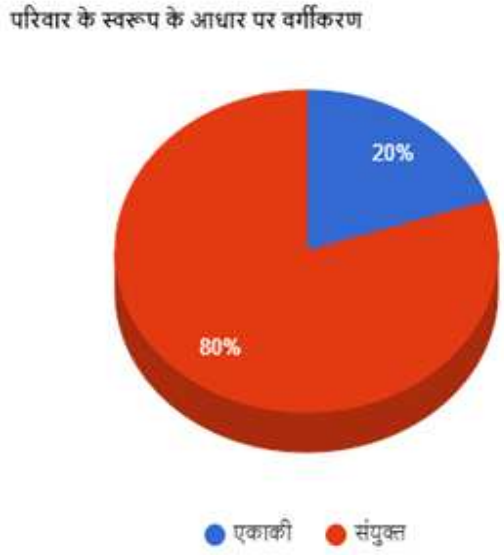

उपर्युक्त सारणी के आधार पर स्पष्ट होता है कि सबसे अधिक 80 % उत्तरदात्री संयुक्त परिवार से हैं, जबकि 20 % उत्तरदात्री एकाकी परिवार से हैं ।

वर्तमान नौकरी से संतुष्टि के आधार पर उत्तरदात्रियों का वर्गीकरण

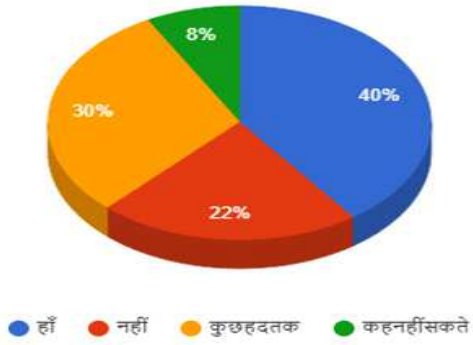

उपर्युक्त सारणी के आधार पर स्पष्ट है कि सबसे अधिक 40 % उत्तरदात्रियों ने हां उत्तर दिया जो अपने वर्तमान नौकरी से संतुष्ट हैं, जबकि 22 % उत्तरदात्रियों ने नहीं विकल्प के रूप में उत्तर दिया जो अपने वर्तमान नौकरी से संतुष्ट नहीं हैं। 30 % उत्तरदात्रियों ने कुछ हद तक विकल्प के रूप में उत्तर दिया जो अपने वर्तमान नौकरी से पूरी तरह संतुष्ट नहीं बल्कि कुछ हद तक संतुष्ट हैं इसके अलावा 8 % उत्तरदात्रियों ने कह नहीं सकते हैं विकल्प के रूप में उत्तर दिया।

नौकरी स्थल पर जाते समय बच्चे को किस के देखभाल में छोड़ कर जाती हैं के आधार पर उत्तरदात्रियों का वर्गीकरण

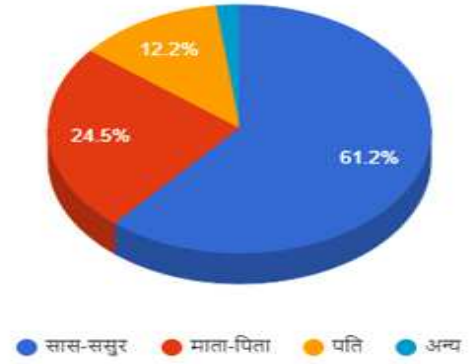

उपर्युक्त सारणी से पता चलता हैं कि सबसे अधिक 61.2 % उत्तरदात्रियों ने अपने बच्चे को सास–ससुर के देखभाल या देखरेख मे छोड़कर नौकरी स्थल पर जाती है,जबकि 24.5 % उत्तरदात्रियों ने अपने बच्चे को अपने माता–पिता के देखभाल या देखरेख में छोड़कर नौकरी स्थल पर जाती हैं। 12.2 % उत्तरदात्रियों ने अपने बच्चे को अपने पति के देखभाल या देखरेख में छोड़ कर नौकरी स्थल पर जाती है, इसके अलावा 2 % उत्तरदात्रियों ने अन्य विकल्पों को चुना हैं।

क्या आप के बच्चे का उचित पालन-पोषण/देखरेख नहीं हो पता हैं के आधार पर वर्गीकरण

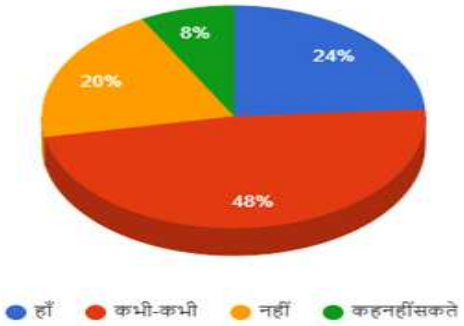

उपर्युक्त सारणी के आधार पर स्पष्ट होता हैं कि 24 % उत्तरदात्रियों ने हाँ उत्तर दिया है जिनके अनुसार उनके बच्चे का उचित पालन–पोषण देखरेख नहीं हो पाता है,जबकि 48 % उत्तरदात्रियों ने कभी–कभी विकल्प के रूप में उत्तर दिया है, इनके अनुसार बच्चे का पालन–पोषण देखरेख कभी–कभी प्रभावित होता हैं। 20 % उत्तरदात्रियों ने नहीं विकल्प के रूप में उत्तर दिया है इनके अनुसार बच्चे के पालन–पोषण देखरेख पर कोई प्रभाव नहीं पड़ता है, इसके अलावा 8 % उत्तरदात्रियों ने कह नहीं सकते विकल्प के रूप में उत्तर दिया हैं ।

क्या दोहरी भूमिका के निर्वहन से वच्चों के परवरिश व समाजीकरण पर प्रभाव पड़ता हैं के आधार पर उत्तरदात्रियों का वर्गीकरण

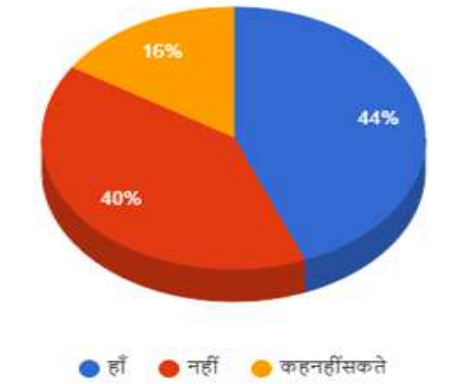

उपर्युक्त सारणी से ज्ञात होता हैं कि 44 % उत्तरदात्रियों ने हां उत्तर दिया, जिनके अनुसार दोहरी भूमिका निभाने के फलस्वरुप बच्चे के परवरिश व सामाजिकरण पर प्रभाव पड़ता है, जबकि 40 % उत्तरदात्रियों ने नहीं विकल्प के रूप में उत्तर दिया, जिनके अनुसार दोहरी भूमिका निभाने के फलस्वरुप बच्चे के परवरिश व सामाजिकरण पर कोई प्रभाव नहीं पड़ता हैं। इसके अलावा 16 % उत्तरदात्रियों ने कह नहीं सकते विकल्प के रूप में उत्तर दिया हैं ।

बच्चे को जितना समय देती हैं क्या आप उससे संतुष्ट हैं के आधार पर उत्तरदात्रियों का वर्गीकरण

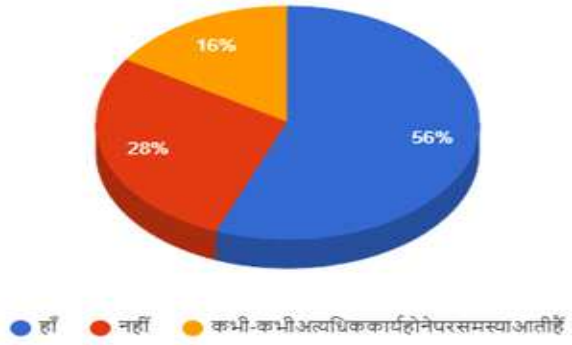

उपर्युक्त सारणी के अनुसार स्पष्ट हैं कि सबसे अधिक 56 % उत्तरदात्रियों ने हां विकल्प के रूप में उत्तर दिया है जो अपने बच्चे को दिए गए समय से संतुष्ट हैं,जबकि 28% उत्तरदात्रियों ने नहीं विकल्प के रूप में उत्तर दिया है जो कि अपने बच्चे को दिए गए समय से संतुष्ट नहीं है अर्थात उनके पास समय का अभाव हैं। इसके अलावा 16 % उत्तरदात्रियों ने कभी–कभी अधिक कार्य होने पर समस्या आती है के विकल्प के रूप में उत्तर दिया है इससे उन्हें कभी–कभी अधिक कार्य होने पर समय का अभाव हो जाता है जिससे अपने बच्चे को उचित समय नहीं दे पाती हैं।

कार्यस्थल पर जाने के बाद आपके बच्चे के लालन-पालन पर क्या प्रभाव पड़ता हैं के आधार पर उत्तरदात्रियों का वर्गीकरण

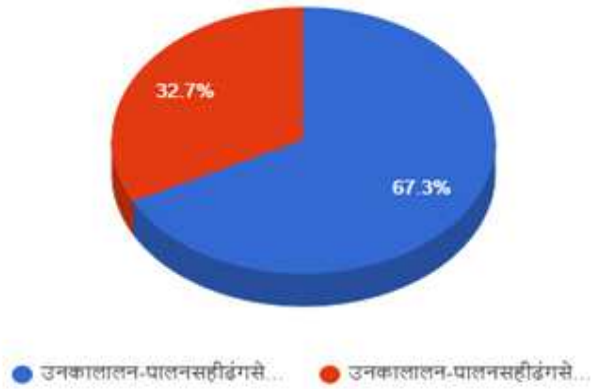

उपर्युक्त सारणी के आधार पर स्पष्ट है कि 67.3 % उत्तरदात्रियों ने कहा कि उनके बच्चे का लालन–पालन सही ढंग से होता हैं, जबकि 32.7 % उत्तरदात्रियों ने कहा कि उनके बच्चे का लालन–पालन सही ढंग से नहीं होता है अर्थात अपने बच्चे के लालन–पालन से वह संतुष्ट नहीं हैं।

निष्कर्ष

प्रस्तुत शोध पत्र में आंकड़ा विश्लेषण के आधार पर सबसे अधिक उत्तरदात्रियों की मासिक 0–10 हजार के बीच है जो कि एक निम्न मासिक आय को दर्शाता हैं जो अपने जीवन यापन और बच्चे के पालन–पोषण व देखरेख के लिए खर्च में आर्थिक रूप से तनाव व अभाव का सामना करती हैं। आर्थिक रूप से तनाव उत्तरदात्रियों को उनके उत्साह और रचनात्मकता को प्रभावित करता हैं जिससे उत्तरदात्रियों के कार्यो पर नकारात्मक प्रभाव पड़ता हैं। संयुक्त परिवार से संबंध रखने वाली उत्तरदात्रियों को बच्चे की देखरेख कि समस्या का सामना तो नहीं करना पड़ता है लेकिन उनके उचित पालन–पोषण का कार्यस्थल पर कार्य करते समय तनाव बनी रहती हैं। वही एकाकी परिवार से संबंध रखने वाली उत्तरदात्रियों को उनके बच्चे की देखरेख व पालन–पोषण की समस्या का सबसे अधिक सामना करना पड़ता हैं कुछ एकाकी परिवार के उत्तरदात्रियों का कहना है कि वह अपने रिश्तेदार के यहां बच्चे को छोड़कर कार्यस्थल पर जाती है और वापिस आते समय फिर अपने साथ घर लेकर आती हैं कार्यस्थल पर होने पर बच्चे की चिंता बनी रहती है जिससे वह बीच–बीच में फोन कर बच्चे का हाल–चाल लेती रहती हैं इस प्रकार वह एकाग्रचित्त होकर अपने कार्यों को पूरा करने में तनाव का सामना करती है जिससे उनका कार्य भी प्रभावित होता हैं। बच्चे के उचित पालन–पोषण और देखरेख के आंकड़ा विश्लेषण से भी पता चलता है कि एक तिहाई उत्तरदात्री का कहना है कि बच्चें का पालन–पोषण व देखरेख सही तरीके से नहीं हो पाता हैं जबकि आधे उत्तरदात्रियों का कहना है कि उनके बच्चे का पालन–पोषण वह देखरेख कभी–कभी प्रभावित होता हैं। इस कारण वह अभाव बोध की भावना से भी ग्रसित रहती हैं। वर्तमान नौकरी से संतुष्टि के विश्लेषण में कार्यस्थल पर लिंग भेद, संस्थान प्रबंधन के व्यवहार से, कार्यस्थल के वातावरण से सहज न होने के कारण, बच्चों के पालन–पोषण व देखरेख की समस्या के वजह से, उत्तरदात्रियों का अधिकांश प्रतिशत जिसमें से कुछ वर्तमान नौकरी से कुछ हद तक संतुष्ट हैं जबकि कुछ संतुष्ट नहीं हैं। सिर्फ आर्थिक रूप में अपनी आवश्यकता की पूर्ति करने के लिए मजबूरी बस कार्य कर रही हैं। कार्यस्थल के काम के दबाव और पारिवारिक जिम्मेदारियों को पूर्ण करने में अर्थात दोहरी भूमिका के निर्वहन में वह तनाव व संघर्ष का सामना करती हैं जिस कारण लगभग आधे उत्तरदात्रियों का कहना है कि उनके बच्चे का परवरिश व सामाजिकरण भी प्रभावित होता हैं। जिम्मेदारियों को पूर्ण करने के संदर्भ में उनके पास समय का अभाव होता है जिस कारण कुछ उत्तरदात्रियों का कहना है कि अपने बच्चे को जितना समय देती है वह उससे संतुष्ट नहीं है जबकि कुछ उत्तरदात्रियों का कहना है कि कभी–कभी अत्यधिक कार्य होने पर समस्या आती हैं जिससे वह अपने बच्चों को जितना समय देना चाहती है नहीं दे पाती हैं।

एकाकी परिवार से संबंध रखने वाली उत्तरदात्री बच्चे की देखरेख व पालन–पोषण की सबसे अधिक समस्या का सामना करती है जिससे बच्चे का पालन पोषण व देखरेख पर नकारात्मक प्रभाव पड़ता है। दोहरी भूमिका के निर्वहन से तनाव व संघर्ष का सामना करती हैं इस कारण उनके पास समय का अभाव रहता है जिससे वह अपने बच्चें को जितना समय देती है उससे भी संतुष्ट नहीं रहती हैं। सबसे बड़ी समस्या निम्न मासिक आय की है, जिस कारण से जीवन यापन और बच्चे की देखरेख व पालन पोषण में होने वाले खर्च पर वह आर्थिक रूप

से तनाव और अभाव का सामना करती हैं वह दायी या नौकर को रखने में भी आर्थिक रूप से सक्षम नहीं होती है जिससे उनका कार्य आसानी से हो सके। इन सब समस्याओं के कारण वह अपने वर्तमान नौकरी से संतुष्ट नहीं रहती है या कुछ हद तक संतुष्ट रहती हैं।

❒

सन्दर्भ –

1. *Lorber, J. 1994. Paradoxes of gender. New Haven, CT: Yale University Press.*
2. *Hochschild, A. 1979. Emotion work, feeling rules and social structure. American Journal of Sociology 85:551-75.*
3. *Boushey, Heather and Wright, Joseph (2004). Working Moms and Child Care. Washington, D.C: Centre for Economic and policy Research. https://www.researchgate.net/publication/237553521*
4. *De Laat, J. (1999) "Gender in the Workplace: A Case Study Approach", Thousand Oaks, California: Sage Publications, Pp. 97-108.*
5. *Hoffman & Lise Young blade (2000). Positive Effects of Working Mothers – Brief Article/USA/ Today (Society for the Advancement of Education)*
6. *Tiwari, Monica and Singh, Shubham (2005). Effect of maternal education on cognitive ability of children at preschool stage, Applied and community psychology: trades and direction. P 219*
7. *Guttmacher, A. M. (2006). The NICHD study of early childcare and youth development. National Institute of Child Health and Human Development, U.S. Department of Health and Human Services.Availablesfrom: https://www.nichd.nih.gov/sites/default/files/publications/pubs/documents/ seccy d_06.pdf.*
8. *Cuddy, J. C. (2013). Prescriptions and punishments for working moms: How race and work status affect judgments of mothers? Available from: https://www.hbs.edu/ faculty/conferences/2013- w50- research symposium/Documents/cuddy.pdf.*

पूर्वदेवा– सामाजिक विज्ञान शोध पत्रिका
वर्ष 29, अंक, 116, जनवरी–मार्च, 2024 पृ. 132–143

UGC Care Listed Journal
ISSN 0974 -1100

गढ़वाल हिमालय में शहरीकरण की प्रक्रिया का ऐतिहासिक अध्ययन

डॉ. अर्जुन सिंह
सहायक आचार्य इतिहास विभाग, पंडित ललित मोहन शर्मा ऋषिकेश परिसर,
श्रीदेव सुमन उत्तराखंड़ विश्वविद्यालय, टिहरी गढ़वाल (उ.ख.)–249199
E-mail: arjunarjun4727@gmail.com Mob. 7500884084

डॉ.नवरत्न सिंह
सहायक प्रोफेसर, इतिहास, राजकीय स्नातकोत्तर महाविद्यालय कोटद्वार, पौड़ी गढ़वाल, (उ.ख.)
E-mail: Nawaratan71@gmail.com Mob. 9760325821

सारांश

19वीं सदी के प्रारंभिक दशकों से हिमालय की पहाड़ियों का आर्थिक महत्व बढ़ने लगा। जिनमें 19वीं सदी से पहले न तो बड़ी संख्या में आबादी निवास करती थी, और न ही उनमें आर्थिक गतिविधियाँ संपादित होती थी। पहाड़ियों का महत्व तब से बढ़ना प्रारंभ हुआ, जब उन्हें यूरोपीय उपनिवेशवादियों ने मैदानी क्षेत्रों की गर्म जलवायु से बचने के लिये सुरक्षित सैनिटोरियम के रुप में प्रयोग करना प्रारंभ किया। जिनमें से अनेक पहाड़ियाँ राज की ग्रीष्मकालीन राजधानियाँ तथा सैनिकों के लिये छावनियों के रुप में भी विकसित हुये। पहाड़ियों में यूरोपीयों का जमावड़ा और उनके साथ बड़ी संख्या में भारतीयों के आव्रजन ने आबादी विहीन पहाड़ियों में शहरीकरण की प्रक्रिया को जन्म दिया। पर्वतीय नगरों का सर्वाधिक संक्रेंद्रण उत्तराखंड़ के पर्वतीय क्षेत्रों में दिखायी देता है, जहाँ नैनीताल, अल्मोड़ा, रानीखेत, भीमताल, काठगोदाम, लंढ़ौर, मसूरी, चकराता, देहरादून एवं लैंसडौन जैसे लोकप्रिय पर्वतीय नगर विकसित हुये, जिन्होनें उत्तराखंड़ के पर्वतीय क्षेत्रों में शहरीकरण की प्रक्रिया का जन्म दिया। यह शोध पत्र गढ़वाल हिमालय में विकसित लंढ़ौर, लैंसडौन एवं चकराता शहरों के शहरीकरण पर आधारित है।

मुख्य शब्द– शहरीकरण, उपनिवेश, आव्रजन, प्रतिष्ठान, सैनिटोरियम।

सन् 1600 में पूर्वी देशों के साथ व्यापार करने के उद्देश्य से लंदन के कुछ व्यापारियों ने मिलकर ब्रिटिश ईस्ट इंडिया कंपनी की स्थापना की। 18वीं सदी के मध्यावधि तक ब्रिटिश ईस्ट इंडिया कंपनी भारत में साम्राज्य स्थापना के लिये लालायत होने लगी। फलस्वरुप उसने अपने सभी प्रतिद्वंदियो को परास्त कर भारतीय उपमहाद्वीप में विशाल साम्राज्य की स्थापना की। चूंकि यूरोपीय यूरोप के शीत जलवायु क्षेत्रों से भारत आते थे, इसलिये उन्हें भारत की गर्म जलवायु में अनेक समस्याओं का सामना करना पड़ा। भारत की गर्म जलवायु एवं उससे होने

वाली बीमारियाँ न केवल यूरोपीय आबादी के मृत्यु का मुख्य कारण बना रहा, अपितु उनकी कार्य क्षमता एवं मनोबल को भी निरंतर हतोत्साहित करती रही। अतः उक्त समस्या के समाधान के लिये ऐसे शीत जलवायु वाले भौगोलिक क्षेत्रों में बसासत की प्रक्रिया प्रारम्भ हुई, जो स्वास्थ्य के अनुकूल थे, ऐसे स्वास्थ्यवर्धक स्थानों को पर्वतीय नगर या सैनिटोरियम कहा गया। जहाँ यूरोपीय प्रति वर्ष मैदानी क्षेत्रों में मार्च के अंत तक गर्मी बढ़ने के साथ पहुंचते और पुनः अक्टूबर के अंत में ठंड़ बढ़ने के साथ पुनः मैदानी क्षेत्रों में चले जाते थे। (सारणी–1)

मैदानी क्षेत्रों का मौसम तथा प्रवास की प्रवृति		**पहाड़ी क्षेत्रों का मौसम तथा प्रवास की प्रवृति**	
मौसम	**प्रवास की प्रवृति**	**मौसम**	**प्रवास की प्रवृति**
अत्यधिक गर्म (अप्रैल से अक्टूबर)	मैदानों से पहाड़ों की ओर	सामान्य मौसम (अप्रैल से अक्टूबर)	मैदानों से पहाड़ा की ओर
सामान्य ठंड़ (नवंबर से मार्च)	पहाड़ों से मैदानों की ओर	अत्यधिक ठंड़ (नवंबर से मार्च)	पहाड़ों से मैदाना की ओरें

पर्वतीय क्षेत्रों के प्रति यूरोपीय आबादी का आकर्षण 19वीं सदी के द्वितीय से सर्वप्रथम यूरोपीय सैनिकों में प्रारंभ हुआ। 19वीं सदी के मध्यावधि तक लगभग सभी यूरोपीय पर्वतीय नगरों में ग्रीष्मकालीन प्रवास करने लगे। परिणामस्वरुप अनेक पर्वतीय नगर ग्रीष्मकालीन राजधानियों, प्रशासनिक केंद्र, शैक्षणिक संस्थानों तथा छावनियों के रुप में भी विकसित होने लगे। पहाड़ियों में यूरोपीयों का जमावड़ा और उनके साथ बड़ी संख्या में भारतीयों के आव्रजन ने आबादी विहीन पहाड़ियों में तीव्र शहरीकरण की प्रक्रिया को जन्म दिया।

हिमाचल की पहाड़ियों में डलहौजी, बकलौह, धर्मशाला, शिमला, सोलन, सुबाथू, जतोघ, सोनवार, कसोली, आदि पर्वतीय नगरों ने शहरीकरण को जन्म दिया। पूर्वी हिमालय की पहाड़ियों में दार्जिलिंग, लेबांग, जलपहर, शिलांग एवं चेरापूँजी के विकसित होने के उपरांत नगरीकरण प्रारंभ हुआ। नीलगिरि की पहाड़ियों में वैलिंटन, ऊटाकामुंड, कन्नूर, कोटागड़ी, पल्लवरम् आदि ने शहरीकरण की प्रक्रिया को जन्म दिया। पर्वतीय नगरों का सर्वाधिक संक्रेंद्रण उत्तराखंड़ में दिखायी देता है, जहाँ नैनीताल, अल्मोड़ा, रानीखेत, भीमताल, काठगोदाम, लंढ़ौर, मसूरी, चकराता, देहरादून तथा लैंसडौन जैसे लोकप्रिय पर्वतीय नगर विकसित हुये, जिन्होनें उत्तराखंड़ के पर्वतीय क्षेत्रों में शहरीकरण की प्रक्रिया का जन्म दिया।

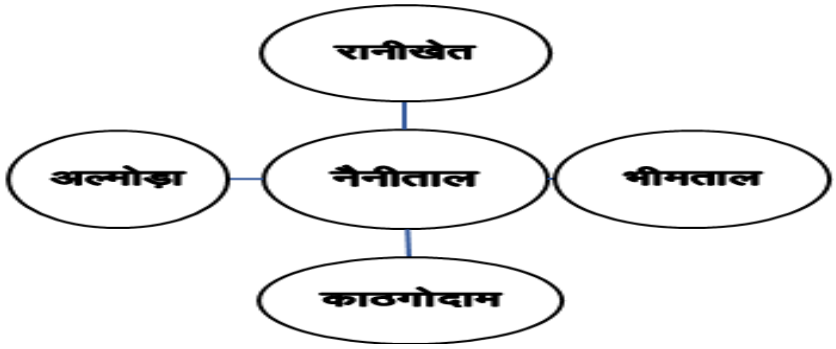

कुमायूं हिमालय में स्थित पर्वतीय शहर

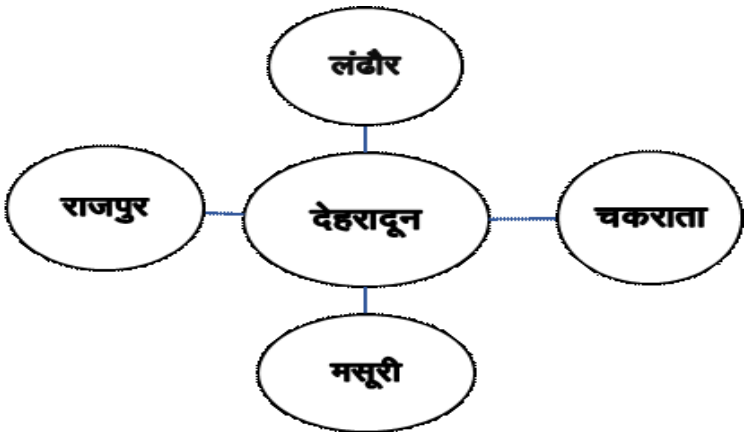

गढ़वाल हिमालय में स्थित पर्वतीय शहर

शहरों का विकास एक क्रमिक विकास का परिणाम होता है, जिसमें नगर विकास के कई चरणों से गुजरता है। विकास का यह चरण ग्रामीण अवस्था से प्रारंभ होकर कस्बा, नगर और वृहद नगर की अवस्था तक पहुँचता है। नगरों का विकास मुख्यतः यातायात मार्गों के समीप, उपजाऊ मैदानों, प्रशासनिक केन्द्रों के आसपास तथा प्राकृतिक संसाधन युक्त क्षेत्रों के समीप ही संभव हो पाता है। किंतु पर्वतीय नगरों के विकास में उपरोक्त विशेषतायें लगभग लुप्तप्रायः रही है। पर्वतीय नगरों का विकास संसाधन विहीन क्षेत्रों में हुआ, जहाँ यातायात मार्गों, मानवीय आबादी, उपजाऊ मैदानों तथा अन्य प्राकृतिक संसाधनों की नितांत अनुपस्थिति थी। ऐसे नगरों के निर्माण में जल एवं तापमान की मुख्य भूमिका थी। सामान्य नगर योजनाबद्ध रुप से विकसित नहीं होते। जबकि छावनी नगरों का निर्माण योजनाबद्ध होता है, जिनमें शुरुआती दौर में ही संपूर्ण छावनी क्षेत्र को भू–उपयोग की दृष्टि से कई भागों में विभाजित किया जाता है।

विशेषता	**सामान्य नगर**	**छावनी नगर**
विकास की अवस्था	गाँव कस्बा छोटा शहर बृहद शहर	बीरान जंगल से शहर में परिवर्तित
निर्माण योजना	निश्चित योजनानुसार नहीं	निश्चित योजना के अनुसार विकसित
निर्माण के लिये उपर्युक्त दशा	परिवहन की सुविधा, उपजाऊ मैदान,प्राकृतिक संसाधन, प्रशासनिक एवं औद्योगिक केन्द्रों के आसपास विकसित	ठंड़ा एवं जल की उलब्धता वाले क्षेत्रों में ही विकसित

प्रस्तुत शोध पत्र गढ़वाल हिमालय में विकसित लंढ़ौर, लैंसडौन एवं चकराता शहरों के शहरीकरण पर आधारित है। पहाड़ियों में सर्वप्रथम सन् 1827 में औसतन 7500 फीट की ऊँचाई पर मसूरी–भद्राज की पहाड़ियों में लंढ़ौर सैनिटोरियम अस्तित्व में आया, जो देहरादून से लगभग 35 कि.मी. की दूरी पर स्थित है। सन् 1866 में देहरादून से लगभग 90 तथा सहारनपुर से 70 कि.मी. की दूरी पर चकराता सैनिटोरियम की स्थापना की गई। जो देहरादून के पर्वतीय क्षेत्र जौनसार–बावर में देवबन जंगल के मध्य 6 हजार से 7 हजार फीट की ऊँचाई में स्थित है।[1] गढ़वाल हिमालय में विकसित होने वाली अंतिम पर्वतीय छावनी लैंसडौन थी, जिसकी स्थापना सन् 1887 में औसतन 6 हजार फीट की ऊँचाई में कालोडांडा जंगल में की गई थी। लैंसडौन छावनी पौड़ी जनपद में स्थित कोटद्वार से लगभग 45 कि.मी. दूरी पर स्थित है। प्रारंभिक समय में लंढ़ौर तथा चकराता छावनियों का उद्देश्य बीमार यूरोपीय सैनिकों के लिये स्वास्थ्यवर्धक प्रवास की सुविधा उपलब्ध करवाना था जबकि लैंसडौन छावनी का प्रयोजन नवनिर्मित गढ़वाल राइफल्स के सैनिकों के लिये आवास एवं प्रशिक्षण की सुविधा उपलब्ध करवाना था। कालांतर में उपरोक्त छावनियों में असैनिक महत्व के प्रतिष्ठानों का निर्माण, बाजारों के विकास की प्रक्रिया तथा आबादी के बसासत की प्रक्रिया संपन्न हुई, जिन्होंने उनमें तथा उनके आसपास शहरीकरण की प्रक्रिया को जन्म दिया।

लंढ़ौर छावनी में प्रारंभिक 15 वर्षों में सन् 1842 तक लगभग 250 सैनिकों के लिये आवासीय संरचनाओं का निर्माण हो चुका था।[2] जिस समय लंढ़ौर छावनी विकास के प्रारंभिक अवस्था में थी, उसी दौरान ब्रिटिश संसद ने कंपनी के लिये 1833 का चार्टर एक्ट पारित किया, जिसमें सभी यूरोपीयों को भारत में व्यापार करने, भूमि खरीदने, कृषि करने तथा स्थायी रुप से बसने की अनुमति प्रदान की। परिणामस्वरुप पहली बार बड़ी संख्या में यूरोपीय महिलाओं, बच्चों, मिशनरियों, जमीदारों एवं व्यापारियों ने भारत में प्रवेश करना एवं भूमि खरीदना प्रारंभ किया।[3] अतः सन् 1830 से 1842 के मध्यावधि में मसूरी तथा लंढ़ौर के आसपास लगभग तीन से चार सौ तक जागीरें यूरोपीयों ने खरीदी, जिनमें यूरोपीयों के स्वामित्व में लगभग 180 घरों का निर्माण हो चुका था।[4] 19वीं सदी के अंतिम दशकों तक लंढ़ौर में भारतीय सर्वेक्षण विभाग के ग्रीष्मकालीन कार्यालय की स्थापना, वुडस्टॉक, व्यानवर्ग ऍलन स्कूल जैसे लोकप्रिय शैक्षणिक संस्थानों तथा अनेक चर्चों की स्थापना हो चुकी थी।

चकराता छावनी में प्रारंभिक चार–पाँच वर्षों में 600 से 700 यूरोपीय सैनिकों के लिये लगभग 54 लाख रुपये की लागत से मूलभूत सुविधाओं, सड़कों तथा अन्य सुविधाओं का निर्माण हो चुका था।[5] सन् 1880 तक 4,76,521 रुपये की लागत से पुनः दस और बैरकों तथा अन्य सुविधाओं का निर्माण किया गया।[6] जिनमें 20वीं सदी के प्रारंभिक वर्षों में औसतन 1850 से अधिक सैनिक तथा उनसे संबंधित महिलायें प्रतिवर्ष ग्रीष्मकालीन प्रवास कर रहे थे।[7] मैदानी भागों से अत्यधिक दूरी (सहारनपुर से 71 तथा देहरादून से 90 कि.मी.) के कारण चकराता में असैनिक यूरोपीयों का आकर्षण लगभग शून्य रहा। अत्यधिक ठंड, बर्फबारी और कुछ हद तक मिट्टी की गुणवता में कमी के कारण यूरोपीय बागान मालिकों खासकर चायबागान मालिकों का आकर्षण भी शून्य रहा है। फलस्वरुप चकराता में असैनिक यूरोपीयों की आबादी अत्यधिक

कम थी। सन् 1881 से 1931 के मध्य छावनी की कुल स्थायी आबादी में यूरोपीयों का औसत अनुपात मात्र 11 प्रतिशत था, हालांकि यह अनुपात गर्मियों में बढ़कर औसतन 36 प्रतिशत तक हो जाती थी।[8] जिस समय चकराता छावनी अस्तित्व में आयी, उस समय कालसी (देहरादून जनपद के पर्वतीय भू–भाग का पाद प्रदेश) संपूर्ण देहरादून के पर्वतीय भू–भाग की एकमात्र व्यापारिक मंड़ी एवं प्रशासनिक केंद्र थी।[9] चकराता में छावनी की स्थापना के उपरांत चकराता छावनी व्यापारिक एवं प्रशासनिक केन्द्र के रुप में तेजी से विकसित होने लगी। कुछ समय पश्चात् चकराता में तहसील तथा सत्र न्यायालय की स्थापना की गयी।[10] कालांतर में वन विभाग, लोक निर्माण विभाग, डाक घर, पुलिस थाना आदि सार्वजनिक महत्व के प्रतिष्ठान अस्तित्व में आये।

लैंसडौन छावनी में भी शीघ्र ही सैन्य एवं असैन्य महत्व के प्रतिष्ठानों एवं व्यापारिक इकाईयों के निर्माण की प्रक्रिया प्रारंभ हुई। चूंकि लैंसडौन छावनी गढ़वाल राइफल्स के रेजीमेंटल एवं प्रशिक्षण केन्द्र के रुप में विकसित हुई, जहाँ गढ़वाली सैनिक एवं उनसे संबंधित यूरोपीय सैन्य अधिकारी वर्षभर प्रवास करते थे। इसलिये लैंसडौन में अन्य पर्वतीय छावनियों की तुलना में सैन्य महत्व के प्रतिष्ठानों का निर्माण अधिक हुआ। जैसे–जैसे गढ़वाल राइफल्स में सैनिकों की संख्या में वृद्धि होती गई उसी अनुपात में यहाँ सैन्य बैरकों एवं सैन्य महत्व के अन्य प्रतिष्ठानो में भी वृद्धि होती गई। सैनिकों के लिये 1890 से 1910 के मध्य मैन्चरिंग लाइन, क्वींस लाइन, किचनर लाइन, ईवट लाइन तथा 1934 में चिटवुड लाइन का निर्माण किया गया।[11] जिनमें 1904 तक 2931 सैनिक प्रवास कर रहे थे।[12] इस छावनी में सैनिकों के लिये आवासीय बैरकों के अतिरिक्त यूरोपीय सैन्य अधिकारियों के लिये बड़ी संख्या में बंगलों का निर्माण किया गया। जिसे मॉल रोड के नाम से जाना जाता है। लैंसडौन छावनी गढ़वाल की प्रमुख प्रशासनिक केन्द्र के रुप में भी विकसित हुई, जहाँ 1925 तक वन विभाग, तहसील, सत्र न्यायालय, जिला सैनिक कल्याण विभाग की स्थापना हो चुकी थी।[13] उपरोक्त प्रतिष्ठानों के अतिरिक्त समय–समय में लोकनिर्माण विभाग, सिंचाई विभाग, कैन्ट चिकित्सालय, सैन्य अस्पताल, पुलिस थाना, रोजगार कार्यालय, डाकघर, स्टेट बैंक, पंजाब नैशनल बैंक इत्यादि संस्थान अस्तित्व में आये।

चूंकि पर्वतीय नगरों एवं छावनियों का निर्माण मैदानी क्षेत्रों से दूर आबादी विहीन जंगलों में हुआ, इसलिये वहाँ निर्माण कार्यों, सामान पहुँचाने तथा आवश्यक वस्तुओं की आपूर्ति के लिये यूरोपीय पूर्णतः भारतीयों पर निर्भर थे। इसलिये पर्वतीय नगरों में बड़ी संख्या में भारतीयों का आव्रजन हुआ। असैनिक आबादी युक्त इन बस्तियों को प्रायः **'बाजार ऐरिया'**, **'सदर बाजार'** एवं **'माल रोड'** इत्यादि कहा जाता था।[14] छावनियों में स्थित बाजार क्षेत्र ही छावनियों में आर्थिक एवं व्यापारिक गतिविधियों के मुख्य केंद्र थे, जो छावनियों समेत आसपास के ग्रामीणों के लिये आवश्यक वस्तुओं एवं सेवाओं की पूर्ति करते थे। लंढ़ौर, लैंसडौन एवं चकराता छावनियों में शुरुआती समय से ही उपमहाद्वीप के विभिन्न क्षेत्रों से व्यापारी आकर बसने लगे थे

लंढ़ौर की स्थापना के साथ सहारनपुर, मेरठ, रुड़की, लंढ़ौरा, लाहौर तथा आसपास के क्षेत्रों से व्यापारी, मजूदर एवं अन्य कर्मकार लंढ़ौर के दक्षिण–पश्चिम हिस्से में बसने लगे, यह क्षेत्र लंढ़ौर बाजार के रुप में विकसित हुआ।[15] लंढ़ौर बाजार प्रारंभ में मसूरी तथा लंढ़ौर में स्थित यूरोपीयों की जरुरतों की पूर्ति का प्रमुख बाजार था, जिसमें भारतीयों के स्वामित्व में सन् 1842

तक 90 से अधिक मकानों एवं व्यापारिक प्रतिष्ठानों का निर्माण हो चुका था। यह बाजार 20वीं सदी के प्रारंभिक समय में भारत के श्रेष्टतम बाजारों में से एक था, जहाँ यूरोप एवं अमेरिका से सीधे वस्तुओं का आयात किया जाता था।[16] 19वीं सदी के अंतिम वर्षों तक मसूरी तथा लंढ़ौर में कुलरी बाजार, लॉरेसन ऐस्टेट्स, अपर मसूरी बाजार, बार्लोगंज, झारापानी, जबरखेत, लाइब्रेरी बाजार तथा लंढ़ौर बाजार विकसित हो चुका था। उपरोक्त बाजारों में लंढ़ौर बाजार सबसे बड़ा व्यापारिक केन्द्र था, जहाँ 322 दुकानें पंजीकृत थी। जबकि कुरली बाजार में 63, लॉरेसन ऐस्टेट्स तथा अपर मसूरी बाजार में 45, बार्लोगंज तथा झारीपानी में 22, जबरखेत में 10 तथा लाइब्रेरी बाजार में 30 दुकानें पंजीकृत थी।[17] चकराता छावनी में भी शीघ्र ही सदर बाजार, ब्रिटिश इंफ्रैंट्री बाजार (लाल कुर्ती बाजार) एवं कैलाना बाजार अस्तित्व में आये। सदर बाजार में 1930 तक कुल 16.47 एकड भूमि में 258 तथा ब्रिटिश इंफ्रैंट्री बाजार में 6.33 एकड भूमि में कुल 86 मकानों एवं व्यापारिक प्रतिष्ठानों का निर्माण हो चुका था।[18] उपरोक्त बाजारों के अतिरिक्त सैन्य विभाग के स्वामित्व में भी सैनिकों की आवश्यकताओं की पूर्ति के लिये दुग्ध डेयरियाँ, सोडा वाटर फैक्ट्री, शराब का कारखाना, गैस से युक्त पानी की फैक्ट्री आदि व्यापारिक प्रतिष्ठानों की स्थापना की गई।[19]

लैंसडौन की स्थापना के साथ ही व्यापारी भी लैंसडौन में पहुंचने लगे, जिन्हें परेड ग्राउंड (वर्तमान में गांधी चौक बाजार) के आसपास व्यापारिक प्रतिष्ठानों एवं आवास के लिये भूमि आवंटित की गयी। लैंसडौन में विकसित होने वाला यह प्रारंभिक व्यापारिक एवं नागरिक आवासीय खंड था। परेड ग्राउण्ड के निचले भूभाग में धीरे–धीरे सदर बाजार विकसित होने लगा, जो शीघ्र ही छावनी का मुख्य बाजार के रुप में विकसित हुआ। सफाई कर्मियों, भिस्तियों, कुलियों आदि को परेड ग्राउण्ड से कालेवर मंदिर के मध्य का भू–भाग आवंटित किया गया, यह नागरिक बस्ती कुली मोहल्ला के रूप में विकसित हुआ। तहसील एवं सत्र न्यायालय की स्थापना के पश्चात् वकील मोहल्ले का विकास प्रारंभ हुआ। लैंसडौन में उपरोक्त रिहाईशी खंडों के अतिरिक्त 1935 तक प्लाटून बाजार, किचनर बाजार, कबाडी बाजार, ईवट बाजार एवं पठानकोट बाजार भी विकसित हुये। उपरोक्त सभी आवासीय खंड़ों में 1961 तक कुल 972 आवासीय मकानों का निर्माण हो चुका था।[20]

पर्वतीय क्षेत्रों में उपरोक्त नगरों के निर्माण के पश्चात् पहाड़ियों में बुनियादी संरचनाओं के निर्माण पर बड़ी मात्रा में निवेश किया गया। सन् 1842 में बंदोबस्त अधिकारी एफ. ओ. वैल्स ने वर्णन किया कि मसूरी–लंढ़ौर में प्रतिवर्ष सात से आठ लाख रुपय निवेश किया जा रहा है।[21] चकराता में छावनी निर्माण कार्यों पर प्रारंभिक वर्षों में ही 54 लाख रुपये व्यय किये गये। जबकि बाद के वर्षों में निर्मित बैरकों पर भी कई लाख रुपये व्यय किये गये। छावनियों में किये गये भारी निवेश का लाभ आवश्यक रुप से स्थानीय लोगों को मिला होगा। निर्माण कार्यों के अतिरिक्त यूरोपीयों के सामान को छावनियों तक पहुँचाने तथा अन्य कार्यों के लिये प्रति वर्ष हजारों लोगों को रोजगार के अवसर प्राप्त हो रहे थे। खासकर गर्मियों में यूरोपीयों की सहायता के लिये बड़ी संख्या में कुली पर्वतीय नगरों में पहुँचते थे, जिसकी पुष्टि पर्वतीय नगरों की ग्रीष्मकालीन जनसंख्या आंकड़ों से होती है।

20वीं सदी के प्रारंभिक वर्षों में परिवहन में सुधार ने छावनियों में आर्थिक गतिविधियों को प्रोत्साहित किया। सन् 1900 में देहरादून तक रेलवे लाइन के विस्तार से देहरादून समेत मसूरी–लंढ़ौर का महत्व बढ़ता गया।[22] तब से सहारनपुर–कालसी से चकराता जाने वाले सैनिक देहरादून तक रेल से पहुँचते और वहाँ से चकराता जाने लगे, इसी समय स्मिथ एंड रोडवेज कंपनी ने देहरादून से चकराता के मध्य सीधे तांगा सेवा शुरु की, जिससे चकराता तक पहुँचना आसान हो गया।[23] 19वीं सदी के अंतिम वर्षों में कोटद्वार तक रेलवे लाइन का निर्माण किया गया, 20वीं सदी के प्रारंभिक वर्षों में कोटद्वार से लैंसडौन के मध्य सड़क मार्ग का निर्माण कार्य प्रारंभ हुआ। परिवहन में सुधार के अतिरिक्त छावनियों में विविध प्रकार के प्रतिष्ठानों का निर्माण हो रहा था। विभिन्न प्रकार के निर्माण कार्यों के लिये बड़ी संख्या में कामगारों का आव्रजन एवं विभिन्न सार्वजनिक प्रतिष्ठानों में कर्मचारियों की उपस्थिति से छावनियों की आबादी में तेजी से वृद्धि हुई। (सारणी–2)[24]

छावनी का नाम	**लंढ़ौर**		**चकराता**		**लैंसडौन**	
स्थापना के समय	स्थायी	मौसमी	स्थायी	मौसमी	स्थायी	मौसमी
आबादी	0	0	0	0	0	0
1881	1746	4428	1828	—	0	—
1891	2033	4190	1509	4837	1354	—
1901	1720	3711	1250	5417	3643	—
1911	1500	3518	1890	5646	6281	5316

सारणी–2, लंढौर, लैंसडौन एवं चकराता छावनियों की स्थायी तथा मौसमी जनसंख्या

लंढ़ौर की आबादी सन् 1891 तक 2033 हो गई थी, जो सन् 1971 से पूर्व किसी भी अवधि में सर्वाधिक थी। चकराता की आबादी सन् 1911 में बढ़कर 1890 हो गई थी, जो औपनिवेि ाक मुक्ति से पूर्व किसी भी वर्श में सर्वाधिक थी। इसी प्रकार लैंसडौन की आबादी सन् 1891 में मात्र 1354 थी, जो सन् 1911 में बढ़कर 6281 तक पहुँच गई थी। यद्यपि उपरोक्त नगरों की स्थायी आबादी बहुत कम थी, किंतु गर्मियों में उनकी आबादी कई गुना तक वृद्धि हो जाती थी। सन् 1880 से 1930 के मध्य लंढ़ौर में औसतन 3668 लोगों ने ग्रीष्मकालीन प्रवास किया, जो उक्त अवधि में लंढ़ौर की स्थायी निवासियों की तुलना में 133 प्रतिशत अधिक थे। इसी प्रकार चकराता में 1880 से 1930 के मध्य औसतन 5099 लोगों ने ग्रीष्मकालीन प्रवास किया, जो उक्त अवधि में छावनी की स्थायी आबादी की तुलना में 247 प्रतिशत अधिक थे।

इस प्रकार 20वीं सदी के प्रारंभिक वर्षों में परिवहन में सुधार, छावनियों की आबादी में वृद्धि, छावनियों के भौतिक एवं आर्थिक विकास के परिणामस्वरुप उपरोक्त नगरों की आय में वृद्धि हुई। (सारणी–3)

वर्ष	लंढ़ौर	चकराता	लैंसडौन
1882	5933	8483	—
1908	8483	2500	15907

सारणी–3, 1882 तथा 1908 में लंढ़ौर, लैंसडौन तथा चकराता की वार्षिक आय

सन् 1882 में लंढ़ौर छावनी की कुल वार्षिक आय मात्र 5933 रुपये थी, जो 1908 में 41 प्रतिशत बढ़कर प्रतिवर्ष 10 हजार हो गई थी। चकराता छावनी की आय 1882 में मात्र 8483 रुपये थी, जो 1908 में 66 प्रतिशत बढ़कर 25000 रुपये प्रति वर्श हो गई थी।[25] लैंसड़ौन छावनी की वार्षिक आय भी सन् 1908 में 15907 रुपये प्रति वर्ष तक हो गई थी।[26] पर्वतीय नगरों के निर्माण से पूर्व पर्वतीय क्षेत्रों में शहरीकरण लगभग शून्य था। चकराता छावनी की स्थापना से पूर्व जौनसार–बावर (देहरादून जनपद का सीमांत क्षेत्र) के लोग आवश्यक वस्तुओं की आपूर्ति के लिये कालसी पर निर्भर थे। चकराता छावनी की स्थापना के उपरांत लोग आवश्यक वस्तुओं के लिये चकराता में स्थित बाजार पर निर्भर रहने लगे। लंढ़ौर–मसूरी के विकास से देहरादून एवं उसके आसपास के क्षेत्रों पर पड़ने वाले आर्थिक प्रभावों का उल्लेख तत्कालीन अधिकारियों, वार्षिक राजस्व संबंधी रिपोर्टों एवं गजेटियरों ने भी किया है। लंढ़ौर–मसूरी के तेजी से हो रहे आर्थिक विकास के कारण सन् 1829 में मेजर फ्रैडरिक यंग ने वर्णन किया कि 'मसूरी–लंढ़ौर के निर्माण से जिले की आर्थिक समृद्वि पर जबरदस्त प्रभाव पड़ा है, जिससे जिले में पैसों की मांग बढ़ रही है।[27] एच.जी. वाल्टन ने देहरादून की आर्थिक प्रगति के लिये मुख्यतः पर्वतीय नगर मसूरी, चकराता, लंढ़ौर तथा देहरादून तक रेलवे के निर्माण को जिम्मेदार ठहराया।[28] लैंसडौन की स्थापना से पूर्व गढ़वाल में श्रीनगर, पौड़ी एवं कोटद्वार के अतिरिक्त अन्य नगरीय बस्तियों की अनुपस्थिति थी। लैंसडौन छावनी की स्थापना के उपरांत लैंसडौन का आर्थिक महत्व तेजी से बढ़ता गया, जिसका दीर्घकालीन आर्थिक प्रभाव छावनी सहित संपूर्ण गढ़वाल पर पड़ा। गढ़वालियों की पृथक बटालियन के निर्माण से रोजगार के अवसरों में वृद्धि हुई। सन् 1894 में लैंसडौन में स्थित सैनिकों एवं विभिन्न कर्मचारियों को लगभग एक लाख रुपये वेतन के रूप में मिल रहा था।[29] यह वेतन सन् 1910 तक बढ़कर 4,30,000 रुपए वार्षिक हो गया।[30] सन् 1896 में गढ़वाल बंदोबस्त अधिकारी ई.के. पौ ने वर्णन किया कि 'लैंसडौन में छावनी स्थापना के पश्चात् ही गाँवों में रुपये का प्रचलन प्रारंभ हुआ, अतः आर्थिक समृद्धि के कारण अधिकांश लोग पुराने घरों को गौशालाओं के रुप में प्रयोग करने लगे या उनको तोड़कर पक्के मकानों का निर्माण कर रहे हैं'।[31] उपरोक्त नगरों में आवश्यक सामग्री की आपूर्ति, अवसरंचना के निर्माण एवं सामान पहुँचाने के लिये विविध प्रकार के पेशेवर लोगों के बसासत को प्रोत्साहन मिला, सार्वजनिक प्रतिष्ठानों की स्थापना ने भी रोजगार के अवसर प्रदान किये।

मैदानी क्षेत्रों से उपरोक्त छावनियों तक पहुँचने के लिये औसतन 12 से 15 मील की दूरी पर सैन्य पड़ाव विकसित हुये। ये सैन्य पडाव कालांतर में सूक्ष्म नगरीय बस्तियों के रुप में विकसित हुये। लंढ़ौर के निर्माण के पश्चात् देहरादून–लंढ़ौर के मध्य राजपुर का विकास प्रारंभ हुआ, जो लंढ़ौर जाने वाले यूरोपीयों के लिये मुख्य सैन्य पड़ाव था।[32] मैदानी क्षेत्रों से चकराता

तक सैनिक औसतन सात से आठ दिन में पहुँचते थे। अतः सहारनपुर एवं चकराता के मध्य कुलसी, बादशाही बाग, फतेहपुर, कालसी एवं साहिया में सैन्य पड़ाव विकसित हुये, जो कालांतर में सूक्ष्म नगरीय बस्तियों के रुप में विकसित हुये।[33] लैंसडौन की स्थापना के पश्चात् कोटद्वार एवं लैसडौन के मध्य कोटद्वार में कौंडियाला तथा दुगड्डा में सैन्य पड़ाव विकसित हुआ। लैंसडौन छावनी के बाद ही कोटद्वार एवं दुगड्डा की जनसंख्या एवं व्यापार में तेजी से वृद्धि होने लगी।[34]

औपनिवेशिक मुक्ति के पश्चात् छावनियों के कार्यात्मक स्वरुप में आमूलचूल परिवर्तन हुये। अन्य पर्वतीय छावनियों समेत लंढ़ौर एवं चकराता छावनियों में प्रवास करने वाले यूरोपीय रेजीमेंटों का स्थान भारतीय रेजीमेंट लेने लगे। भारतीय रेजीमेंट यूरोपीय रेजीमेंटों के विपरीत वर्ष भर छावनियों में रहने लगे। स्वतंत्रता के पश्चात् भारत सरकार ने सैनिकों की संख्या में कई गुना वृद्धि की, जिससे छावनियों में सैनिकों की संख्या में निश्चित रुप से वृद्धि हुई। सैनिकों की संख्या में वृद्धि के साथ सरकार ने छावनियों में सैन्य परिवारों के लिये बड़ी संख्या में फैमली क्वाटरों, सैन्य महत्व के विनिर्माण उद्योगों तथा प्रशिक्षण केन्द्रों का निर्माण करवाया। छावनियों के कार्यिक संरचना में परिवर्तन के अतिरिक्त छावनियों में स्थित सार्वजनिक प्रतिष्ठानों में सेवारत्त कर्मचारियों की संख्या में वृद्धि, परिवहन तथा संचार के साधनों में सुधार आदि कारकों ने छावनियों में आर्थिक क्रियाकलापों को प्रोत्साहित किया।[35] स्वतंत्रता के उपरांत पर्वतीय नगरों में यूरोपीय मौसमी प्रवासियों का स्थान मध्यमवर्गीय भारतीयों ने लेना प्रारंभ किया। यातायात के साधनों में सुधार, लोगों की आय में वृद्धि एवं आर्थिक समृद्धि के परिणामस्वरुप बड़ी संख्या में विदेशी यात्रियों समेत भारतीय भी पर्वतीय नगरों में घूमने पहुँचने लगे हैं। औपनिवेशिक मुक्ति के उपरांत मसूरी, शिमला, दार्जिलिंग समेत चकराता, लैंसडौन तथा लंढ़ौर लोकप्रिय पर्यटन केन्द्र के रुप में विकसित हुये। मसूरी–लंढ़ौर प्रारंभिक समय से ही पर्यटन के लोकप्रिय केन्द्र थे। लैंसडौन छावनी मैदानी क्षेत्रों एवं दिल्ली के निकट होने से 20वीं सदी के अंतिम दशकों से पर्यटन केन्द्र के रुप में तेजी से विकसित हुई। जहाँ ऐतिहासिक महत्व के चर्च, मंदिर, दरबान सिंह संग्रहालय तथा अन्य सैन्य धरोहरों के साथ प्राकृतिक सौंदर्य से परिपूर्ण स्थल मौजूद हैं। मैदानी क्षेत्रों से अत्यधिक दूरी पर स्थित चकराता में न तो ऐतिहासिक महत्व के धरोहर है, और न ही उसके आसपास कोई अन्य पर्वतीय नगर। इसलिये औपनिवेशिक मुक्ति के उपरांत भी चकराता छावनी लोकप्रिय पर्यटक स्थल के रुप में विकसित नहीं हो सकी। किंतु 21वीं सदी में यातायात खासकर निजी वाहनों की सुविधा के उपरांत पर्यटक चकराता तक पहुंचने लगे हैं। लोकप्रिय पर्यटन स्थलों के रुप में विकसित होने से लंढ़ौर, लैंसडौन एवं चकराता छावनियों तथा उनकी सीमाओं के आसपास तेजी से बड़े–बड़े होटलों तथा अन्य आधारभूत संरचनाओं का निर्माण प्रारंभ हुआ। उपरोक्त गतिविधियों के परिणामस्वरुप छावनियों की आबादी में तेजी से वृद्धि हुई। (सारणी–4)[36]

छावनी का नाम	लंढ़ौर	लैंसडौन	चकराता
1941	1206	6174	957
1951	1417	4419	1283
1961	1389	6381	3194
1971	2351	6670	6105
1981	1910	8106	8106

सारणी–4, लंढ़ौर, लैंसडौन एवं चकराता छावनियों की आबादी सन् 1941 से 1981 के मध्य

लंढ़ौर की जनसंख्या सन् 1941 में 1206 थी वह सन् 1971 में बढ़कर 2351 (95 प्रतिशत की वृद्धि) हो गई थी। चकराता छावनी की आबादी सन् 1941 में 957 थी, जो सन् 1971 में बढ़कर 6105 (538 प्रतिशत की वृद्धि) हो गई थी। इसी प्रकार लैंसडौन छावनी की आबादी सन् 1951 में 4419 थी, जो 1981 में बढ़कर 8106 (84 प्रतिशत की वृद्धि) हो गई थी।

अतः उपरोक्त क्रियाकलापों के परिणामस्वरुप छावनियों में व्यापारिक गतिविधियों को बल मिला। सन् 1908 में लंढ़ौर की आय मात्र 10 हजार रुपय थी, वह सन् 1990 में बढकर 20,63,977 रुपये हो गयी। इसी प्रकार चकराता छावनी की आय सन् 1908 में 25 हजार रुपये थी, जो सन् 1990 में बढ़कर 45,94,528 रुपय प्रति वर्ष हो गई थी। लैंसडौन की आय 1908 में मात्र 15907 रुपये प्रति वर्ष थी, वह 1990 में बढ़कर 4608737 रुपये प्रति वर्ष हो गई थी।(सारणी–5)[37]

छावनी का नाम	लंढ़ौर	लैंसडौन	चकराता
1950	—	94577	295647
1986	897565	3050879	3358210
1990	2063977	4608737	4594528

सारणी–5 लंढौर, लैंसडौन तथा चकराता छावनी की वार्षिक आय

वर्तमान में पर्यटन उद्योग उत्तराखंड़ की आर्थिकी का महत्वपूर्ण स्रोत है, जिसमें पर्वतीय नगरों में पर्यटन करना महत्वपूर्ण है, इन पर्वतीय नगरों में प्रतिवर्ष हजारों की संख्या में देश–विदेश से पर्यटक पर्यटन के लिये पहुँचते रहते हैं। पर्यटन के कारण उपरोक्त छावनियों का आर्थिक विकास तो हुआ ही अपितु छावनियों के आससपास अनेक पर्यटक स्थलों का विकास संभव हुआ। मसूरी–लंढ़ौर के विकास के पश्चात् मसूरी–लंढ़ौर से औसतन 5 से 35 कि. मी. की दूरी पर कैंपटी फॉल, धनौल्टी, सुरकंडा, कद्दूखाल एवं कांणाताल जैसे पर्यटक स्थलों का विकास संभव हुआ। लैंसडौन के निर्माण के पश्चात् जयहरीखाल, डोरियाखाल का विकास संभव हुआ। लैंसडौन से कोटद्वार के मध्य अनगिनत होटलों, रेस्टोरेंटों का निर्माण हो रहा है। लैंसडौन के पर्यटन के रुप में महत्व को देखते हुये 21वीं सदी के शुरुआत से ही कई बार सरकार

ने लैंसडौन, पौड़ी, खिर्सू आदि को पर्यटक सर्किट के रुप में विकसित करने की योजना बनाई, हालांकि यह योजना अभी तक क्रियान्वित नहीं की जा सकी है। 2023 में चकराता छावनी तथा उसके आसपास पर्यटन के बढ़ते महत्व को देखते हुये उत्तराखंड़ सरकार ने चकराता के आसपास न्यू चकराता टाउन विकसित करने का प्रस्ताव पास किया, जिससे जौनसार–बावर में पर्यटन गतिविधियों को आवश्यक रुप से बल मिलेगा।

इस प्रकार गढ़वाल हिमालय में विकसित उपरोक्त पर्वतीय छावनियों के निर्माण से न केवल उपरोक्त छावनियों का आर्थिक विकास प्रारंभ हुआ, अपितु उनके आसपास भी तेजी से विकास कार्य प्रारंभ हुआ। पहाड़ियों में आर्थिक गतिविधियों के परिणामस्वरुप लोगों की आय एवं जीवन प्रत्याशा दर में भी गुणात्मक वृद्धि हुयी। अनियंत्रित विकास ने पहाड़ियों में पारि–पर्यावरणीय संकट को जन्म दिया है, हालांकि इस पारि–पर्यावरणीय संकट के समाधान के लिये सरकार धारणीय विकास को प्रोत्साहित कर रही है।

सन्दर्भ :

1. *ई.टी. एटकिंसन, हिमालयन गजेटियर, प्रकाश थपलियाल (अनुवादक), ग्रंथ–3, भाग–1 (हिमालयन संचेतना संस्थान, आदि बद्री, चमोली, 2001), पृ. 147*
2. *पोस्ट म्यूटिनी रिकार्ड, रेवेन्यू रिकार्ड, लेवी ऑफ ग्राउंड रेंट ऑन द लंढ़ौर बाजार ग्राउंड, 1899–1900, फाइल स. –227, बॉक्स–76, राज्य अभिलेखागार, देहरादून*
3. *उपरोक्त, पृ.26*
4. *उपरोक्त, पृ. 2, 4*
5. *ई. टी. एटकिंसन, हिमालयन गजेटियर, ग्रंथ–3, भाग–1, पूर्वोक्त, पृ. 147*
6. *अर्जुन सिंह, गढ़वाल हिमालय के पर्वतीय छावनियों का ऐतिहासिक अध्ययन :–19वीं से 20वीं सदी तक, (अप्रकाशित शोध ग्रंथ इतिहास विभाग, हे. न.ब.ग.वि.वि., 2022), पृ. 34*
7. *उपरोक्त, पृ.150*
8. *उपरोक्त, पृ.132, 150*
9. *आर.के. जोशी, जौनसार बावर एक संक्षिप्त परिचय, (सोसाईटी फॉर मोटिवेशनल ट्रेनिंग एण्ड एक्सन (समता), चकराता, 1995), पृ. 5*
10. *एच.जी.वाल्टन, देहरादून का गजेटियर, प्रकाश थपलियाल (अनुवादक), (हिमालयन संचेतना संस्थान, आदि बद्री, चमोली, 2001), पृ. 255*
11. *अर्जुन सिंह, राजपाल सिंह नेगी, उन्नीसवीं शताब्दी में कालोंडाडा (लैंसडौन) के शहरीकरण का इतिहास, इतिहास दर्पण, अखिल भारतीय इतिहास संकलन योजना, दिसंबर 2023, अंक 28, वोल्यूम–38, पृ.107*
12. *अंबिका प्रसाद ध्यानी, गढ़वाल राइफल्स का इतिहास और योगदान : 1887 से ऑपरेशन विजय 1999 तक, (अप्रकाशित शोध ग्रंथ हे.न.ब.ग.वि.वि., 2006), पृ. 57*

13 *अर्जुन सिंह, राजपाल सिंह नेगी, उन्नीसवीं भाताब्दी में कालोंडाडा (लैंसडौन) के भाहरीकरण का इतिहास, इतिहास दर्पण, पूर्वोक्त, पृ.108*

14 *वही*

15 *गणेश सैली, मसूरी मेडले :– टेल्स ऑफ यस्टर ईयर, (नियोगी बुक्स, नई दिल्ली, 2010), पृ.175*

16 *जॉन नॉर्थम, गाइड टू मसूरी, लंढ़ौर, देहरादून एंड द हिल्स ऑफ नार्थ ऑफ देहरा, (कलकत्ता थैचर, स्पिंग एंड कं. 1884, पुनः मुद्रण पैगोडा ट्री प्रेस, यू.के., 2006)*

17 *पोस्ट म्यूटिनी रिकार्ड, रेवेन्यू रिकार्ड, लेवी ऑफ ग्राउंड रेंट ऑन द लंढ़ौर बाजार ग्राउंड, 1899–1900, पूर्वोक्त*

18 *जनरल लैंड रजिस्टर, चकराता छावनी, 1937, राश्ट्रीय अभिलेखागार, दिल्ली*

19 *पोस्ट म्यूटिनी रिकार्ड, मिलिट्री डिपार्टमेंट, रिपोर्ट बाय मेजर ए.एम.ड़ेविस, रॉयल मेडिकल कार्प्स, ऑन सैनिटरी इनवेस्टिगेशन एंड बॉक्टेरियोलॉजिकल इग्जामिनेशन एट चकराता एंड कैलाना, 1901, राष्ट्रीय अभिलेखागार दिल्ली*

20 अर्जुन सिंह, राजपाल सिंह नेगी, उन्नीसवीं भाताब्दी में कालोंडाडा (लैंसडौन) के शहरीकरण का इतिहास, इतिहास दर्पण, पूर्वोक्त, पृ. 109

21 पोस्ट म्यूटिनी रिकार्ड, रेवेन्यू रिकार्ड, लेवी ऑफ ग्राउंड रेंट ऑन द लंढ़ौर बाजार ग्राउंड, 1899–1900, पूर्वोक्त

22 एच.जी. वाल्टन, देहरादून का गजेटियर, पूर्वोक्त पृ. 82 से 85 तक

23 टीकाराम शाह, जौनसार–बावर ऐतिहासिक संदर्भ :– समाज, संस्कृति और इतिहास, (बिंसर पब्लिशिंग कंपनी, देहरादून, 2016), पृ.437

24 अर्जुन सिंह, गढ़वाल हिमालय के पर्वतीय छावनियों का ऐतिहासिक अध्ययन :–19वीं से 20वीं सदी तक, पूर्वोक्त, पृ. 130 से 148 तक

25 एच.जी.वाल्टन, देहरादून का गजेटियर, पूर्वोक्त पृ. 224, 254

26 एच.जी.वाल्टन, गढ़वाल हिमालय का गजेटियर, प्रकाश थपलियाल (अनुवादक), (हिमालयन संचेतना संस्थान, आदि बद्री, चमोली, 2001), पृ.180

27 एच.जी. वाल्टन, देहरादून का गजेटियर, पूर्वोक्त पृ. 206

28 उपरोक्त, पृ. 209

29 ई.के.पौ, रिर्पोट ऑन द् टेन्थ सेटलमेंट रिर्पोट ऑफ गढ़वाल, डिस्ट्रिक, (गवर्मेंट प्रेस इलाहबाद, 1896), पृ.73

30 एच.जी. वाल्टन, गढ़वाल हिमालय का गजेटियर, पूर्वोक्त पृ. 72

31 ई.के. पौ, रिर्पोट ऑन द् टेन्थ सेटलमेंट रिर्पोट ऑफ गढ़वाल, डिस्ट्रिक, पृ.73

32 पोस्ट म्यूटिनी रिकार्ड, रेवेन्यू रिकार्ड, लेवी ऑफ ग्राउंड रेंट ऑन द लंढ़ौर बाजार ग्राउंड, 1899–1900, पूर्वोक्त

33 पोस्ट म्यूटिनी रिकार्ड, मिलिट्री डिपार्टमेंट, रिपोर्ट बाय मेजर ए.एम. ड़ेविस, रॉयल मेडिकल कार्प्स, ऑन सैनिटरी इनवेस्टिगेशन एंड बॉक्टेरियोलॉजिकल इग्जामिनेशन एट चकराता एंड कैलाना, 1901,

34 डबराल, शिव प्रसाद, उत्तराखंड का राजनैतिक इतिहास, भाग–8, (बीरगाथा प्रकाशन दोगड्डा, 1978), पृ.29, 37, 38

35 के.एम. कुलकर्णी, कैंटोनमेंट टाउन्स ऑफ इंडिया, पृ.216, 218

36 अर्जुन सिंह, गढ़वाल हिमालय के पर्वतीय छावनियों का ऐतिहासिक अध्ययन :–19वीं से 20वीं सदी तक, पूर्वोक्त, पृ. 130 से 134 तक

37 उपरोक्त, पृ.115

पूर्वदेवा– सामाजिक विज्ञान शोध पत्रिका
वर्ष 29, अंक, 116, जनवरी–मार्च, 2024 पृ. 144–149

UGC Care Listed Journal
ISSN 0974 -1100

EWS Reservations in India
Historicity and Evidence in Action

Dr. Jagir Kaur
Associate Professor, SGTB Khalsa College, University of Delhi
E-mail: jagir.banger@gmail.com Mob.: 9650279834

Pranay Khattar
Public Affairs Researcher)

Abstract

This study delves into the historical context and contemporary implications of economic reservations for the Economic Weaker Sections (EWS) in India. The research examines debates within the Constituent Assembly regarding the implementation of affirmative action based on caste or economic criteria. It further scrutinizes the representation of the Economic Weaker Section following the 103rd Constitutional Amendment Act and analyzes subsequent Supreme Court precedents, notably the ruling on November 7, 2022, upholding reservations in higher education institutions. Empirical analysis reveals a significant population existing prior to the initiation of reservations, underscoring the necessity of studying historical trends and data concerning such reservations. The study sheds light on the relevance of economic reservations in juxtaposition to caste-based reservations, contemplating their impact on societal upliftment and economic parity. By amalgamating historical insights and contemporary data, this research aims to facilitate a deeper understanding of the implications of economic reservations and their potential role in reshaping the trajectory of affirmative action policies. Future research should continue to investigate these trends to unravel the broader implications of economic reservations and to inform policy decisions that strive for an equitable and inclusive society.

Keywords- Reservation, Economic Weaker Section, 103rd Constitutional Amendment, Affirmative Action, Supreme Court, Scheduled Castes, Constituent Assembly

Introduction

Social disparity in India is deeply ingrained, notably exemplified by the enduring caste system, criticized by both Indian and foreign observers despite claims of its

abolition or diminished relevance (Kaur & Suri, 2009).[1] Caste system has led to non-inclusive growth and development and often acted as a social fracture in the heterogenous social construct in the Indian subcontinent. The stratifications imposed were so strong that employment, education and even education along the caste divisions were (are) considered to ostracization in the society. Post independence, reservations along the caste lines was contemplated as a constitution ensured affirmative action for better representation in education and employment (Mencher, 1974).[2]

Discourse on Reservations: Reflections on the Constituent Assembly

The Constituent Assembly, established in 1946 to craft independent India's constitution, prioritized reservations as a crucial political safeguard to ensure adequate representation for minority groups (Prasad, 2019)[3]. On August 30, 1947, the Advisory Committee on Fundamental Rights, Minorities, and Tribal and Excluded Areas, appointed by the Constituent Assembly, recommended the reservation of seats for Scheduled Castes in legislatures (Austin , 1999).[4]

S.Nagappa, an elected member of the Madras state legislative assembly and a prominent figure in the Quit India movement, advocated for reservations, asserting that Scheduled Castes constituted a minority in economic, political, and social terms. Nagappa expressed willingness to abolish reservations if substantial economic and educational support was provided to Harijan families, ensuring their access to land, education, and key positions in various departments. His stance highlighted the importance of securing representation and opportunities for marginalized communities (Constituent Assembly Debates 25 August, 1949).[5]

Mohan Lal Gautam, a representative of the United Provinces assembly, suggested that Brahmins would readily exchange positions with a "Harijan" if it meant acquiring the land offered. In response, Nagappa contended that merely changing one's religious identity to "Harijan" would not suffice unless one was also willing to engage in menial and degrading work like scavenging and sweeping for others reflective of the division of labour as presented by Ambedkar (Constituent Assembly Debates 25 May, 1949).[6]

Critics of reservations, including HC Mookherjee and ZH Lari, argued against using reservations as the solution for social disparities. Mookherjee advocated for economic safeguards as a more fitting remedy, while Lari suggested achieving representation for disadvantaged groups through a system of proportionate representation based on cumulative votes rather than reservations. (Prasad, 2019).[3]

Two voices within the debate opposed the categorization of beneficiaries solely based on their caste. Mahavir Tyagi, an elected representative from the United Provinces, and Jerome D'Souza, a professor and theologian from Madras, advocated for alternative markers of social disadvantage as the basis for providing reservations.

Mahavir Tyagi emphasized that minorities should be defined economically, politically, and ideologically, ensuring their protection. He argued for special reservations for

individuals engaged in low-income occupations such as landless laborers and cobblers, highlighting the need for representation for these overlooked classes who struggled to make ends meet. It is necessary to note that Tyagi did not rely on income or wealth as indicators of disadvantage; instead, he emphasized occupational communities and classes of laborers (Bhatia , Vasudev Devadasan, & Sangal, 2022)[7]

Jerome D'Souza advocates against using caste or religion as exclusive criteria for reservations, emphasizing the need to base reservations on an individual's specific deficiencies and socio-economic context. He stresses assisting those disadvantaged in society due to economic and educational circumstances, advocating for a criterion focusing on individual needs and opportunities rather than caste or religion (Constituent Assembly Debates 25 August, 1949).[5]

The Indian constitution, adopted in January 1950, endorsed reservations primarily based on caste-driven social disadvantages, ensuring adequate representation for Scheduled Castes (SCs), Scheduled Tribes (STs), and socially backward classes in state services and legislative bodies. This provision aimed to secure political minority representation, aligning with the fundamental outlook of the constitution. In the subsequent year, the debate resurfaced regarding the use of economic criteria as a measure of backwardness. In May 1951, an amendment was introduced to the constitution, empowering the state to establish "special provisions for the advancement of any socially and educationally backward classes of citizens, or for the Scheduled Castes and the Scheduled Tribes." (Prasad, 2019).[3]

KT Shah criticized the proposed amendment for overlooking economic factors, advocating for their inclusion in determining backwardness. He emphasized individual citizen consideration over categorizing "classes," expressing concern that focusing on socially and educationally backward classes would not adequately uplift India's impoverished citizens (Constituent Assembly Debates 29 November, 1948).[8]

In 1953, President Rajendra Prasad formed the first Backward Classes Commission, chaired by Kaka Kalelkar, to determine criteria for identifying "socially and educationally backward" individuals. The 1955 report listed criteria like low caste status, limited education, representation, and economic presence. However, the government rejected caste as a criterion, opting for economic tests. This policy continued until the partial implementation of the Mandal Commission report, a landmark move recommending reservations for Other Backward Classes (OBCs) in government jobs and education, addressing social and educational disparities (Jayaswal, 1992).[9]

Indian Constitution and Reservation

The Indian Constitution incorporates vital provisions to implement the reservation policy, notably focusing on equal opportunities in education and public sector employment through Articles 15 and 16. Article 15(4) grants the state the discretion to enact special measures to uplift socially and educationally backward classes, Scheduled Castes, and Scheduled Tribes (SC & ST). However, it does not confer a constitutional right to claim reservation. Article 16(4) specifically addresses

reservation in government jobs, enabling communities inadequately represented to claim reservation, establishing a constitutional entitlement. The objectives of Articles 15(4) and 16(4) differ in their focus and implementation. Article 15(4) broadly aims to uplift backward communities, offering various provisions, including scholarships, as part of a policy decision. Conversely, Article 16(4) targets underrepresented segments for reservation in state employment, constituting a constitutional entitlement.

The broader aim across both articles is to eradicate discrimination and advance society, fostering a society free from discriminatory barriers, promoting progress, and inclusivity. The Directive Principles of State Policy underline the state's duty to prioritize the educational and economic welfare of weaker sections, particularly SC/ ST, shielding them from exploitation and social injustices. Additionally, Article 340 mandates a commission to evaluate the socio-economic status of backward classes, including SC/ST. Articles 341 and 342 further necessitate the compilation of lists defining SC or ST status, ensuring these communities can assert their identity and avail reservation benefits. These constitutional provisions collectively aim to shape an inclusive society by addressing historical injustices and promoting equitable opportunities.

EWS Reservation

The Indian Parliament approved the Constitution (One Hundred and Third Amendment) Act, 2019, on January 9, 2019. This significant legislation empowered states to implement reservations in higher education and public employment based on economic considerations. It brought about modifications to Articles 15 and 16 of the Indian Constitution, incorporating clauses 15(6) and 16(6). The President's approval was granted on January 12, 2019, and the amendment was promptly published in the Gazette.

Article 15(6) of the Indian Constitution empowers the State to enact special provisions, including reservations in educational institutions, for the economic weaker sections (EWS) of citizens, allowing up to 10% of seats to be reserved, regardless of aid to the institution. This provision does not apply to minority educational institutions under Article 30(1). Article 16(6) extends this reservation authority to appointments, also capped at 10%, in addition to existing reservation policies. However, the amendment faced legal challenges with over 20 petitions contesting its validity. Critics argued that economic criteria-based reservations were inconsistent with the Indra Sawhney v. Union of India (1992) judgment, violated the right to equality, and breached the 50% ceiling on reservations. The objections also included reservations for non-state-aided educational institutions, seen as a violation of the fundamental right to equality.

After extensive legal proceedings, the Supreme Court of India reserved its order on whether to refer a crucial case regarding reservations for economically weaker sections (EWS) to a Constitution Bench in 2019. The decision to refer the matter to a five-judge bench was made on August 5, 2020, emphasizing the complexity and significance of the issues involved. A 5-Judge Constitution Bench, with Chief

Justice U.U. Lalit at the helm, was set to preside over the case on August 30, 2022. Furthermore, there were four other Constitution Bench cases planned for the initial week of September. Chief Justice Lalit indicated a desire to concurrently address this case and a challenge against the 2005 Act in Andhra Pradesh, which provided reservations for Muslims in the state. However, the Bench postponed the decision on when to proceed with the hearing of the EWS reservation case until September 6, 2022. Subsequently, on September 8, 2022, the Bench approved the outlined issues presented by Attorney General K.K. Venugopal, emphasizing the crucial aspects to be dealt with. These encompass whether reservations based solely on economic criteria are permissible, the states' authority to enforce reservations in private educational institutions without government aid as per the Amendment, and the validity of EWS reservations in terms of excluding specific disadvantaged groups from their ambit.

The Bench concluded its deliberations on September 27, 2022 and on November 7, the ruling was issued with a 3:2, the majority favoring the constitutionality of the Amendment and EWS Reservations. Justices Maheshwari, Trivedi, and Pardiwala provided distinct opinions supporting the majority, while Justice Bhat presented a dissenting view on behalf of himself and Chief Justice U.U. Lalit. On December 6, the Society for the Rights of Backward Communities lodged a petition requesting a review of the judgment endorsing EWS reservations. However, on May 9, 2023, Chief Justice D.Y. Chandrachud led a 5-Judge Constitution Bench and dismissed the petition, stating that there were insufficient grounds to justify a review of the judgment. (EWS Reservation Janhit Abhiyan v. Union of India , 2023).[10]

Analysis of EWS Representation in Higher Educational Institutions

An Analysis of NIRF data (by Sunny Jose and A. Bheemeshwar Reddy in *EWS Quota: A Policy Against Evidence*) reveals that EWS category is very well represented in higher educational institutions. Although NIRF data does not reveal data for EWS directly rather under the category 'students whose parental income is less than taxable slab.' To avoid duplication, the format specifies that economically backward students should be treated as a separate category and not be counter in the socially backward categories and vice versa. The taxable slab of parental incomes corresponds closer to rupees 8 lakh, the income cut-off to avail the EWS quota (OBC & EWS Reservation in Postgraduate Medical Admission (PG NEET), 2022).

The NIRF 2019 data suggests that EWS students constituted 19% in the NIRF ranked higher education institutions while the students from the socially backward groups (SC's, ST's and OBC's) formed 39%. The share of EWS students in 218 public higher education institutions and 239 private institutions stood at 19% and 20% in 2019 whereas the in 2022, the share of EWS students stood at 17% and 13%. Whereas the share of socially backward students in private institutions stood at 36% in 2019 which remains unchanged in 2022. Within public institutions, the share socially backward students remained stagnant in 36% in 2019 and 2022. Within public institutions, the share of EWS in centrally funded institutions such as the IITs and IIMs was 21% in 2019; it has dropped to 16% in 2022.

The analysis of NIRF data clearly showcases that the EWS students from General category account for a representation well above the 10% determined quota in these premier education institutions and the trends of representation pre and post the constitutional amendment mandating EWS reservation in educational institutions suggests that it has remained the same (Jose & Reddy, 2023).**11**

Conclusion

As of now available evidence suggests against the rationale used to justify the said reservation policy. When viewed from a historical perspective of the development of discourse surrounding affirmative action in the form of reservations in India, there is little in history to support such reservations on the ground of economic criteria whose evolution is largely devoid of societal structures. There exists an intelligible differentia which distinguishes people. There is also a distinction between affirmative actions and poverty alleviation programs, even if both can be classified into social safety nets.

❒

References :

1. *Kaur, H., & Suri, R. (2009). Caste, Class and Discrimination . In H. Kaur, & R. Suri, Reservation in India: Recent Perspectives in Higher Education . Pentagon Press.*
2. *Mencher , J. (1974). The Caste System Upside Down or The Not-So-Mysterious East. Current Anthropology, 469-493.*
3. *Prasad, M. (2019, 3 28). From the constituent assembly to the Indra Sawhney case, tracing the debate on economic reservations. Retrieved from The Caravan: https://caravanmagazine.in/law/economic-reservations-constituent-assembly-debates*
4. *Austin , G. (1999). The Indian Constitution: Cornerstone of a Nation . Oxford University Press.*
5. *Constituent Assembly Debates 25 August. (1949, 7 25). Retrieved from https://indiankanoon.org/doc/1954150/*
6. *Constituent Assembly Debates 25 May. (1949, 5 25). Retrieved from https://loksabha.nic.in/writereaddata/cadebatefiles/C25051949.html*
7. *Bhatia , G., Vasudev Devadasan, & Sangal, A. (2022, 9 28). Guest Post: Scheduled Castes as the "Central Case" of Reservation Policy . Retrieved from Indian Constitutional Law and Philosophy: https://indconlawphil.wordpress.com/2022/10/28/guest-post-scheduled-castes-as-the-central-case-of-reservation-policy/*
8. *Constituent Assembly Debates 29 November. (1948, 11 29). Retrieved from Constitution of India : https://www.constitutionofindia.net/debates/29-nov-1948/*
9. *Jayaswal, R. (1992). The First Backward Classes Commission: Dilemma of Caste Based Reservation. In R. Jayaswal, Compensatory discrimination and other backward classes (pp. 29-45). School of Social Sciences, Jawaharlal Nehru University.*
10. *EWS Reservation Janhit Abhiyan v. Union of India . (2023, 5 26). Retrieved from Supreme Court Observer: https://www.scobserver.in/cases/janhit-abhiyan-union-of-india-ews-reservation-case-background/*
11. *Jose, S., & Reddy, A. (2023). EWS Quota: A Policy Against Evidence . Social Change, 117-123.*

पूर्वदेवा– सामाजिक विज्ञान शोध पत्रिका
वर्ष 29, अंक, 116, जनवरी–मार्च, 2024 पृ. 150–160

UGC Care Listed Journal
ISSN 0974 -1100

A Comprative Study of Public and Private Health Insurance Sector in India

Dr. Dharminder Singh
Assistant Professor ,Commerce, Govt N.C.J. PG. College, Dallirajhara, Dist. Balod (C.G.)
E-mail: dsingh99999@gmail.com Mob. 9907012111

Dr Lalee Sharma
Assistant Professor, Commerce ,Govt V.Y.T. PG. College, Durg (C.G.)

Abstract

Health insurance is one of the major contributors of growth of general insurance industry in India. The growth of this sector is important from the perspective of overall growth of general insurance Industry. At the same time, problems in this sector are also many which are affecting its performance. This paper provides an understanding on the performance of public and private health insurance companies in India. The study attempts to find out the growth and role of public and private sector health insurance. The data is mainly collected from secondary sources. The data has been analyzed and represented with the help of tables, diagrams and charts .Methodology used for the study Mann-Whitney– U-Test was applied to establish significant difference in the growth of public and private sector .

Introduction

In today's busy life, there is always a possibility of falling ill unexpectedly and requiring expensive treatment. There's always a slight chance that a loved one may be at the mercy of a chronic condition that requires long-term care. Fortunately, health insurance ensures that long-term treatment does not leave a family in dire financial straits. One can get covered under a health insurance plan by paying a small amount of premium to the insurer. This will save savings from the sudden shock of medical treatment. In this way, health insurance acts as a safety net for both savings and health care so that the family can continue to enjoy life. With the rate at which medical costs are rising, having health insurance become essential . Health Insurance is a great succour and can be used to finance healthcare cost. Necessary action to promote health insurance the insurance companies has to optimize its business operation by taking advantage of the economies of scale, hiring sales staff, partnering with more corporate agents and having a more visible online presence can increase

customer acquisition volume . people in the higher income group buy Health Insurance to save tax and consider financial security as a secondary benefit. The primary reason for buying Health Insurance should be to protect oneself and the family from unexpected hospitalization and healthcare cost.

The journey of Health Insurance in India was started during the pre-independence period in the form of health care planning. Health care planning is currently regarded as one of the most important aspect in the society. Health Insurance comes up as a solution of financing health care expenditure of the people. The earliest root of health insurance in country can be traced back to the era after Indian independence. After independence, primary health care was given importance and it has seen a lot of improvement. The history of health insurance in India began in 1948 with the Employees' State Insurance Scheme (ESIS). It was introduced as a social security for blue-collar workers in the organized sector in 1986. General Insurance Corporation launched India's first mediclaim scheme to standardize the terms and conditions under health insurance. In 1991, privatization of the insurance sector took place after the Indian government introduced the new economic policy and liberalization process. The health insurance industry has grown significantly mainly due to liberalization of economy and general awareness. Health Insurance in India emerges in the year 1999 with the introduction of Insurance Regulatory and Development Authority (IRDA) bill was sanctioned in the parliament. And in the evolution of this marks a milestone. The IRDA were constituted as an autonomous body in April, 2000 to regulate and develop the insurance industry. (*What Is the History of Health Insurance in India?*, n.d.)In the year 2001, IRDA introduced different provisions including Third Party Administrators (TPAs) system for extending support towards the administration and management of health insurance services. IRDA regularized and statutory control to insurance sector time to time. Presently there are 56 insurance companies out of which 24 are life insurance companies and 32 are general insurance companies(including 7 Standalone Health Insurance) operating in the country.

Review of literature

Kannan .N (2010)[1] conducted A study on the growth of Indian insurance sectorThe statistics of insurance penetration in the country are very poor. The key element of the reform process was the participation of foreign insurance companies with 26% of the capital. The main idea behind this reform was to create a more efficient and competitive financial system for the needs of the economy. Since then the insurance industry has gone through many major changes. Since liberalization LIC started facing competition from these companies, which was posing a threat to the existence of LIC, Insurance industry today stands as one of the most competitive due to the use of new distribution technologies and IT tools.

Dutta(2020)[2] examined the performance of health insurance sector in India. The Findings of the study show that there is significant relationship between earned premium and underwriting loss. There has been increase of premium earnings which

instead of increasing profit for the sector in fact has increased underwriting loss over the years.

Singh,& Singh (2020)[3] conducted A Study on outline the current picture of health insurance sector in India which is a part and parcel of general insurance. The Study revealed Health insurance sector in India has seen a huge growth since liberalization due to the introduction of private insurance.

Rath (2017)[4] examine the Growth And Development Of Health Insurance In India In The Post Privatization Era. concluded that Post Privatization there has been a significant increase in the growth of health insurance industry in India both in the public and private sector.

Yadav et al, (2022)[5] conducted a study on The Health Insurance Sector In India During Covid-19 Outbreak Health insurers faced both opportunities and challenges as a result of the COVID-19 pandemic, including the imperative need to develop more customer-centric new products and services that enable them to provide a significant health insurance benefit to the large untapped population of the Indian market.

Kumar and Duggirala (2021)[6] conducted a study on Health Insurance as a Healthcare Financing Mechanism in India in the last decade, there have been multiple changes in the healthcare industry in India. These changes have also affected the growth of the health insurance industry .There is a huge opportunity for health insurance companies to tap the uninsured population.

Kumar,.Rangarajan&Ranganathan (2011)[7] empirically examines the Indian health insurance market by observing the provider's perceptions and its relationship with the insured, the insurer and the third party administrators (TPAs). The study tries to find out the awareness level among the insured population and their attitude towards treatment cost. The findings suggest that the awareness level regarding policy terms and condition is low among the insured population and most of them do not care for the cost of treatment.

Mavalankar & Bhat (2000)[8] A discussion of the implications of privatization of insurance on health sector from various perspectives and how it will shape the character of our health care system is also attempted. In India has limited experience of health insurance. Given that government has liberalized the insurance industry, health insurance is going to develop rapidly in future.

Sinha (2005)[9] conducted a study on challenges and prospects of Indian insurance industry The objectives of this report are to explore the current state of development in India's insurance market and enumerate the opportunities and challenges offered by this exciting market.

Gairola(2016)[10] conduct a Comparative Study of Public and Private Life Insurance Companies in Post Liberalization Era . It revealed that private life insurers put efforts to improve its performance year after year and affected the LIC in many ways. To overcome and compete with this situation LIC introduced new and attractive

insurance plans, put efforts for better customer relationship management and effective advertising.

Surya and Mora(2015)[11] examine the comparative performance of public and private sector general insurance companies in India. It revealed that the LIC continues to dominate the sector. Private sector insurance companies also tried to increase their market share. Private companies play major role in life insurance business efficiently and customer friendly. They have also jolted and facing stiff competition from the LIC.

Shahi & singh (2015)[12] conducted a comparative study on performance of health insurance business of public and private general insurance companies. The comparative performance of the 4 public, 8 private general insurance companies and 2 standalone health insurance companies has been examined using the Claim Ratio and Net Retention Ratio. It revealed significant difference between the claim ratio and net retention ratio of health insurance business of public and private general insurance companies.

Srivastava & Prakash (2016)[13] conducted a comparative study on public & private life insurance companies in India. It revealed that the LIC with 73% of business share still holds a significant market share. private insurance companies have established footholds in the market leading to intense competition. It have a higher growth rate as compared to public sector. The Insurance companies are competing in terms of policies sold, collection of premium income and others.

Objectives of the Study.

- To study the performance of health insurance sector in India with respect to public and private Health insurance companies.
- To compare the growth rate of total Health insurance premium among public and private Health insurance companies.
- To find out the performance of public and private Health insurance companies in each category (premium, no of persons covered, new policies issued, market share,).

Hypotheses

The following null hypotheses are formed for the study.

1. There is no significant difference in the growth rate of direct premium income between public and private health insurance sector.
2. There is no significant difference in the growth rate of number of persons covered among public and private health insurance sector.
3. There is no significant difference in the growth rate of new policies issued among public and private health insurance sector .

Research Methodology

The research is based on descriptive research. The study is made on the

basis of data collected from secondary sources from the annual reports of Insurance Regulatory Development Authority (IRDA) from 2014-15 to 2021-22, various journals, research articles and websites. An attempt has been made to evaluate the performance of the health insurance sector in India. The information collected are analyzed and presented through suitable Table .The comparison of public and private health insurance sector is analyzed by any significant difference in the growth of new policies issued by the companies, market share, direct premium collected and number of persons covered or not. For this purpose Non- Parametric Test (Mann-Whitney U test) used. This test is used to determine whether two independent samples have been drawn from the same population.

Indian Insurance in the Global Scenario

India is expected to be one of the fastest growing markets in the world in the coming decade. According to Swiss Re data, India is ranked 10th in the global insurance business with 1.85% market share in 2021 . The total insurance premium in India grew by 13.46 % in 2021 while the global total insurance premium grew by 9.04% during the year. Globally, the share of life insurance premium in total premium during 2021 was 43.69 % and that of non-life insurance premium was 56.31%. However, the share of life insurance business for India was 76.14 % while the share of non-life insurance business was 23.86 %. India ranked 14th in the world In non-life insurance business,. India's share of the global non-life insurance market was 0.78 %. The Indian non-life insurance sector recorded 11.30% growth during 2021 while the global non-life insurance premium grew by only 8.37% .(*Annual Reports - IRDAI*, n.d.)

Insurance Penetration and Density in India

Insurance penetration and density are two metrics, among others, often used to assess the level of development of the insurance sector in a country . Insurance penetration can be calculated as a percentage of insurance premiums to GDP while insurance density is presented as a ratio of premium to population .

Table no 1 : Insurance Penetration and Density in India non life Insurance sector

	Penetration (%)			Density (USD)		
Year	Life	Non-Life	Total	Life	Non-Life	Total
2014-15	2.60	0.70	3.30	44.0	11.0	55.0
2015-16	2.72	0.72	3.44	43.2	11.5	54.7
2016-17	2.72	0.77	3.49	46.5	13.2	59.7
2017-18	2.76	0.93	3.69	55	18	73
2018-19	2.74	0.97	3.70	54	19	74
2019-20	2.82	0.94	3.76	58	19	78

Source: Self compiled from various IRDA Annual Reports

During the post privatization era, insurance sector in india reported consistent development in insurance penetration in the non-life insurance sector from 0.70 per cent in 2014-15 to 1 per cent in 2021-22. However, life insurance sector trend shows signs of decline in the level of penetration by reaching 2.74 per cent in 2018-19 but non-life insurance sector insurance penetration increased continue .

Data Analysis and Interpretation

This research study gives an insight in to the present status of the Health Insurance sector in India and examines its growth in the last 8 years on following aspects.

Table no 2 :Sector Wise Health Insurance Premium collected in India (in Crore)

Insurance	2014-15	2015-16	2016-17	2017-18	2018-19	2019-20	2020-21	2021-22
Public sector	12882	15591	19227	21509	23536	24631.85	27228.2	32942.86
AGR		21.02%	23.32%	11.87%	9.42%	4.65%	10.54%	21%
A . General Health insurance	4386	4911	5632	7689	10655	12390.72	15875.09	20101.23
AGR		11.97%	14.7%	36.5%	38.57%	16.29%	28.18%	26.66%
B. Stand alone Health Insurance	2828	3946	5532	7831	10681	13735.5	15134.56	20001.43
AGR		39.53%	40.19%	41.55%	36.39%	28.59%	10.18%	32.16%
Private Sector	7214	8857	11164	15520	21336	26126.22	31009.65	40102.66
AGR		**22.78**	**26.05**	**39.02**	**37.47**	**22.45**	**18.69**	**29.32**
Total	20096	24448	30392	37029	44873	50758.07	58237.8	73051.52
AGR	14.90%	21.70%	24.30%	21.80%	21.20%	13.12%	14.74%	25.44%

Source- : Self compiled from various IRDA Annual Reports

Table 2 shows the health insurance premium collected by health insurance companies in india grew from Rs 20096 (crore) in 2014-15 to Rs 73051.52 (crore) in 2021-22 . Health premium collected by public sector insurance at Rs 32942.86(crore) and the participation of private sector insurers Rs 40102.66 (crore) of which Rs 20101.23 (crore) is from general health insurance and the remaining Rs 20001.43(crore) has been contributed by stand alone health insurance companies from the f.y. 2021-22. The annual growth rate of Health Insurance Premium collected over previous years is always positive. The Stand alone health insurance Sector highest growth rate has been observed as 41.55% in 2017-18 and the lowest growth rate 4.65% show in Public sector in 2019-20. From the data, it can be concluded that the premium collection by Stand Alone Health Insurers & Private Sector dealing exclusively with health insurance indicated an upward trend. The rate of premium collection showed a constant growth. This growth rate shows the increased the level of awareness toward health insurance among the people in the country and people in the higher income bracket buy Health Insurance to save tax and consider financial protection. Private sector health insurance companies grew. General health insurance and stand alone health insurers put efforts to improve its

performance. In health insurance private sector insurer are more efficient, customer friendly and play a major role in facing competition from the public sector.

Table no : 3 U-test for Growth Rate of Direct Health Premium Income

Descriptive Statics	Value	N	Mean rank	Sum of rank	U value	sig. (2 tailed)
Mean	21.25	N1	7	4.71	33	5.013
S.D.	9.99	N 7	7	10.29	72	
		14				

Source – calculated by spss-26

The tabulated probability for n1 =7 , n2 =7 and U 5 is .013 , which is less then (5% level of significance) hence, the null hypothesis framed for this study is rejected

Table no 4 : Sector Wise Number of Persons Covered Under Health Insurance (in lakh)

Insurance	2014-15	2015-16	2016-17	2017-18	2018-19	2019-20	2020-21	2021-22
Public sector	2114.51	2765.63	3473.23	3763.07	3200.81	3342.65	3719.26	3394.24
AGR		30.79%	25.59%	8.34%	-14.94%	4.43%	11.27%	-8.74%
A General Health insurance.	630.02	679.38	753.55	867.61	1164.78	1202.52	951.5	1119.46
AGR		7.83%	10.92%	15.14%	34.25%	3.24%	-20.87%	17.65%
B. Stand -alone Health Ins.	135.79	144.61	147.78	189.18	354.75	441.96	476.7	690.49
AGR		6.50%	2.19%	28.01%	87.52%	24.58%	7.86%	44.85%
Private Sector	765.81	823.99	901.33	1056.79	1519.53	1644.48	1428.2	1809.95
AGR		7.60	9.39	17.25	43.79	8.22	-13.15	26.73
Total	2880.32	3589.62	4374.56	4819.86	4720.34	4987.13	5147.46	5204.19
AGR		24.80%	21-87%	10.17%	-2.06%	5.65%	3.22%	1.10%

Source: Self compiled from various IRDA Annual Reports[14]

Table 4 shows the health insurance companies total no. of persons covered in India grew from 2880.32 (lakh) in 2014-15 to 5204.19 (lakh) in 2021-22. Persons covered by public sector insurance at 3394.24(lakh) and the participation of private sector insurers1809.95(lakh) of which1119.46 (lakh) is from general health insurance and the remaining 690.49 (lakh) has been contributed by stand - alone health insurance companies from the f.y. 2021-22. The annual growth rate of total no. of persons covered over previous years is always positive, except for the year 2018-19 when the growth rate was -2.06%. The stand - alone health insurance sector highest growth rate has been observed as 87.52% in 2018-19 and the lowest growth rate

show in public sector as -14.94% in 2018-19. Health insurance sector has persons covered around 52.04 crore health insurance policies which covered a total population. While government sponsored health insurance policies & commercial health insurance policies had contributed all persons covered . Total no. Of persons covered under private sector and stand -alone health insurers grew private sector andstand alone health insurers put efforts to improve its performance.

Table no 5 : Mann –Whitney U-test For Number of Person Covered by Public and Private Insurance Sector

Descriptive statistic	value	N	Mean rank	Sum of rank	U	Sig. value
Mean	11.19	7	6.86	48	20	.565
S.D.	16.83	7	8.14	57		
N	14	14				

Source – calculated by spss-26

The tabulated probability for n1 =7 , n2 =7 and U =20 is .565 , which is more than .05 , P >.05 (5% level of significance) hence, the null hypothesis framed for this study is Accepted

Table no 6: New Policies issued Sector wise under Health Insurance sector (in lakh)

Insurance	2014-15	2015-16	2016-17	2017-18	2018-19	2019-20	2020-21	2021-22
Public Sector Insurance	58.63	60.79	61.04	61.09	58.42	55.06	69.68	51.4
AGR		3.67%	0.43%	0.07%	-4.37%	-5.75%	26.56%	-26.24%
A . General Health insu.	25.7	26.15	30.18	37.22	82.35	45.62	74.83	65.52
AGR		1.80%	15.40%	23.33%	121.24%	-44.60%	64.03%	-12.44%
B. Standalone Health Insu.	24.96	31.22	40.15	48.99	66.05	78.65	92.88	109.33
AGR		25.05	28.6	22.02	34.82%	19.08%	18.10%	17.71%
Private Sector	50.66	57.37	70.33	86.21	148.4	124.27	167.71	174.85
AGR		13.25	22.59	22.58	72.14	-16.26	34.96	4.26
Total	109.29	118.16	131.37	147.3	206.82	179.33	237.39	226.25
AGR		8.11%	11.18%	12.12%	40.42%	-13.29%	32.38%	-5.20%

Source: Self compiled from various IRDA Annual Reports

The health insurance sector total new policies issued (nos.) In India grew from 109.29 (lakh) in 2014-15 to 226.25 (lakh) in 2021-22 . The annual growth rate of total new policies issued (nos.) Over previous years is always positive, except for the year 2019-20 and 2021-22, when the growth rate was -13.29% and -5.2% . The public sector insurance annual growth rate has been negative for the year 2018-19, 2019-20 and 2021-22, when the growth rate was -4.37%, -5.75% and -26.24%

respectively .The general health insurance companies highest growth rate has been observed as 121.24% in 2018-19 and also the lowest growth rate as -44.60% in 2019-20. Health insurance sector has issued around 2.26 crore health insurance policies which covered a total population. While government sponsored health insurance policies & commercial health insurance policies had contributed all persons covered during 2021-22. New policies issued (nos.) Under private sector insurers grew. general and stand-alone health insurers put efforts to improve its performance year after year and affected the public sector in many ways.

Table no. 7 -Mann –Whitney U-test for New Health Insurance Policies issued by Public and Private Insurance Sector

Mean	S.D.	N	Mean rank	Sum of rank	U	Sig. value
10.56	24.49	N1 =7	5.43	38	10	.064
		N2=7	9.57	67		
		Total =14				

Source – calculated by spss-26

The tabulated probability for n1 =7 , n2 =7 and U =10 is .064 , which is more than .05 , P >.05 (5% level of significance) hence, the null hypothesis framed for this study is Accepted.

Table no 8 : Percentage Share Of Premium Public And Private Sector

Insurance	2014-15	2015-16	2016-17	2017-18	2018-19	2019-20	2020-21	2021-22
Public sector	64%	64%	63%	58%	52%	49%	47%	45%
A . General Health insu.	22%	20%	19%	21%	24%	24%	27%	28%
B. Stand alone Health Insu.	14%	16%	18%	21%	24%	27%	26%	27%
Private Sector	36%	36%	37%	42%	48%	51%	53%	55%
Total	100	100	100	100	100	100	100	100

Source: Self compiled from various IRDA Annual Reports.[14]

The four public sector insurance companies contribute a major share of health insurance premium at 45% . The participation of private sector insurers 55.00%, of which 28% is from general health insurance and the remaining 27% has been contributed by stand alone health insurance companies of the gross health insurance premium from the F.y. 2021-22. Share of public sector insurance companies in health insurance premium has decreased 45% in F.Y. 2021-22 from 64% in F.y. 2014-15. Share of general health insurance companies in health insurance premium has increased 28% in F.y. 2021-22 from 22% in F.y. 2014-15 and the share of stand alone health insurance has also increased from 14.00% in F.y. 2014-15 to 27.00% in f.y. 2021-22 .Share percentage of health insurance premium of private sector health insurance companies grew. General health insurance and stand alone

health insurers put efforts to improve its performance. In health insurance private health insurer are more efficient , customer friendly and play a major role in facing competition from the public sector.

RESULTS AND INTERPRETATION

In order to know whether there is any statistically significant difference in the growth rates of public and private health insurance sector in terms of the parameters like direct premium income ,new policies issued,and number of persons covered , Mann-Whitney-U-Test was apply . For testing the null hypothesis, which is laid down, the U value was calculated. The results of Mann-Whitney-U- Test is given below.

Table no 09 : Results of Mann-Whitney - U- Test

Hypothesis	Particulars	Tabulated U Value	Result
H01	Direct Premium income	0.013	Rejected
H02	Number of persons covered	0.565	Accepted
H03	Number of new policies issued	0.064	Accepted

Source: Calculated Value by spss-26

Ho1: The tabulated probability for n1 =7 , n2 =7 and U 5 is .013 , which is less then (5% level of significance) hence, the null hypothesis framed for this study is rejected . That means there is a significant difference in the growth of direct premium income among public and private health insurance sector.

Ho2: The tabulated probability for n1 =7 , n2 =7 and U =10 is .565 , which is more than .05 , P >.05 (5% level of significance) hence, the null hypothesis framed for this study is Accepted . That means there is a no significant difference in the growth of number of persons covered among public and private health insurance sector**.**

Ho3: The tabulated probability for n1 =7 , n2 =7 and U =10 is .064 , which is more than .05 , P >.05 (5% level of significance) hence, the null hypothesis is framed for this study is Accepted . That means there is a no significant difference in the growth of new policies issued among public and private health insurance sector.

Conclusion

There is a significant growth of health insurance industry in india both at public and private sector after privatization. If this trend continues by keeping other factors constant, then the health insurance business would touch to Rs 100000 crores in the financial year 2023-24. Direct premium collected grew rapidly in the health insurance in India. This trend shows an increase in terms of net premium income for health insurance by both public and private insurers. Comparatively private sectors have done well mostly because of their different plans, aggressive pricing ,coverage of servicesand the retention of business.

In this competitive environment both public and private sector play their own part to build business. But public sector providers are accepted by a major set of

customers due to wide coverage of services, office network, add on covers and reliability factor. The reason for the low level of penetration and density of health insurance in the country was the poor level of awareness, lack of health care inclusion and huge untapped potential population. Due to this low level of penetration and high potential market in India, foreign companies looking at india as an ideal destination for insurance business. It is a clear proof private sector insurance have made their presence felt and have made remarkable progress in the last few years . There is a great opportunity for companies in the Indian health insurance sector. Companies have to bring innovative products to suit the different need of the public. A healthy competition in this field will be beneficial to all the sectors,public,and also the economy of country.

❒

References :

1. *Kannan, N. (2010). A study on the growth of Indian insurance sector. International Journal of Management, 1(1), 17–32.*
2. *Dutta, M. M. (2020). Health insurance sector in India: An analysis of its performance. Vilakshan - XIMB Journal of Management, 17(1/2), 97–109. https://doi.org/10.1108/XJM-07-2020-0021*
3. *Singh, R. R., & Singh, A. (2020). A study of Health insurance in India. International Journal of Management IT and Engineering, 10(4), 121–134.*
4. *Rath, D. J. P. (2017). A study on growth and development of health insurance in India in the post privatization era. A Study on Growth and Development of Health Insurance in India in the Post Privatization Era.*
5. *Yadav, B., Kaur, S., Devi, S., & Manocha, S. (2022). Critical performance analysis of the health insurance sector in India during covid-19 outbreak. Asia Pacific Journal of Health Management, 17(2), 1–8.*
6. *Kumar, R., & Duggirala, A. (2021). Health insurance as a healthcare financing mechanism in India: Key strategic insights and a business model perspective. Vikalpa, 46(2), 112–128.*
7. *Kumar, R., Rangarajan, K., & Ranganathan, N. (2011). Health Insurance in India—A Study of Provider's perceptions in Delhi & the NCR. Journal of Health Management, 13(3), 259–277.*
8. *Mavalankar, D., & Bhat, R. (2000). Health insurance in India: Opportunities, challenges and concerns. Ahmedabad: Indian Institute of Management, 1–16.*
9. *Sinha, T. (2005). The Indian insurance industry: Challenges and prospects. Available at SSRN 792166.*
10. *Gairola, V. (2016). A Comparative Study of Public and Private Life Insurance Companies in Post Liberalization Era. IJMBS (Print) International Journal of Management & Business Studies, 6(4), 39–43.*
11. *Surya, S. S., & Mora, M. B. R. (2015). A Comparative Study of Public and Private Life Insurance Companies in India.*
12. *Shahi, A. K., & Singh, H. (2015). Comparative performance of health insurance business of public and private general insurance companies in India. Management Review: An International Journal, 10(1), 61.*
13. *Srivastava, D. S., & Prakash, O. (2016). A comparative study of public & private life insurance companies in india. Vol-2 Issue-2.*
14. *Annual Reports-IRDAL.(n.d.) Retrieved July 25,2023, from http://irdai.gov.in/annual reports.*

पूर्वदेवा– सामाजिक विज्ञान शोध पत्रिका
वर्ष 29, अंक, 116, जनवरी–मार्च, 2024 पृ. 161–164

UGC Care Listed Journal
ISSN 0974 -1100

African Gandhi Nelson Mandela Life Struggle, Values and His Lesson

Dr. Kiran Bala
Associate Professor, Hemvati Nandan Bahuguna Garhwal University
(A Central University), Srinagar, Garhwal (Uttarakhand)
E-mail: rke.kiran@gmail.com Mob. 9837801666

We have celebrated the 105th birth anniversary of African Gandhi Nelson Mandela on 18th July 2023. This occasion is also an opportunity to think about Mandela's life struggle, his values, ideals and his lesson. UNO declared 18 July as a Nelson Mandela International Day in 2009 to recognize Nelson Mandela's contribution to peace, freedom, equality and justice. Mandela fought against apartheid policy in South Africa and dedicated his whole life to the people of South Africa. His sacrifice, dedication, social justice, equality, freedom and humanity were his ideals.

Today, human civilization is at the peak of development, despite the achievements of various socio-economic changes and globalization, the erosion of moral and human values is still a serious challenge in front of the present evolutionary model. On one side, where new paradigms of development are being established, while on the other side, there are problems like violence, unrest, war, terrorism, inequality and poverty exist in the world. Even today many other countries of the world are struggling for the establishment of democracy and many countries are struggling with a lack of basic facilities, discrimination, vandalism, and human rights. When we think about the current situation, the great thoughts and ideals of great people inspire us. One among these great people shows the life philosophy and education of African Gandhi Nelson Mandela seem like a beam of light. People faced many challenges were inspired by the African society to get rid of apartheid and exploitation even in adverse circumstances. Unveiling the statue of Nelson Mandela, UN Secretary-General Antonio Guterres said that, 'Mandela embodied the highest values of the United Nations- peace, forgiveness, compassion and human dignity. He was a champion for all people- in his words and in his action. He didn't pursue power for its own sake, but simply as a means of service. This humility is a hallmark of Madiba's greatness. His fought against apartheid which made landmark in the human rights and freedom'[1]. Analyzing his values and ideals seems to be as

simple as it is difficult to bring them down in our personality and creativity which shows that Mandela was an example of great values and ideals. In this way Nelson Mandela ran his campaign against apartheid in the country, he attracted the whole world. This was the reason that in 1990, the government of India honoured him with India's highest civilian honour 'Bharat Ratna'. At that time Mandela had not been elected president of south Africa. He was awarded with peace prize in the year 1993, for his contribution to the excellent work done for the humanity.

Mandela was brought up in a royal family, he had the option of leading a comfortable life, but he chose the difficult path of struggle and his efforts gave freedom to the people of South Africa. Mandela struggled throughout his life for equality, social justice, respect for human rights and the establishment of democratic values.

In the first half of the 20th century, South Africa was facing problems like discrimination and suppression due to its policy of apartheid. Such circumstances can be gauged from the fact 'which was sent in a letter to the Negro African novelist James Baldwin, on which Mary Benson raised the question of how a South African could discharge his duty as a writer in the extremely tense conditions in which he had to live'[2]. It is a more challenging task to keep fighting continuously in such difficult circumstances while facing these challenges, Mandela stood like a living sentinel. The conditions in South Africa were very unfavourable. Racism was at its peak. Neither Black people have the right to vote, nor they could go to school. Even if someone dared to go to school, he was given a Christian name. The name Mandela from Madiba was given to him in the school itself. Black people were tortured a lot. From the age of 16, Mandela started thinking about the circumstances of his country and fighting against the exploitative system. Since his childhood, he had the spirit to fight for his people. He says in his autobiography 'Long Walk to Freedom' that 'no one is born to hate another person because of the colour of his skin, or his background, or his religion. People can learn to hate, they can be taught to love because love comes more naturally to the human heart rather than hate'[3].

Nelson Mandela's foray into active politics began when many repressive laws were being implemented in South Africa. South Africa was the first country in the world to have a government policy about discrimination based on skin colour and race. After completing his education from university, Mandela obtained a law degree in 1942 and joined the African National Congress in 1944. Mandela was a founding member of the Youth League of this organization. In 1952, Mandela led a nationwide civil disobedience movement, after which a case was filed against him. Calling the people in the civil disobedience movement, Mandela said that any violence is not to be answered with violence but by maintaining non-violence and discipline[4]. His thoughts were inspired by Gandhiji. The aim of both was to build an inclusive society and both were against inequality, backwardness, poverty and exploitation. 'Mandela was an ardent champion of peace with reconciliation, a slogan that had a profound impact on the lives of the ordinary people. He called for brotherly love and integration with whites, and a sharing of Christian values'[5].

In 1960, the government set an unprecedented example of repression and opened fire on unarmed protesters in the Sharpbill massacre, which resulted in a large number of deaths. The government declared a state of emergency which was followed by mass arrests and the African National Congress was outlawed and Mandela was tried for treason. Mandela did not felt broken by this, but he displayed a sense of dedication towards his people and said that I will do what is right for the African people. He fought against the anti-people laws like the Asiatic Land Tenure Act and the Bantu Act of the British Government and he also launched a movement and demonstrated the restoration of public rights. The British government accused him for violence and sent him to jail in 1956 by imposing the Treason Act (treason). Addressing the court before going to jail, Mandela said that 'I always dreamed of a free democratic society where all people could live with full respect and love and with equal opportunities. If it is needed, I am even ready to die to achieve this goal'[6].

Nelson Mandela's life is a saga of glorious struggle. He spent 27 golden years of his life in jail for the citizens of his country. He was sent to the Robben Island prison which was considered as the black water of South Africa. Mandela also raised his voice against the exploitative system of the prison. When he was in prison, his mother and son died, and he was also surrounded by a serious disease like tuberculosis, but he kept on fighting without breaking even in difficult times till the victory was achieved. Mandela was a person who took stood for his principles, which is why he also rejected the offer of conditional release from the government. He said that your freedom and my freedom cannot be separated. Gradually, the pressure on Mandela's release at the international level increased and finally, he was released after 27 years of prison torture. After long imprisonment and various kinds of torture which made Mandela even more determined to serve his country and also, he got involved in this work even more intensely. When Mandela was released from imprisonment, he said that 'our country has to free both the oppressed and the oppressors. So as far we have not succeeded in this objective. We got the right not to suffer oppression in this freedom. The war of freedom is still going on'[7].

After a long struggle, democratic elections were held in Africa and 1994, Mandela became the first black President of South Africa. On this occasion, he said that from today on this beautiful earth, no human being will be treated as a victim as well as humiliated by anyone else. Mandela fought against apartheid throughout his life and despite facing many difficulties in his life, he never harboured hatred towards white's peoples. People of all colours and races came to his swearing-in ceremony, where he said that 'everyone would be proud of the glory and generosity that this new humanity has got this victory. It will work as an upliftment for humanity from the discrimination of gender, race, and colour. This new dawn will last forever'[8].

After Mandela became President, the biggest challenge occur before him was poverty. He believed that ending poverty is not like social service but it is definitely like giving justice and protecting basic rights. As long as there is poverty, there will be no real freedom[9]. He created administrative reforms and institutions in

which the Mandela Foundation and Elders Organization were prominent, which used to solve problems and give suggestions. Mandela was an outspoken person, which is why he publicly said in the then South African society surrounded by social taboo that his son had died of AIDS and people should talk openly on this subject[10]. Mandela always strove for political decency and freedom. He said that humanism is not the prerogative of anyone[11]. Mandela proved that political decency is a moral act. He spent his whole life with sacrifice, dedication, inclusiveness, forgiveness, and compassion. It is extremely important in today's time to adopt and take forward the life values and ideals of such a great hero.

Nelson Mandela united South African society by giving confidence to millions of people and teaching them to fight against the forces of apartheid. Truthfulness, generosity and tolerance are not just bookish things, their uses are necessary for the betterment of society. The relevance of their ideals and values will always remain as long as inequality, struggle, discrimination, violence, greed, exploitation and suppression are present.

Therefore, in today's hostile environment, it is necessary to remember Mandela's thoughts and learn from his values. Only then a democratic independent inclusive humanistic society can be established in the true sense.

❒

References :

1. *https://press.un.org/en/2018/sgsm19213.doc.html. 12 may 2023*
2. *Trends in Presented Day African Writing, Ezequiel Maphalele, UNESCO Courier quoted in Sharma, Aanand Swaroop, Dakshin Africa: Gore Aatank ke Khilaph Kaali Chetna, Neelabh Prakashan, Allahabad,1996, pp.163*
3. *Nelson Mandela, Long Walk to Freedom, Little Brown and Company, Bostan, New York, 1995*
4. *Shameer, M.A., African Gandhi Nelson Mandela, Manoj Publication, Delhi, 2015, pp.27*
5. *https://www.thehindu.com/opinion/op-ed/mandela-and-the-mahatma/article12009462.ece. 10 may 2023*
6. *Shameer, Ibid, pp.45*
7. *Sharma, Vishwamitra, Bharat Ratna, Rajpal and Sons, Delhi, pp.166*
8. *https://books.google.co.in/book/about/long-walk-to freedom.html.*
9. *Shameer, M.A., Ibid, pp.78*
10. *https://www.bbc.co/news/world-africa*
11. *Nehru, Jawaharlal, Meri Kahani, Sasta Sahitya Mandal,New Delhi,1965, pp.822*

पूर्वदेवा– सामाजिक विज्ञान शोध पत्रिका
वर्ष 29, अंक, 116, जनवरी–मार्च, 2024 पृ. 165–171

UGC Care Listed Journal
ISSN 0974 -1100

Comparison of Value Discoussion Model with Value Analysis Model in Terms of Value Clearification of B.Ed. Students of Indore City

Dr. Anju Baghel
H.O.D. (Education) ILVA Commerce & Science College, Indore (MP)
E-mail : anjubaghel123@gmail.com

ABSTRACT:

The present study entitled as "Comparison Of Value Discussion Model With Value Analysis Model In Terms Of Value Clarification Of B.Ed. Students Of Indore City" belonging to the area of models of teaching. It was an Experimental study. It was an attempt to answer questions, such as; did Value Discussion Model and Value Analysis Model help individuals in developing value clarification skill? The objective of the study was to compare adjusted mean scores of Value Clarification of Value Discussion Model, Value Analysis Model and Traditional Method Groups by considering Pre-Value Clarification as covariate. Hypothesis of the study was that there is no significant difference in adjusted mean scores of Value Clarification of Value Discussion Model, Value Analysis Model and Traditional Method Groups by considering Pre-Value Clarification as covariate. Random Sampling Method was used to select three colleges as sample from the list of available B.Ed colleges. Data was analyzed with the help of One Way ANCOVA. The finding indicated that Value Analysis Model was found to enhance Value Clarification significantly more than Value Discussion Model as well as Traditional Method when Pre-Value Clarification was taken as covariate. Further Value Discussion Model was found to enhance Value Clarification significantly more than Traditional Method when Pre-Value Clarification was taken as covariate.

Keywords: Models of Teaching, Value clarification

INTRODUCTION:

In today's era people living in an age of science and technology it has developed once knowledge but it has detoriated moral values. This has increased the complexity of society so students has to face competitions and many problems. Modern youth is suffering from value conflicting situations and unable to take right decision. For this

situation education is the only instrument which can help and teachers are the main source for this. So it is necessary to acquaint teachers with new techniques, methods and models of teaching.

Models of Teaching have been developed on the basis of theories from Psychology, Sociology, etc. and researches on effective teacher behaviors. Models of Teaching are structured logically, consistent, cohesive and logically described alternative patterns of teaching it has well defined and pinpointed Instructional objectives.

According to Joyce and Weil (1980) "A Model of Teaching is a plan or pattern that can be used to shape curriculum (Long term course of studies), to design instructional materials and to guide instruction in the classrooms and other settings."[1]

The Value discussion and value clarification models taken under for the present study belongs to the family of Social Interaction Models. This Models emphasize the relationship of the individual to society or to the other persons.

OBJECTIVE:

To compare adjusted mean scores of Value Clarification of Value Discussion Model, Value Analysis Model and Traditional Method Groups by considering Pre-Value Clarification as covariate.

HYPOTHESES:

There is no significant difference in adjusted mean scores of Value Clarification of Value Discussion Model, Value Analysis Model and Traditional Method Groups by considering Pre-Value Clarification as covariate.

SAMPLE:

The population for the present study was students of B.Ed. Colleges situated in Indore City and affiliated to Devi Ahilya Vishwavidyalaya, Indore. From the available colleges, three colleges were selected using Random Sampling Method. The selected colleges were Shri Gujrati Samaj B.Ed. College, Shri Jain Diwakar Mahavidyalaya and Christian Eminent Academy. All students studying in these colleges were taken for the study. Thus the sample comprised of 166 students studying at B.Ed.

EXPERIMENTAL DESIGN:

The present study was Experimental in nature. The Nonequivalent Control Group Design was used. According to Campbell and Stenly (1963), the layout of Nonequivalent Control Group Design is as follow:

0	XI	0
0	X2	0
0		0

TOOLS:

Value Clarification Scale developed by Singh (1991)[2] was used to assess Value Clarification of the students. There were 50 positive and negative items. Each item has five alternatives. These are Strongly Agree (SA), Agree (A), Undecided (U), Disagree (D) and Strongly Disagree (SD). It's Split-half and Test-retest reliability coefficients were 0.78 and 0.76 respectively. The content Validity of Value Clarification Scale was established.

PROCEDURE OF DATA COLLECTION:

The present study was experimental in nature. With the help of Random Sampling Technique researcher selected three B.Ed. Colleges from Indore City. The groups receiving the Treatment were called Experimental Groups while the third was Control Group. Experimental Group-I was treated through Value Discussion Model and Experimental Group-II was treated through Value Analysis Model. The third group continued with routine activities of the classroom and was called Control Group. All Groups were pre tested through standardized Value Clarification Scale. After pre testing of all the three groups, the experiment was started. Experimental Group-I was treated through Value Discussion Model.

In first phase of the concerned model dilemma was presented. After this in second phase students were asked to take their position about what action he or she thinks the central character should take. At third phase students were engaged in small group discussion about the reasoning used to justify the actions they recommended. In the same phase they were told to write reasons for their stand. In the fourth phase Class Discussion was conducted in which students gave reasons for the positions they had taken. The students of other sub groups of Experimental Group-I reacted to the positions taken up by the group. In this way all sub groups got opportunity to challenge the position taken by the other sub groups. In the final phase students were asked to write one most powerful reasons of their stand. Likewise 30 dilemmas were presented at the rate of one dilemma per working day. Experimental Group-II was treated through Value Analysis Model by using same 30 dilemmas as used for Experimental Group-I. In first phase of Value Analysis Model, dilemma was presented. After this students asked many probing questions related to central character. In second phase students identified conflict between two values. In the third phase, each student wrote about alternatives for central character in worksheet. In the fourth phase, each student wrote about possible Consequences of each alternative with long range and short range effect that influenced central charter and others. In the fifth phase, each student wrote and told about evidences to support the consequences occurring. In the sixth phase, each student evaluated the desirability of consequence and on the basis of Value Criteria, such as, Legal, Social and others. Each of these consequences was rated on a five point scale.

If the consequence was Undesirable then the rating was -2 and -1. If the consequence was Neutral the rating was Zero. If the consequence was desirable on the criterion, the rating was +2 and +1. On the basis of algebraic scores the

alternatives were ranked. In the seventh phase, each student selected the best alternative and gave strong reasons why this alternative was the best. In the model, 60 minutes were required to complete one dilemma. 30 dilemmas were presented in 30 working days. On the other hand the Control Group continued with routine activities of the College. At the end of experiment dependent variable of all the three groups were post tested with the help of same tool as used at the pretest stage. The scoring was done for all the standardized tools with the help of scoring key given in the respective manuals.

RESULT AND INTERPRETATION:

The objective is to compare adjusted mean scores of Value Clarification of Value Discussion Model, Value Analysis Model and Traditional Method Groups by considering Pre-Value Clarification as covariate. The data is analyzed with the help of One Way ANCOVA and the results are given in Table 1.

Table 1: Summary of One Way ANCOVA of Value Clarification by taking Pre-Value Clarification as covariate

Source of variance	df	SSy.x	MSSy.x	Fy.x	Remark
Treatment	2	10287.79	5143,90	30.89	p<0.01
Error	162	27333.01	168.72		
Total	166				

From Table 1 it is evident that the Adjusted F-Value is 30.89 which is significant at 0.01 level with df = 2/162. It shows that the adjusted mean scores of Value Clarification of Value Discussion Model, Value Analysis Model and Traditional Method Groups differ significantly when Pre-Value Clarification was taken as covariate. Thus the null hypothesis that there is no significant difference in adjusted mean scores of Value Clarification of Value Discussion Model, Value Analysis Model and Traditional Method Groups by considering Pre-Value Clarification as covariate is rejected. In order to know which groups' adjusted mean scores of Value Clarification differs significantly, the data were further analysed with the help of t-test and the results are given in Table 2.

Table 2: Treatment-wise comparison of adjusted mean scores of Value Clarification by considering Pre-Value Clarification as covariate

Groups	Adjusted Mean	SE	Value Analysis Model Group	Traditional Method Group
Value Discussion Model	178.10	1.72	2.27*	5.47**
Value Analysis Model	183.70	1.77		7.74**
Traditional Method Group	164.60	1.77		

*Significant at 0.05 level **Significant at 0.01 level

From Table 2 it is evident that the t-value for Value Discussion Model and Value Analysis Model Groups is 2.27 which is significant at 0.05 level with df= 110. It shows that the adjusted mean scores of Value Clarification of Value Discussion Model and Value Analysis Model Groups differ significantly. The Adjusted mean score of Value Clarification of Value Analysis Model Group is 183.70 which is significantly higher than that of Value Discussion Model Group whose adjusted mean score of Value Clarification is 178.10. It may, therefore, be said that Value Analysis Model was found to enhance Value Clarification significantly more than Value Discussion Model when Pre-Value Clarification was taken as covariate.

From Table 2 it is evident that the t-value for Value Discussion Model and Traditional Method Groups is 5.47 which is significant at 0.01 level with df= 107. It shows that the adjusted mean scores of Value Clarification of Value Discussion Model and Traditional Method Groups differ significantly. The Adjusted mean score of Value Clarification of Value Discussion Model Group is 178.10 which is significantly higher than that of Traditional Method Group whose adjusted mean score of Value Clarification is 164.60. It may, therefore, be said that Value Discussion Model was found to enhance Value Clarification significantly more than Traditional Method when Pre-Value Clarification was taken as covariate.

From Table 2 it is evident that the t-value for Value Analysis Model and Traditional Method Groups is 7.74 which is significant at 0.01 level with df= 109. It shows that the adjusted mean scores of Value Clarification of Value Analysis Model and Traditional Method Groups differ significantly. The Adjusted mean score of Value Clarification of Value Analysis Model Group is 183.70 which is significantly higher than that of Traditional Method Group whose adjusted mean score of Value Clarification is 164.60. It may, therefore, be said that Value Analysis Model was found to enhance Value Clarification significantly more than Traditional Method when Pre-Value Clarification was taken as covariate.

FINDINGS & DISCUSSION:

Value Analysis Model was found to enhance Value Clarification significantly more than Value Discussion Model as well as Traditional Method when Pre-Value Clarification was taken as covariate. Further Value Discussion Model was found to enhance Value Clarification significantly more than Traditional Method when Pre-Value Clarification was taken as covariat.

Above finding is supported by Singh (1989)[3]; Passi and Singh (1990)[4]; Devi (1993)[5]; and Sharma (1994) who reported that Value Analysis Model was found to be effective in improving different components of Value Clarification. Further Value Discussion Model was found to enhance Value Clarification significantly more than Traditional Method when Pre-Value Clarification was taken as covariate. This finding was supported by Singh (1991)[6] who reported that Value Discussion Model was found to be more effective in terms of Value Clarification. The researcher could not find any study where Value Analysis Model, Value Discussion Model and Traditional Method were compared on some criteria.

The Value Analysis Model was found to be more effective than Value Discussion Model and Traditional Method in developing Value Clarification ability. One of the reasons might be that there were seven phases of Value Analysis Model while in Value Discussion Model there were five phases. In phases of Value Analysis Model students got more opportunity for analyzing conflicting situations. Students identify conflicting situations and thought about alternatives and their consequences. For each consequence they write about the short and long range effect and evaluated each consequence on the basis of different value criteria and choose their best alternative. Value Analysis Model gave opportunity for analysis which was necessary for development of dimensions of Value Clarification. But in Value Discussion Model students only discussed and got a few opportunities for developing dimensions of Value Clarification in comparison to Value Analysis Model. This might be the reason that Value Analysis Model was found to enhance Value Clarification significantly more than Value Discussion Model.

In both Value Analysis Model and Value Discussion Model students were more active in comparison to Traditional Method. Most students in Traditional Method were passive. They did not get any opportunity to share their views regarding their Values. On the other hand students got enough opportunity to share their Values during Value Analysis Model and Value Discussion Model sessions. Also students were active during different phases of these Models. These might be the reason for the present finding.

❒

References :

1. *Joyce, B. and Weil, M.: Models of Teaching. Prentice Hall of India, New Jersey, 1973.*
2. *Passi, B.K. and Singh, P.: Value Education. National Psychological Corporation, Agra, 1991, pp. 12-36*
3. *Passi, B.K., Singh, L.C. and Sansanwal, D.N.: Effectiveness of Strategy Training in Models of Teaching: An Experimental Study. Indian Educational Review, 24 (1), 1988, pp. 36-58.*
4. *Passi, B.K. and Singh, P.: Effectiveness of Value Analysis Model in Developing Value Clarifying Competencies of Student Teachers. NCERT sponsored Research Project, School of Education, DAVV, Indore, 1990.*
5. *Devi, V.: Effectiveness of Value Analysis Model in developing Value Judgement of Secondary School Students. Ph.D. (Edu.), DAVV, 1993.*
6. *Supra Note 2*

Bibliography :

· *Anbarasu, M.: Value Orientation in English language Textbooks of Upper Primary Schools. Ph.D. (Edu.), Algappa University, Tamil Nadu, 1992.*

· *Barman, C.R.: The Influence of Value Clarification Techniques on Achievement, Attitudes and Affective Behaviour in High School Biology. Unpublished Doctoral Dissertation, University of Northern Colorado, 1974.*

· *Betof, E.H.: The Degree of Implementation of Value Clarification by Classroom Teachers following an Intensive Thirty Six hour workshop. Unpublished Doctoral Dissertation, Temple University, 1976.*

- *Bluckers, W., Glaser, B. and Kirschenbaum, H.: Value Clarification in Health Education. April-May, 1976.*
- *Covault, T.: The Application of Value Clarification Teaching Strategies with Fifth Grade Students to Investigate their Influence on Student's Self-Concept and Related Classroom Coping and Interacting Behaviours. Unpublished Doctoral Dissertation, Ohio State University, 1973.*
- *Curwin, R.: The Effect of Training in Value Clarification upon Twenty Eight Student Teachers and Pre Service Teachers of English. Unpublished Doctoral Dissertation, University of Massachusetts, 1972.*
- *Devi, V.: Effectiveness of Value Analysis Model in developing Value Judgement of Secondary School Students. Ph.D. (Edu.), DAVV, 1993.*
- *Guziak, S.J.: The use of Value Clarification Strategies with Fifth Grade Students to Investigate Influence on Self-Concept and Values. Unpublished Doctoral Dissertation, Ohio State University, 1974.*
- *Hobster, M.: The Effectiveness of Value Clarification Experience For Seventh Grade Students. Dissertation Abstract International, Vol. 41, NO. 7, 1980.*
- *Joglekar, S. and Kesarkar, M.: A Study of the Effectiveness of the Value Clarification Method of Developing Value Clarification ability of students. SCERT, Pune, Maharashtra, 1992.*
- *Passi, B.K. and Singh, P.: Effectiveness of Value Analysis Model in Developing Value Clarifying Competencies of Student Teachers. NCERT sponsored Research Project, School of Education, DAVV, Indore, 1990.*
- *Passi, B.K. and Singh, P.: Value Education. National Psychological Corporation, Agra, 1991, pp. 12-36.*
- *Passi, B.K., Singh, L.C. and Sansanwal, D.N.: Effectiveness of Strategy Training in Models of Teaching: An Experimental Study. Indian Educational Review, 24 (1), 1988, pp. 36-58.*

पूर्वदेवा– सामाजिक विज्ञान शोध पत्रिका
वर्ष 29, अंक, 116, जनवरी–मार्च, 2024 पृ. 172–182

UGC Care Listed Journal
ISSN 0974 -1100

Water Accessibility and Social Discrimination A Case Study of Kuldomari Village

Lalta Prasad
Research Scholar, G.B. Pant Social Science Institute,
(University of Allahabad), Jhunsi, Prayagraj
E-mail- laltaprasadindian@gmail.com Mob.- 9161391016

Abstract

The study of water comes under physical geography, and it impacts on human geography. Water is an essential element of human life. The role of drinking is very important in our life. Without drinking water, we cannot live. Water is a natural resource, but commercial man changed its naturality and accessibility mode. The distribution of the natural resources is unequal in the country /states and districts and village level. The unequal distribution of natural water resources created a water crisis and another hand social discrimination and exclusion are responsible for the water crisis also known as the human-made water crisis

Key Words – Water, Accessibility, social discrimination, agriculture, Caste

Introduction

The drinking water is available only 0.14 percent of their 4 percent of fresh water in the world (WHO). 2.2 billion peoples lack access to safely managed drinking water services (UNICEF 2019)[1]. Sustainable development goal number six of the UN is connected to water and sanitation. This goal ensures that till 2030 every one can access managed and safe drinking water. This goal has a motive that '***leave no one behind.***[2] It means want to make water accessible to all communities and countries. Basically, it will be focused on marginalized communities. 4.5 billion people have lack of safely managed sanitation services till 2015 across the World. Sanitation is a big issue across the world. 892 billion people have practiced for open defecation. Handwashing with soap and water for women and girls is recognized as a reducing diseases method in SDGs. Only, in India, the North and North East is groundwater-rich region while Western state and South Indian state shortage of groundwater resources due to geographical structure and location.

So, we can say that every state of India has no access to drinking water and other water equally. This disparity shows unequal sharing of water naturally. If we divide between rural and urban areas then we found that the urban population accesses much more groundwater and wastes water also. While rural areas population are using polluted water and untreated water from direct natural resources. It is unequal to access drinking water. An estimate has those 70 litres for urban and 40 litres for rural areas a person needs water for everyday utilization. Urban slums population are accessing polluted water. There is no pipeline water supply. So, we can divide it into the high-income urban population and the low-income urban population. There are disparities in to access managed safe drinking water. Our Indian society was divided into a caste based from the ancient period. According to Hindu mythology, the lower group of caste order means Shudra cannot access water directly from natural resources and other resources. Before the Indian Constitution, the law of Manu was implemented undeclared in Indian society. This law denies to access water for the Dalit directly from natural resources and other resources. It is caste-based discrimination. In the Indian Constitution article 21 give the right to live While the human being cannot live without water. It means this article gave us the right to access water equally for all activities. Any scheme related to water does not reach lower caste communities in society due to getting corruption. These schemes are dominated by Upper Caste. Where water supply system is available through like tanker, priority list rule followed by water supplier because dominant communities created an unauthorized system to use water much more (Dutta.2015).[3]

About Study Areas

Kuldomari village is part of Myorpur block which comes under Duddhi Tahsil of Sonbhadra district. It is located in the southwest of the district. It is surrounded by Pipari, Velwadah, Auri, Ranahor, Joginndra, and Belhathee gram panchayat.[4] Furthermore, it divided into some Hamlets and it is also divided into 15 Political wards. Its Geographical condition is hilly. In the village, 40 percentage the land is plain, and 60 percent is hill region. The Lanco Power Plant and Anpara Thermal Power Plant A, B, C, and D Units are located near Dibulganj.[5] The Daily wages-based labourers come to work in the town area to travel 10 to 15 km daily and part times work on their own land for agriculture activities. In the village, the water resources are handpumps, wells, rivers, ponds, dams, check-dam, self-boring, and Bawlees.

Research Methodology

This study depends on two sources 1. Primary sources and 2. Secondary sources. Secondary sources include books, articles, documents, reports, etc. Primary sources are generated from field studies. The Field study conducted in Sonbhadra district at kuldomari villages which is based on the Dalit majority population. The households interviewed were done through total 40 purposive samples from village. Sample selection process is random.

Objectives

· Explore water accessibility Pattern and the social discrimination

Analysis

Now, here I am describing details of the Kuldomari village. This description is based on the field works of the village. This information generated primary Data from our research field.

On the development of society, Dr. B.R. Ambedkar says that A society will be considered as developed when the condition of women of that society is good. The challenges of Dalits women are triple, the first challenge is being a woman, the second is being poor, and the third is being a Dalits woman. The last challenge to being Dalits women is much more burden because domestic work is done by women mostly and water issues are firstly faced by women. So, Dalits women are much more discriminated against by Upper Caste males and females. Another question raised who discriminated more males or females against this question answer came that females of Upper Caste discriminated firstly during water fetching time.

Barohiya tola is part of Kuldomari village in the Sonbhadra District. Its location is East of Badhara tola. Its location is in the middle part of the forest. While village land is plain but surrounded by forest and hill. In this tola caste composition is mixed type in which Sub Caste are Baiswar, Dhobi, Kharwar, Agaria, and Nai caste. The Nai belongs to Upper Caste. These communities' mentality is the same as Brahminical ideology. These communities follow to Brahminical concept of discrimination against to lower caste. Here, the available source of drinking water is well much more. Accessibility of water is polluted in all communities so; waterborne disease is affected to all communities. The waterborne diseases are Diariah, Cholera Malaria, etc. Especially, Dalits communities are much more affected in the village from waterborne diseases. *I asked to Manmohan about discrimination during the dead body ceremony to all Communities in the village but one thing is that the exact location of the dead body burning point is not used by all caste on the bank of the river because they (Villagers) differentiate from each other caste. It is an indication of soft discrimination. Normally, caste discrimination during ceremony activities is seeing some areas in the present time which means it was a universal problem and has in the present time also.*[6]

Here, village history or experiences related to drinking water are the same as another helmet. *One respondent Prahalad shared their experience related to water and said before 25 years were not drinking water resources to each household. In the village was one well of Laxaman Prasad to fetching water for villagers but every caste time fixed to fetching drinking water to well and to fetch drinking water was separate bucket and chord to each Caste but at present time resources to access water for drinking and irrigation, but not seeing discrimination deeply but the mentality of Upper Caste did not change.*[7]

Pie Chart 1.2

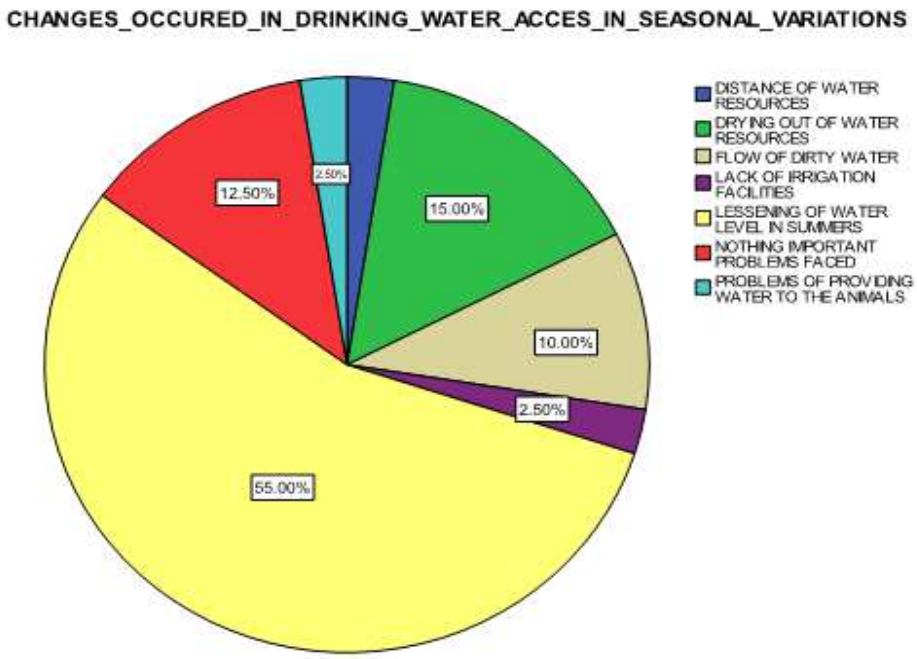

According to Tulaman, in the summer vacation 55 percent of groundwater decreased and 15 percent of seasonal water bodies dry in the village then problems were created for the pet animal and humans to drink water. According to pie chart 1.2, fifty-five percent of respondents told that during the summer vacation, groundwater decrease so, the drinking water crisis is for human and animals. It has two solutions, one to give water for the animal from the hand pump and well and, the second option is going too far to drunk water for the pet animal from rivers and check dams. It is the real water crisis. And if the water crisis comes for drinking water in the summer vacation for humans, the supply of water through the tractor tanker in the village, but during water supply Caste discrimination can see. Here is no treated water supply by any local authorities or government through the pipeline. If the tractor tanker comes to the water supply in the village, then gave priority to Upper Caste households. It is soft discrimination to marginalized societies related to Dalits Communities for drinking water. If an irrigation issue comes it also creates a water crisis. It is a natural water crisis and a human-made water crisis also. Who are marginalized groups not access to proper irrigation from the river and Bawlee and other methods.

Table -1. Does Upper Caste Access More Water than Dalits

	Frequency	Percent	Valid Percent	Cumulative Percent
Yes, They have more land than Dalits and hence has access to much water in irrigation	16	40.0	40.0	40.0
No, Such instances are not found	8	20.0	20.0	60.0
Don't know	16	40.0	40.0	100.0
Total	40	100.0	100.0	

Upper Caste households carry large land sizes and so, they have more need of water for irrigation and these communities have updated to take government schemes in the village (Table1). So, this creates disparities through corruption and involvement of Upper Caste employees in the water supply system. The involvement of Upper Caste employees is one factor to creates a human-made water crisis.

The Lojhara hamlet is part of the kuldomari Gram panchayat. Its location is the western part of Gram panchayat. water bodies are rivers, ponds, wells, hand pumps, check dams, and Bawlee in the ward. The important matter is rivers continuously flow perennially. Which are households and land attached are near to river accessible to water from the river for irrigation in the village. Here is no discrimination to access river water but accessibility depends on land capacity and the source of irrigation are accessible to all communities but Bawalee and check dam construction is polarized near the mainstream households. It is part of minor level discrimination in context to the polarization of man-made water bodies. The drinking water resources have to all communities but quality and quantity are different.

The resources of drinking water included wells, government handpumps, check dams, and rivers. I talk about the quality of drinking water answer comes that those families fetch drinking water from rivers and dams. it is a concerning issue, and it is confirmed that those families belong to Dalits communities and Maha Dalit communities. Here, Maha Dalit means Trible communities. I read about social hierarchy, it works among general categories, OBCs, SCs, and STs. The Upper Caste community discriminate against Dalits or their below social communities but here is the social hierarchy is between Scheduled Caste and Scheduled Tribes and other hands in the Dalits communities comes 66 castes according to census 2011 but in the village have not 66 castes live but have near about 10 Sub-Caste of Scheduled Caste. I want to share that the Baiswar Caste thinks that we are superior to Dhobi and Chamar and Dhobi thinks that we are superior to the Chamar caste. Even to Schedule Tribe also think that we are superior to Chamar Caste while the tribal community accepted that Dhobi and Baiswar Caste is superior to me. Not even tribal communities have a social hierarchy also, for example, Kharawar communities consider self-superior to the Panika caste while both Tribes belong to tribal communities and other Caste understood self-status comparison to other and

lower caste and follow their status rule in the society like Brahminical ideology. Here, the problems of untouchability have in the same social category. The Dhobi does not access water or other items to eat or drink. If, touched by chamar. While the same problems are seen in Trible groups, kharawar thinks that I am superior to panika while both belong to Schedule tribe.

Once time, Sanjay a tractor driver who belongs to the chamar caste share their experiences with me and told me that one day I was ploughing the land of kharawar caste and when I go to take money after ploughing land and sat on the bedstead then objected to me for sit on the bedstead. Then, they gave to me pressure to stand up at least I stand up. It is part of discrimination because kharwar caste thanks that I was superior to the chamar caste. Here, the landowner, was kharwar who belong to Scheduled Tribes and Sanjay belong to Schedule Caste.[8]

Above-mentioned experience of Sanjay looking at me all over the Gram Panchayat. When I try to find the problem of solution on matter emerged but find that lack of education is the main issue because new generation of youth who are educated avoid this type of discrimination while the basic problem is looking that living and thinking status of villager based on the traditional format.

Further, I ask to Mithai Gautam about the discrimination issue then reply that "pahle chandubahra ke pandit chamar jaati ke logon ko pareshan karte rahen lekin ab Na karat Hain". (10 years before Pandit of Chandubahra discriminated against chamar Caste but not now.)[9].

The Mudisemar, Karhia, and Mamuaar are outside halmet from Dibulganj town areas but are closely attached to Dibulganj. In the Mamuaar helmet, living standards, and lifestyle are properly based on nature. It is located in the middle of the hill series. Its area is 2 km square near about. Here, Dalits communities lived specially Chamar Caste and other castes have two households that belong to kharwar caste. Here, the types of Discrimination are Different which work between chamar caste and kharwar caste. The kharwar caste understood superior comparison to chamar caste. The resources of drinking water are private wells, government handpumps, and river, and the resources of irrigation are rivers those flows annually. Here, discrimination looks at domestic programs like marriage and childbirth programs at home. Both castes do not access the food together in the Mudisemar and another part of kuldomari village. The accessibility of food and drinking water together at a marriage party at home is the same problem in the other part of Kuldomari Gram Panchayat and all over the district Sonbhadra. *Ganesh bharti says that in the Mamuaur basti 95% of households belong to the chamar caste and in the other caste have Sharma, pandit, and other and Bharti again told that resources of drinking water to each other household have self-boring, self-wells, and government handpump, etc.* The population of the town may be educated in the village. In the village resources of irrigation are self Bawalee, well, and river which have no self-resources properly dependent on the river and who have not able to access irrigation dependent on monsoon rainfall.

Benadah is a halmet of Kuldomari Gram Panchayat. It is located Eastern part of Kuldomari Gram Panchayat. Its location looks like nature gifted. To connect the rural part of Gram Panchayat from the urban areas of Gram Panchayat have two roads. The natural properties of the helmet are hills, rivers, and other natural bodies and other human-made water resources like government hand pump private wells and government wells, dams, and check dams. In the village, the resources of drinking water are wells and hand pumps, and rivers. The dependency of the village has on the government hand pump for drinking water. If the hand pump does not work then villagers depended on the river which is a 1 kilo meter distance almost from the household while groundwater is already polluted due to rocks and other reasons but villagers depended on polluted water to live. The quality of drinking water is a concerning issue in the village. To see this problem, the government is trying to the water supply through the pipeline. The government also started work. On the basis of JJM goals, the project of UP Jal Nigam is working which the completion year is 2024. The motive of PM " ***Har Ghar Me Nal Se Jal***".[10]

In the village, the caste composition is chamar, Kharwar, Baiga, and Others. I asked the question to Tilak Dhari, a residence of the village about her experience 25 years before from today, told me that when was not a hand pump in the village then villagers go to fetch drinking water from the river which is 1 kilometer from the household and its water was polluted but due to no other option to fetch drinking water so fetched polluted water from the river and at the present time when handpumps defective villages go to the river to take drinking water. Fifty percent of respondent says that 25 years before access water for drinking water from the river which distance was 1 km to 2 km. on the basis of this data point out that Dalits Households access this mode of water. According to distance water crisis is categorized on the basis of National and International levels norms on water fetching distance.

Turipan is a Hamlet of Kuldomari Village in Sonbhadra district which distance is 25 kilometers from Dibulganjganj. It is located middle part of Kuldomari Gram Panchayat and attached to other halmets to Turipan are Khajura, Chandubara, and Biranbhara. Here, Dalits households are polarized in one place compared to other helmets. Projection of Dalits household at one place based on genuine reason. So, the possibility of discrimination is low but the Dalits go to fetch drinking water to other caste waterbodies, and then untouchable issues are seen. The local population is the chamar caste. The source of water is wells and hand pumps, and dams. The sources of drinking water are well and hand pumps and for irrigation is the dam which distance is one kilometer from households. It is the accessibility to all communities. This dam is located in the Gram Panchayat. So, this Dam has the right to all local households to access water for irrigation. But Upper Caste population no want that marginalized communities access to water for irrigation without their permission. Dr B.R Ambedkar struggle to access water from the pond to marginalized communities known as Mahad Satyagrah in1927. In Indian History it first water access movement for Dalits communities.[11] *The accessibility of drinking water*

during MGNREGA works in the village looks discriminated during drink water because Kharwar caste understands Superior to other caste and does not drink water which touched by the chamar Caste and the pots of drinking water at the working palace are separate. The above statement says Devisharan.[12] Like above statement, some problems looked other parts of the village, so this type of problem is a major issue and again said about dead body ceremony that for dead body burn all villagers go to the bank of river or outside of the village and lack of special place for ceremonial work which is available accessible for all communities, so we can say that here is not looking discrimination during dead body ceremonial works but have in a hidden form which no seen able to all.

A respondent ,Matukdhari talked about caste discrimination that 20 years before in the village Thakur caste was dominant and see to the Dalits as untouchable. The Upper Caste does not invite at home. The 40 present respondent says that Upper Caste access all facility of water due to economically, socially, and politically strong. They do not understand equally to marginalized communities. **(Pie Chart 1.4).**

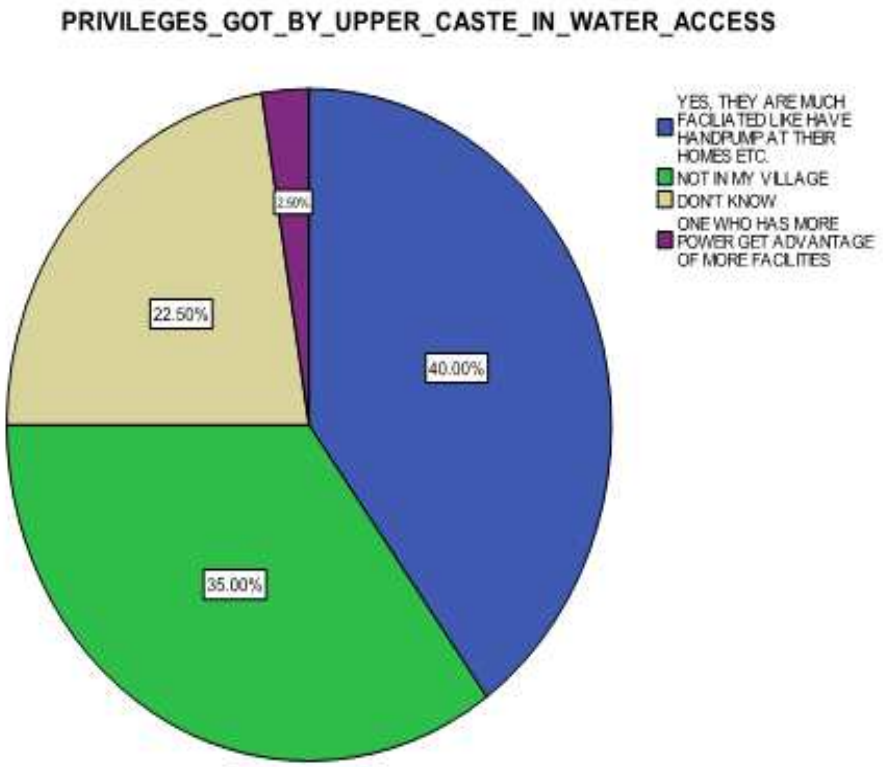

When Dalits go to take water from Thakur's wells, they follow to social hierarchy during water fetch. In the social hierarchy means don't touch the hand pump, well and when Upper Caste accessing water, if Dalits touch the hand pumps and wells then before accessing water by Upper Caste the hand pump handle, well bucket, and cord washed.

Khajura halmet is part of kuldomari village where I take interviews and do fieldwork during the Corona pandemic. That time was the lockdown and to follow strictly lockdown and social distancing rule but I do my fieldwork in a critical situation so some respondents are avoiding to give an interview but according to our destination, I take interview compromising with the respondent. The land use pattern of Khajura is agriculture-based and social forestry in the village somewhere looking but not a commercial purpose but domestic use only. If we talk about groundwater recharge and irrigation purposes, looked at a pond in the village which is controlled by Gram Panchayat and local residents in Panchayat. It is created on the land of Ramdulare Ramadhar, Dhiraj and Raghunath in 1997. It is accessible to all communities. The surrounding the ponds of the local caste of residence are Chamar, Verma (Upper Caste), and Kharwar. Due to public properties and if administration by Gram Panchayat it may be a big income source for the panchayat through to giving lease to the public or contractors for commercial use like fishing and other water-related activities. It is the source of irrigation for the village and the source of drinking water during summer vacation or other critical situations. In the village, the resources of drinking water are personal wells, government hand pumps, and government wells. The discrimination related to water, access of water bodies drinking water context Schedule Caste peoples do not access water and food from other backward classes because backward think that SCs are the inferior to me and another matter is that within the Schedule Caste have various sub-caste. Here, the discrimination is looking at working palace during drinking water access. Here, Chamar caste people cannot access drinking water from other caste pots and buckets and other things also. So, for the Chamar caste will be special pots for drinking water and carrying drinking water at working place in village or outside also. Other categories are carrying drinking water. It is the reason. Chamar caste does not deny accept water from other castes drinking water from pots. If, these castes want to give to the chamar caste to access drinking water from the pots and then the chamar caste access drinking water from pots of OBCs and other Caste pots. Vijay told that 10 years before, we are accepting water from the Dam which was polluted due to polluted water we are accessing the water, the waterborne disease becomes which especially affects much more to Dalits communities' comparison to Upper Caste household and at present time in the summer vacation, wells and handpumps dried then the residents of the hamlet to committed to access drinking water from the dam which is polluted. Thus, water-related problems like irrigation and untreated water supply, social exclusions and social discrimination are looking all over the gram panchayat.

Conclusion

The society of kuldomari village is traditional and primary activities based. So, the dependency on the natural bodies have much more but those years disorder of monsoon impact on rainfall in which groundwater level decreases and quality of drinking water affected also because when the volume of water decreases then the density of water increases in which the contamination of elements of drinking water increase from normal norms of potable water. The establishment of industrial units like ATP-A, B, C and D units[13] and Lanco thermal power plant are no better management of waste material of plants. So, the groundwater polluted surrounding areas of plants. Due to groundwater pollution, all communities are affected but Dalits communities are affected much more compare to others. Table Number 1 tells us about discrimination in the village. According to this table, 40 percent of respondents said that the accessibility of drinking water is too much for the Upper Caste which indicates caste discrimination. The Social hierarchy according to VarnVavastha, Brahman, chhatri, Vaishya, and Shudra but here which are belonging to the same group also discriminate against each other while we also talked about social categories like General, OBCs, SCs, and STs Because this discrimination is looking as well as Varnbewstha. The treated drinking water supply facilities have no in the village. The marginalized community has low accessibility of water service followed by other communities. The discrimination has been based on water access, road construction in Dalits Basti, and others activities also. The health facilities are not easily accessible to Dalits communities in the villages. Within the same category, the social hierarchy is also seen. All communities suffer from Waterborne diseases like fluorosis, Teeth mottling along with also other mentioned issues.

❒

References :

1. *https://www.unwater.org/water-facts/water-sanitation-and-hygiene/*
2. *UN SDGs 2030, target 6.1.*
3. *Swarup Dutta, et al., (2015). "Access to drinking water by schedule caste in rural India: some key and challenges", Indian Journal of Human Development, Vol 9, PP 115-132.*
4. *http://www.onefivenine.com/india/villages/Sonbhadra/Myorpur/Kuldomari, Date 17/12/2021 at 3:28 pm.*
5. *https://sonbhadra.nic.in/about-district/ on 17/12/2021*
6. *Interview with Manmohan on 6 July 2020.*
7. *Interview with Prahalad on 6 July 2020.*
8. *Interview with Sanjay Kumar on 10 July 2020.*
9. *Interview with Mithai Gautam at Birnbahara on 4 July 2020*
10. *https://nvshq.org/scheme/jal-jeevan-mission-ab-har-ghar-nal-se-jal/ date 17/12/2021*
11. *Ambedkar, Dr. B.R. (1936): "Annihilation of caste" (speech prepared), Jat Pat Todak Mandal of Lahore.*
12. *Interview with Devisharn Bharti on July 3,2020.*
13. *https://upenergy.in/uprvunl/en/post/anpara-thermal-power-station https://upenergy.in/uprvunl/en/post/anpara-thermal-power-st*

Bibliography

- *Abraham, P. (2002). "Notes on Ambedkar's Water Resources Policies," Economic and Political Weekly, Vol. 37, No. 48, PP 4772-4774.*
- *Ambedkar, Dr. B.R. (1936). "Annihilation of caste" (speech prepared), Jat Pat Todak Mandal of Lahore.*
- *Athavale, R. N., (2010)."Water Harvesting and Sustainable Supply in India", Rawat Publication, Jaipur. PP 11-12.*
- *Bandyopadhyay, Jayanta., (2009). "Water, Ecosystem, and Society" Sage Publications, New Delhi.*
- *Bansal, P. C., (2004). "Water Management in India" Concept Publishing Company, New Delhi, PP 79-82.*
- *Barai, D.C., Naganna, (1978). "Criteria for Delimiting Drought Prone Area: A Case Study of Karnataka" Report of Symposium on drought-prone area, Tirupati. PP- 14-19.*
- *Beg Mubeen et.al., (2013). "Role of Society and Government in the Sustainable Development of Water Resources of Hathras City: A Case Study" International Journal of Environmental Science: Development and Monitoring (IJESDM), Volume 4 No. 3.*
- *Beuro of India Standards Amendments June 2015 on drinking water.*
- *Bhargava, D.S., (1977). "Water Quality in Three Typical River in UP Ganga, Yamuna and Kali Ph.D. a thesis submitted to IIT Kanpur 24.*
- *Bharti, Deepak (2003). "Dalit Water Rights and Social Justice." Paper presented at Asia Social Forum, Hyderabad, January 4-5.*
- *Bharwada, Charul., Mahajan, Vinay (2002). "Drinking water crisis in Kutch a Natural Phenomenon," Economic and Political Weekly, November 30, PP 4859- 4866.*
- *Bhati, V., (2003). "India Water Resources, Planning, and Management," Universal Scientific Publishers Jaipur, Jaipur, PP 23-24.*
- *Borloi, B., Elai S. B., (2010): "Water Security in India" Yojana Vol 54.*
- *Brammer, Hugh (2008). "Treat of the Arsenic to Agriculture in India, Bangladesh, and Nepal," Economic and Political Weekly, Vol. 43, No. 47, PP 79-84.*
- *Chahnon, S.K., (2000). "Seasonal Variation in Ground Water Quality of Agra City" Indian Journal Environmental Prot Varanasi, Vol. 42, PP 59-69.*
- *Chandra, K., Panwar, R.S., Singh, D.N. (1985). "Possible Pollution Problems from the waste of thermal power plants in India- A case study of Rihand Reservoir, Mirzapur," proceedings of the Symposium on environmental pollution, PP 283-294.*
- *Chaturvedi, M.C., (1992). "Water Resources Systems Planning and Management", Tata McGraw Hill Publishing Co. Ltd., India.*
- *Chaurasia, S., Mishra, S.K., (2007). "Fluoride Contamination in Rainwater of Singrauli Region." India J. Environ.Prat., 27(10), PP 923-926.*
- *Chhonkar, P.K., Dutta, S.P., Joshi, H.C., Pathak, H., (2000). "Impact of Industrial Effluent on Soil Health and Agriculture India Experience, Part Second Tannery and Textile Industrial Effluents," Journal Scientific Indus. Res. India, Vol. 59, PP 446-454.*
- *Cleic K.P.H., (1993). 'Water in crisis: a guide to the World's freshwater resources' Oxford University Press, Oxford,03.*
- *Cook, J., (1977). "Environmental Pollution by Heavy Metal Int." Journal Environmental Studies, Vol. 10, PP 253-256.*
- *Cullet Philippe, (2012 January- March). "Rethinking the Right to Water to Ensure its Realisation for All", Journal of Indian Law Institute, Vol.54, No. 1, PP.27.*
- *Das Gupta, S.P., (1975). "The Upper Gangetic Flood Plain: A regional Survey Calcutta.*
- *Dr. Pawankumar, (2014). "Water Resource and Agriculture" Discovery Publishing House Pvt. Ltd. New Delhi, PP 05.*
- *Dutta, K.L., Wasson, R.J., (2013). "Water First" Sage Publications, New Delhi. PP 105-110.*

पूर्वदेवा– *सामाजिक विज्ञान शोध पत्रिका*
वर्ष 29, अंक, 116, जनवरी–मार्च, 2024 पृ. 183–189

UGC Care Listed Journal
ISSN 0974 -1100

Gandhi, Gandhism and India's Soft Power Diplomacy

Divyapani Dwivedi
Research Scholar, Department of Political Science,
Banaras Hindu University, Varanasi - 221005
Email- divyapanidwivedi.dp47@gmail.com Mob. +91 9651391904

Abstract

Foreign policy is a tool to pursue the national interests of a country. In pursuit of foreign policy, a state primarily uses two kind of powers: hard power and soft power. Soft power came into highlight with the writing of book by Joseph Nye in 1990. Although the concept of soft power was originally about USA's foreign policy and its application of means other than force and coercion to achieve its national interests, soft power is today used in the all regions and countries including India. Indian soft power dates back several thousand years.

Indian art and culture, religion, philosophy, Indian cuisine and other elements of India including its old civilization have prominent role in flourishing India's soft power from ancient times. It was India's soft power that attracted not just intellectuals but also common people from around the world to India. Mahatma Gandhi used non-violence and satyagrah as means to fight against British imperialism. Gandhi fought against racism, tyranny, oppression and colonialism through his mantra of peace, truth and satyagrah. His views and thoughts became voice to millions of people in the different parts of the world in the coming decades. Nelson Mandela in South Africa, Martin Luther King Jr. in USA were two major leaders of 20th century who used Gandhism in direct or indirect ways to fight against injustice.

Gandhism shows a path to those human beings who are fighting against racism, inequality, oppression, injustice and violence. Gandhi and his views, altogether form Gandhism; Gandhism is the path of Gandhi which calls for peace, justice and harmony in the world. Gandhism advocates that the world can be a better place if truth, non-violence and satyagrah are adopted by those who are asking for justice and peace in the world. Gandhi and Gandhism pave a way for India to showcase, establish and expand India's soft power

and people to people connect. This paper aims to showcase scope and application of Gandhi and Gandhism in India's quest to expand its soft power.

Keywords: Gandhi; Gandhism; Soft Power; Non-violence; Peace

Introduction

In 21st century world, every country in the world is trying to strengthen its economic and military might to emerge as powerful leader in this multi-polar world order. A major power is that which not only has ability to wage war when its national interests are under threat but also its ability to bring peace in the world when time comes. Today's nuclear-powered world believes more in dialogue and discussion than waging a war to resolve disputes in different arenas. Dialogue and discussion lead countries to influence others and this is where concept of soft power emerges. India in its pursuit of national interest much similar to other major powers invest a lot of its ideology and resources. Gandhi was believer of truth and non-violence, he never advocated fighting with violent means, not even when other person is waging violence on you; he believed in change of heart through means of satyagrah. Gandhism or way of Gandhi, whatever we call it, shows world India and entire world a path to not only resolve disputes and conflicts but also emerges as a major instrument to pursue soft power diplomacy.

What is Soft Power?

The concept of soft power was developed by American Political Scientist Joseph Nye in 1990 in order to explain the dominance of United States. Power is the ability to alter the behaviour of others to get what one wants. Joseph Nye (1990) in his book *Bound to Lead: The Changing Nature of American Power* identified three dimensions of power: coercion by military force (hard power); influence by offering economic incentives and attraction (soft power). Nye's concept of 'soft power' was primarily concerned with safeguarding American interests through expansion of American culture and American life-style. Nye argues that soft power is something which rests on the ability to shape the preferences of others.[1] He defined soft power as attractive power, that is 'getting others to want the outcomes that you want' mainly by a strategy of co-optation rather than coercion (Nye, 2004, p. 6-7).[2] Nye identified three main resources of a country's soft power: culture, its political values and its foreign policy' (Nye, 2004, p. 11).[3] Culture is something which is used to attract people from other countries, political values showcase a country's ability to live up to people in the country and abroad and foreign policy denotes their position as legitimate and moral authority.

Looking at India's Soft Power

India is one of the world's oldest civilization and its cultural and civilizational roots dates back to several thousand years. The world has always been attracted to India and its ancient culture. When we talk about India's soft power, the most important element is India's history, culture and civilization. These factors have attracted intellectuals and common folks across the globe to India since the long time. Indian beauty lies in having all major religions of world helps India to be seen

as the land of knowledge and philosophy of peace and tranquility. Hinduism, Buddhism, Jainism and Sikhism have emerged from this land only and these peaceful religions have millions of follower in the other parts of the world. These indigenous religions have been playing a very prominent and pivotal role in India's soft power diplomacy. Buddhism particularly has been an instrument in expansion of India's soft power in Asia and that too in South-East Asian countries particularly. Apart from that, many South-East Asian countries like Indonesia, Cambodia, Thailand etc. have had great ancient Hinduism connections. To this day, the kings of Thailand are only crowned in the presence of Brahmin priests. The Muslims of Java still sport Sanskritic names despite their conversion to Islam.[4] Indonesia's national airlines is called 'Garuda Airlines' and apart from this, Ramleela is still performed in several South-East Asian counties, where Shree Ram and his life is performed and expressed which talks of goodwill, harmony, truth and justice.

Indian cinema has been a major source of India's soft power in the entire world. From Asian subcontinent to Europe and from Africa to America craze of Bollywood is everywhere. People from different parts of the world are big fan of Bollywood actor, actress, movie songs and movies. Indian music adds more charm in it. Although, Indian music can not be restricted to Indian cinema only. India has had a long and very rich heritage of music. Indian classical music has been a major source of attraction for so many western people. Indian dance and art have been prominent source of attraction too. Indian philosophy is something which has been widely accepted and pursued in the entire world. As we know, India is a land of knowledge, India was a 'vishwa-guru' in the entire world in the ancient time; it was a land of glory and wisdom. Its heritage of being centre of different philosophies has been playing a very major role in other parts of the world. Indian land belongs to Adi Shankara, Ramanuja and Madhvacharya etc. in ancient times to Mahatma Gandhi, Swami Vivekanand and Sri Aurobindo in modern times, it has a long history of producing and nurturing so many great philosophers. Two thousand years ago, Greek diplomat and historian Megasthenes visited Mauryan King Chandragupta's court and he wrote a very famous book on India, titled "Indica". Chinese Scholar and Buddhist monk Hiuen Tsang visited India in 7th Century AD and studied at the famed knowledge centre Nalanda for several years. He went to several other places in India. When he went back to China, he brought several Sanskrit texts which he translated into his own language with himself to China. India's history is full of so many such scholars visiting India to get themselves enlightened through studies of 'Bhartiya darshan' and through practice of yoga and meditation to find themselves in real sense. Indian cuisine has been very famous in the world too.

Now coming to aspect of political values, India has been one of the oldest democracy in the world. Ever since India got independence from British imperialism in 1947, it has come a long way to deliver its citizen truly rich democratic practices. India has played crucial role in development of democratic values in South Asian countries, particularly in Bangladesh, Nepal and Bhutan. The Delhi Agreement of

1951 was one of India's earliest interventions to settle internal disputes with its neighbours. But India failed to stop restoration of monarchical rule in Nepal. But in later years, Nepal has again tuned itself towards democratic process and India has been proactive in it that is taking place in Nepal. Bangladesh is another case where India helped to establish a democratic system.[5] India has elevated the living of its citizens and remarkably has been successful to a larger extent in eliminating extreme poverty and problem of hunger in poor section of society. India has been emerging as one the fastest growing world economy of the world and has become a prominent emerging global power. It has been playing important role in world's emerging issues including climate change and terrorism. India has been engaging with Overseas Indians from a long time now. NRIs are emerging as key role player in different countries particularly in European countries and USA.

The last aspect of any country's soft power is its foreign policy. Indian foreign policy has been quite attractive to others. India has always believed in humanity, peace and justice. India's approach towards anti-racism has been quite accepted and praised by several nations in Africa and other parts of the world. India from very beginning supported the cause of nuclear disarmament and a world free of nuclear weapons. India during Nehruvian period advocated decolonization of counties in Africa and other parts of the world. India foreign policy has always advocated for peaceful resolution of disputes. Indian foreign policy's emphasis has been up on peaceful co-existence and harmony in the world. India has never attacked any country so far and neither it aims at doing so. India's nuclear doctrine clearly states that India would never attack any non-nuclear country with nuclear weapons, at the same time, in reference to use of nuclear weapons, it states that it would only be using nuclear weapons if it is attacked with nuclear weapons by any nuclear-powered country first.[6] Peace and development in the world is Indian foreign policy's ultimate response to conflict in the world. India has always raised its voice towards inhumanity and injustice, it has condemned any attempt to establish instability and violence in any part of the world. Terrorism and climate issues are crippling the world in today's time, India has condemned terrorism in every form and during any dialogue, discussion or talk with any major power and at all the global forum.

Gandhi, Gandhism and India's Soft Power Diplomacy

Gandhi and his life has been an ideology in itself without any exaggeration. Gandhian means of protest, non-violence, satyagrah, civil disobedience and non-cooperation were ways adopted and practiced in fight against British imperialism in colonial India. Gandhian ways of passive resistance established a new methodology to fight against injustice and suffering. Gandhi believed in welfare and development of all mankind and it is only possible in the atmosphere of non-violence. Gandhi strongly believed that any approach to world peace should be holistic and form part of an entire philosophy or way of life. For Gandhi, rational discussion and persuasion were the best way to resolve conflict.[7] This has been the reason that he advocated practicing satyagrah while asking for justice to those involved in unjust practises.

Satyagrah to Gandhi was an instrument which brings change in hearts and minds of oppressors. Satyagrah was a means which eventually forced unjust person or institution to adopt just measures. Gandhi passionately believed in non-violence and his entire philosophy is based on this core element. Gandhi was against any sort of racism in the world, while his long stay in South Africa, he fought against white supremacy of South African rulers.

Gandhism has been very effective in the pursuit of India's soft power. Gandhism has elevated India's stature in world in terms of moral standing when it comes to India's position on various global conflicts. Being highly influenced with Gandhian approaches, India has always advocated peaceful resolution of conflicts or any sort of dispute between two countries in the world.[8] India has called for restructuring of United Nations and United Nations Security Council for the very same reason.[9] India believes that by bringing changes in UN and UNSC, they can accommodate those emerging powers who are playing pivotal role in peace-making and peace-building in the different parts of the world. India claims that it advocates changes in UNSC because it has always advocated for peace and tranquility. Gandhism has been one of major element which gives weight to India's legitimate claims in United Nations and other global forums. Gandhian satyagrah can be used to resolve conflicts in the world. India's stand on different issues of global peace has been to resolve conflict through mutual dialogue and discussion. After 9/11 took place in USA, the whole world including USA started taking terrorism seriously very first time but it was India which always called for action on those countries and individuals who support and harbor terrorists and terrorists organizations.[10] Iraq War, conflict in Middle-East and African countries have been prominent examples of violence and inhumanity in last few decades in the world; Gandhism has always advocated abolition of violence and choosing peaceful means, so following Gandhi and his ways of peace-making India chose not to send its armed forces to Iraq during Iraq war even though US requested for the same.[11]

Mahatma Gandhi once said, "My experience in non-violence daily growing stronger and richer tells me that there is no peace for individuals or for nations without practicing truth and non-violence to the uttermost extent possible for men. The policy of retaliation, has never succeeded."[12] This Gandhian thought is highly relevant for all those people of different creed, race, ethnicity and region of the world who are fighting against violence, injustice and discrimination in the different parts of the world. Gandhism opposes any sort of racism in the world against any person or country. India's stand against racism is visible with this statement by MoS, External Affairs, Government of India in '**World Conference Against Racism, Racial Discrimination, Xenophobia and Related Intolerance' in Durban, South Africa in 2001, it states that,** "It is here in South Africa, indeed in this very city of Durban, that Mahatma Gandhi launched the Satyagraha movement-struggle based on truth- against the racist regime in South Africa. In 1946, India was the first country to raise its voice against apartheid at the United Nations. We have

always regarded racism and racial discrimination as the anti-thesis of everything humanity stands for: equality, justice, peace and progress."[13]

Gandhism regards any form of injustice against very human morality. Injustice done to anybody anywhere is against humanity, Gandhi believed so. Gandhi was role model for Nelson Mandela, Martin Luther King Jr. and Lech Wallesa. India's soft power is reflected very much in its resolve in following Gandhism as one of core principle while addressing human suffering and oppression in its foreign policy. Gandhism has been a very important element in connecting India with people from third world, oppressed ones, people facing racial subjugation and violence from those who are mighty ones in the different parts of the world. Gandhi and Gandhism gives them vision and a means to fight their opponent peacefully following 'satyagrah' and 'non-violence'.

Gandhism as A Means to World Peace and Harmony

Entire world is going through rough phase of violence and conflict today and almost all the regions of the world are affected by some sort of conflict and instability. During such times, Gandhism shows the world a path to resolve disputes, dissolve violence and maintain peace, stability and harmony by adopting truth, non-violence and satyagrah. India needs to make use of gandhi and his social, political and economic philosophy at the different global forums including United Nations. Gandhian approach to resolution of conflict is already being debated in the field of academia, it is the high time for Indian policy makers to use it as a tool for diplomacy while addressing different global peace challenges and conflicts. Apart from that, violence is always connected to the people on the ground directly, so while advocating non-violence and resolution of disputes, gandhian principles and philosophy can be advocated for people-to-people connect. These measures for establishment of peace and resolution of conflict in the world significantly boost India's soft power in the world.

Conclusion

Gandhi's lifelong struggle towards a peaceful and harmonious society enables India to use Gandhi and Gandhism as instruments of promoting and expanding India's soft power abroad. In today's times, when all the major and great powers are busy in formulating and executing road maps to use soft power diplomacy effectively, India needs to look back to its history and properly utilize Gandhi since all the major and great powers of the world are looking beyond hard power and emphasizing on soft power too. Although it is true that there is no substitute to hard power in realpolitik, soft power gives space to engage in diplomacy in easy and better conditions.

It is correct to point out that India has not properly used its soft power potentials. From its old cultural traditions and civilization to its ancient philosophy and thoughts of great human beings who taught the world how to live with peace and harmony, India failed to utilize these in projection of soft power in comparison to other great powers such as USA and China. India should evaluate its soft power diplomacy and needs to go back to drawing-board again. Gandhi and Gandhism give India two such powerful yet peaceful weapons which are very much need of hour for the entire

world and to all the regions of the world. The world is facing extreme religious radicalism today, wars are taking place over small pieces of land and there is unending fear of clash of nuclear powers in the world today; Gandhi's vision of non-violence and peaceful co-existence give the world the most powerful and potent weapon available in the world to give up on conflicts and wars. India can apply Gandhi and Gandhism as policies to show the world a path to global peace, harmony and peaceful co-existence and in this way can not only help in building more peaceful world but also elevate its position in terms of soft power globally.

❐

References :

1. *Nye, Joseph. (2004). The Means to Success in World Politics. NY: Public affairs, p. 5.*
2. *Ibid, pp. 6-7.*
3. *Ibid, p. 11.*
4. *Tharoor, Shashi. (2012). India as a Soft Power. India International Centre Quarterly, 38(3/4), 336.*
5. *Wagner, Christian. (2010). India's Soft Power: Prospects and Limitations. India Quarterly, 66 (4), 337.*
6. *PIB Press Release. (2003). CABINET COMMITTEE ON SECURITY REVIEWS PROGRESS IN OPERATIONALIZING INDIA'S NUCLEAR DOCTRINE. Prime Minister's Office, 4 June. Retrieved December 5, 2021, from https://archive.pib.gov.in/archive/releases98/lyr2003/rjan2003/04012003/r040120033.html*
7. *Parekh, Bhikhu. (2001). Gandhi: A Very Short Introduction. New York: Oxford University Press, p. 64.*
8. *Ministry of External Affairs. (2020). India and United Nations. Ministry of External Affairs, Government of India, 1 June. Retrieved December 6, 2021, from https://www.mea.gov.in/Portal/ForeignRelation/India_UN_2020.pdf*
9. *Ibid., p. 4.*
10. *Roy, Shubhajit. (2021). Explained: India and the world in the years after 9/11. The Indian Express, 16 September. Retrieved December 6, 2021, from https://indianexpress.com/article/explained/india-and-the-world-in-the-years-after-9-11-7513580/*
11. *Kifner, John. (2003). After The War: Other Forces; India Decides Not to Send Troops to Iraq Now. The New York Times, 15 July. Retrieved December 8, 2021, from https://www.nytimes.com/2003/07/15/world/after-the-war-other-forces-india-decides-not-to-send-troops-to-iraq-now.html*
12. *Gandhi, M.K. The Collected Works of Mahatma Gandhi, vol. 35, p. 385.*
13. *____. (2001). India Statement By MR. Omar Abdullah, MoS for External Affairs, India In World Conference Against Racism, Racial Discrimination, Xenophobia and Related Intolerance (2001, September 2). United Nations, 2 September. Retrieved December 10, 2021, from https://www.un.org/WCAR/statements/indiaE.htm*

पूर्वदेवा– सामाजिक विज्ञान शोध पत्रिका
वर्ष 29, अंक, 116, जनवरी–मार्च, 2024 पृ. 190–196

UGC Care Listed Journal
ISSN 0974 -1100

Nirad C. Chaudhary's The Autobiography of an Unknown Indian A Literature of Self – Discovery

Dr. Pramod Kumar
Asst. Professor, Dept. of English,
H.V.M. (P.G) College, Raisi, Haridwar, Uttarakhand
E-mail- pramodharidwar@gmail.com

Abstract

This article carefully attempts to analyse and evaluate Nirad C. Chaudhary's The Autobiography of an Unknown Indian. It impartially studies that an autobiography is truly a life story of a particular person authored by himself or herself. It critically appreciates a literary autobiography of Nirad C. Chaudhary and his moral, social, religious, cultural and intellectual development. It discovers distinctively Nirad's ideals, ideas and criticism regarding social vices and evils like casteism, Hindu-Muslim enmity, gender bias, superstition, explosion of population and poverty. It focuses judiciously on the views and visions of the autobiographer regarding sanitation, Indian nationalism, Indian and western culture. The autobiographer impartially unveils a real record of himself and his contemporaries. That is why his autobiography appears to have been a unique synthesis of his personal and impersonal account of his time. He authentically unveils his inner feelings of love for Gandhian ideologies and its relevant applicability to the present context. Since Nirad strongly appreciates England and its people, culture, customs and influence, he seems to be an inveterate anglophile in his The Autobiography of an Unknown Indian.

Key words: Autobiography, Discovery, Culture, Gender Bias, Nationalism, Intellectual, England

Nirad C. Chaudhary's *The Autobiography of an Unknown Indian* is authentically a non-fictional life story of the protagonist in a literary genre. It was firstly published in 1951. He introduces truly his life from his birth 1897. He authored skillfully it at the time when he was fifty years old. His autobiography essentially examines India historically, socially, spiritually, religiously and politically in early 20th century. It also unveils the condition of contemporary people into the British colonial

period. Self- Discovery is a compound word that means the identification and understanding of self through self- knowledge in auto biographical writing. It is really a literary representation in which an autobiographer studies judiciously his individual life, outer and inner personality, struggles, deeds, achievements, successes and his failures through the ability of self-knowledge. He creatively creates them later in his autobiographical creation with the presentation of an ideal character, a plot construction of well arranged events. The autobiographer artistically includes his factual and actual concepts, thoughts, influences, inspirations and his real experiences. In this context, in his book, *A Background to the Study of English Literature,* B. Prasad writes:

Its aim like that of the biography is a successful presentation of personality and in the best examples of the period to which the author belonged it obviously must suffer from a congenital defect it can never be complete for it must always come to an end before the death of the writer.[1] (p.236)

Indeed, an autobiography is really a literature of self-discovery authored by himself or herself. It is obviously concerned with the self-expression of the autobiographer. It must be a truthful account of a hero's life with the objective and dispassionate presentation. It is different from a biography as a biography is a life story of a great man written by somebody else while an autobiography is a life story of a great man authored by himself or herself. It is closely related to self-discovery. A literary significance of unveiling identity of self- discovery lies truly in this sense that it is clearly an inner exploration having a particular aim at understanding protagonist's literary values, faiths, passions and objectives of his life. Unveiling identity skillfully endeavors to uncover several aspects of his personal, emotional, social and cultural dimensions. This self-discovery of Identity tries to unveil a particulars combination of eminent traits that turns each common man into an uncommon man.Nirad C. Chaudhary's *The Autobiography of an Unknown Indian* consists of four books. These four books are further subdivided into a preface and four chapters. The first book is *Early Environment*. The second one is *First Twelve Years.* The third is *Education* and the last one is *Into the World*. The setting of his autobiography consciously begins in Kishoreganj, Bangladesh. The first book of his autobiography beautifully gives a vivid account of his birth place and the significant places where he became an ideal personality. He introduces his father who works in Kishoreganj municipality and his father used to earn enough money to buy immense literary books for his children. He becomes interestingly a good reader in his childhood. He proudly unveils himself as coming from a literary environment. Nirad writes:

Thus it happened that from my father I learned English without tears, although not without toil. But English was not the only thing in our education which he actively fostered Although his own interest was centered round language and literature he had enough instinctive soundness in matters of education to give us equal encouragement and facilities in other subjects, so that we might discover our real aptitudes.[1] (p.165)

Of course, Nirad learnt English from his father who was an intellectual. His father took a good responsibility for his children's education and career. The author was highly interested in the use of a language and not in the theory of grammar. Later, the entire family moves to Calcutta where he starts comprehensively his education. Nirad finds the educational institution boring and tiring. Through the self-efforts he passed the B.A degree with a distinction, but he failed to pass M.A. history degree. Here the autobiographer, Nirad unveils his failure publicly. On the other hand, along with teaching in English his father tells him regarding the Bangla literature and then Nirad developed an interest in literary books.This book is considerably dedicated to the remembrance of the British Empire in India. Since it made, shaped and quickened greatly India that was a good life for Indians. The autobiographer tells the reason why he authored his autobiography. He authored his autobiography not for Indian readers but for academic groups in the West under whose impact he rose and to whom he had all his scholars and academic achievements. It may seem as if Nirad was attempting to woo the western audience while criticizing and showing disrespect for Indian society and civilization. He believed that India cannot develop and flourish without western influences. Nirad's father was proficiently a successful criminal lawyer and the vice president of the Kishoreganj Municipality of Bangal who became an inspirational source for the author. As Gandhi was greatly impressed by his saintly mother, Putlibai in the same way Nirad was highly influenced by his pious mother, Sushila Sundarani Chaudhurani. In his autobiography, *The Story of My Experiments with Truth*, Gandhi himself reveals:

The outstanding impression my mother has left on my memory is that of saintliness. She was deeply religious. She would not think of taking her meals without her daily prayers. Going to Haveli - Vaishnava temple was one of her daily duties.[3] (p.04)

Of course, this study studies comparatively the similarity of religious impressions on both the characters, Gandhi and Nirad who were spiritually influenced by the religious nature of their mothers respectively. His parents were greatly influenced by Brahmosmaj and were ardent followers of the teachings of Raja Rammohan Roy. The author did not learn Sanskrit and was not interested in reading the English translations of literary text of Sanskrit. But he was enthusiastically interested in studying a lot of English literature since his childhood. He willingly studied Queen Victoria, Prince Albert, Napoleon, Shakespeare, Raphael, Milton, Burke, Warren Hastings, wellington, King Edward VII and others. The autobiographer writes:

It was by looking at the titles of his English books that I learned the names of Jane Austen, Charlotte Bronte and George Eliot as the greatest women writers in English literature My brother gave me the additional information that they were novelists of a new kind.[1] (p.315)

Undoubtedly, English writers and novelists influenced Nirad at the great extent. He studied Bankim Chandra Chatterjee and Vivekanand through modern Bengali literature. Nirad tells frankly that his mother was a spiritual minded woman

who hated falsehood, dishonesty and moral cowardice. She attempted to instil these moral virtues among her children. She was truly a pious woman. Here the autobiographer unveils the ways how she influenced Nirad greatly. Nirad writes The faults of character she disliked most were falsehood, dishonesty moral cowardice and meanness. A liar, a cheat, a coward and a person "with the tiny heart of minnow", as she put, were a the most contemptuous epithets we heard from her mouth. Not only did she condemn vice, she almost equally despised the tacit acceptance of an advantage.[2](P-176)

Indeed, his mother was a traditional and superstitious woman. She influenced Nirad morally while his father influenced him intellectually. Both his mother and father shaped Nirad's moral and intellectual character. This study evaluates evidently the influences of Bengal Renaissance. He unveils the religious influence in his formative years in four stages, first of all the most elementary belief in ghosts and spirit. The animistic duties and the practice of magic and ritual organized around this faith. Secondly, a polytheism both anthropomorphic and pantheistic and on the whole sunny and benign. Thirdly, the Brahmo monotheism. Fourthly, the pseudo- scientific. The autobiographer describes Brahmo Samaj as an organization whose morality was derived from Puritan Christianity. It led morally a moral crusade attacking four vices namely sensuality, drunkenness, dishonesty and falsehood. Nirad describes that none of these vices had reached diabolic proportions, since feebleness and passivity permeated even the vices. He was not a follower of the Brahmo Samaj. He was thoroughly imbued with the thoughts cultivated by the new cultural movement chiefly based on the rule of a combination of the values of the East and the West which exists in the name of the Indian Renaissance.It took about a hundred years for it coming to full development. Indian Renaissance had a strong influence on them. The development of Bengali humanism was a reflection of it. It was fully developed by the preaching and teaching of Michael Madhusudan Dutt and other Bengali scholars and reformers. Great reformers like Raja Ram Mohan Roy and Rabindranath Tagore preached and taught the Indian cultural Renaissance in the early of the 19th century. After their death, Nirad tells that the views and visions of the Indian Renaissance were subjugated and suppressed. The true villains were J.L. Nehru and Gandhi who threw over the chance of their youthful experience in England to refuse all that could have strengthened India.

This study evaluates dispassionately that during his boyhood, he studied works of Toru Dutt and Michael Madhusudan Dutt , who were financially strong. Both converted to Christianity in view of faith. The autobiographer honorably calls the greatest supporter and the greatest martyr of Bengali humanism. Nirad introduces himself as a critic of the Indian ways and systems. He was extensively influenced by British literature and social tradition. He showed a need for improvement. In his autobiography, Nirad focuses largely on the challenge of poverty. He unveils the problems of the poverty-stricken people in Indian life under the British Government Kishorganj. He informs frankly that the villagers used to drink water from the same river where they took baths along with other animals like cows and elephants. They

had to survive in sloppy conditions; moths, ants and centipedes were continuous companions. In the rainy days, they had to live with flies, while in winter days, mosquitoes made their life annoying. They had not any inhibitory sources for such conditions. Whenever the people got the insect bite, they could obtain the only remedy that was the mixture of mustard oils and slaked lime which was worse than a disease in it. They had to survive in such unhygienic conditions that caused for disease like cholera. It was a very frequent visitor in their life.

As a critic of contemporary Indian national life, Nirad describes vividly the population explosion was one of the most severe problems for Indians, because population explosion also becomes the sole cause of many other problems in Indian national life such as lack of food, hospital facilities and jobs. As a result the Indians have to survive in a very dishearting conditions. This study impartially shows how the problem of cleanliness becomes worse. It is one of other several problems in overcrowded urban places throughout Indian society in general and in a city like Calcutta in particular. The sewage system of these cities was not well in rainy days. The situation becomes worse. Nirad describes briefly the issue of gender bias that was largely prevalent in Indian society. Women were totally considered an object of lust. They have no right to speak according to their own choice. They have always been harassed in the name of pride of family or in the name of custom and tradition. The autobiographer justifies judiciously gender bias through an example of his aunt. He mentions when his aunt became a widow at an early age, a marriage proposal came from the richest landlord of the town but he was considered rather inferior in status by the autobiographer's family.As a critic the autobiographer criticizes strongly the caste system of India. He mentions the names of social reformers like Gandhi, Nehru, Subhas Chandra Bose, Sharat Chandra Bose and others regarding the social movement against caste system. But he does not mention the name of Dr. B.R. Ambedkar throughout his autobiography. He knowingly ignores Ambedkar's social movement regarding untouchability. The autobiographer writes:

For many years Mr. Subhas Chandra Bose remained a total stranger to my eyes. I was the bad books of the police as a follower of his, but, actually, I met neither him nor his elder brother, Mr. Sarat Chandra Bose before 1937, when I become the elder Bose's secretary. My first sight of Mahatma Gandhi dates as late as 1934 ar 1935, and that too was a blurred vision.[2] (p.284)

Indeed, the author was brought into the direct individual contact with important people, movements and literary activities by his father. Nirad criticizes sternly the class consciousness that is explicitly unveiled by the author when he narrates the customs and tradition of his family. He tells that his family avoided having meals with those people who were inferior to them in position and status. Nirad criticizes fearlessly the superstitious society of India and believed that their superstitions encouraged British society to discriminate against Indians. He unveils a matter in his autobiography that once a Brahmin contractor's cow was cruelly strangled to death. All the other Brahmins gathered and punished the contractor for committing the sin,

he was treated worse than an animal. All these weaknesses of the Hindu culture persuaded immorally Britishers to the immoral deeds towards Indian people. Nirad focuses largely on Hindu - Muslim riots in his autobiography. He discusses truly the bloody partition ensured Hindu-Muslim riots in 1947- The author unveils the reason why this catastrophic conflict came into being the seed of this conflict was hidden in the past which was sown long ago in the history when the Muslims attacked this country and conquered the Hindu Kings and afterwards ruled for a long time over India. He unveils the hostility between Hindus and Muslims was present since the beginning. Nirad divides beautifully Indian History into three cycles of Indian history cannot be doted. It came to light with the commencement of the third century B.C. When the historical records began properly to unveil the sequence of events in Indian History.

The second cycle begins with the defeat of Prithviraj Chauhan by Muhammad Gori in 1192 A.D. and comes to a close in 1757, The third cycle began towards the middle of the 18th century and is still continuing. Foreign influences in Indian History are largely uncommon in their character and are also uncommon in their execution and outcome. The autobiographer focuses largely on the subjugation of India by Muslim attackers. This study analyses the several reasons why Islam was declined in India. He focuses largely on the decline of Mughal Empire. Nirad refutes the argument that Islam fell in India because of Aurangzeb's intolerance. Other Muslim rulers were partly tolerant of Hinduism. Nirad focuses largely on Gandhi and his Civil disobedience movement of 1930. Nirad was fully a passionate supporter of Gandhi's way of life and his non-violent methods. The autobiographer states:

In all these changes of mood and affiliations between 1921 and 1930 I was governed wholly by blind impulses. I did not understand the reasons for my moods for the nature of Gandhism and I do not think that there was better understanding of the tremendous phenomenon of Gandhian politics anywhere else.[2] (p.447)

Of course, Gandhian ideology greatly influenced Nirad. True nationalism began with the emergence of Gandhi's leadership on the Indian political struggle. Gandhi's Satyagraha could awaken the common masses and could convert this freedom movement into a mass movement. Hindu nationalism had been directed against the Muslim invaders. After the decline of the Muslim empire. Muslims also knowingly shaped a united front with the Hindus in their struggle against the Britishers. Thus Hindu nationalism became fully Indian nationalism at that time. Nirad mentions the names of Ram Mohan Roy who was unanimously the pioneer of Indian nationalism. Bankim Chandra Chatterji and Swami Vivekananda were ardent lovers of their nation. They awakened the feelings of emotional affinity that shaped a true spirit of Indian nationalism.

We judiciously discover that Nirad's *The Autobiography of an Unknown Indian* is authentically an inner exploration of the protagonist's personality and the several changes that occur in his life. An autobiography is distinctively a realistic literature of self-discovery that is an understanding of the character - hero, his fee-

lings, abilities, struggles, rise, fall and failures in relation to his thoughts of nationalism and internationalism. We evidently discover that a literary value of Nirad's *The Autobiography of an Unknown Indian* lies relevantly in this sense that it introduces significantly the story of modern Indian culture, civilization and his love for England and its influential culture and people from his own independent self- discovery. Nirad's thoughts of a unique combination of Eastern and Western culture are very much relevant to the nation, since the influence of English language and literature predominates effectively in the writing of Indian people. Old culture is constitutionally obsolete and outdated. It cannot be revitalized anymore. A few significant foreign influences are must to bring the nation once again into the mainstream of humanistic development and progress. Afterwards India can considerably proceed ahead to greater heights.

❒

References :

1. *Prasad, B. A Background to the Study of English Literature. Madras: Macmillan India Limited, 2005.*
2. *Chaudhary, Nirad, C. The Autobiography of an Unknown Indian. Mumbai Jaico Publishing House, 1964.*
3. *Gandhi, M.K. The Story of My Experiments with Truth. Ahmadabad: Navjivan Publishing House, 2003.*

समाचार पत्र के स्वामित्व एवं अन्य विवरण के संबंध में घोषणा

(फार्म–4 नियम–7)

1.	समाचार पत्र का नाम	:	**पूर्वदेवा**
2.	प्रकाशन का स्थान	:	मध्यप्रदेश दलित साहित्य अकादमी, बाणभट्ट मार्ग, सेन्ट्रल स्कूल के सामने उज्जैन (म.प्र.) 456 010
3.	प्रकाशन अवधि	:	त्रैमासिक
4.	मुद्रक का नाम	:	पूनमचन्द बैरवा
	राष्ट्रीयता	:	भारतीय
	व पता	:	मध्यप्रदेश दलित साहित्य अकादमी, बाणभट्ट मार्ग, सेन्ट्रल स्कूल के सामने उज्जैन (म.प्र.) 456 010
5.	प्रकाशक का नाम	:	––– तदैव –––
	राष्ट्रीयता	:	
	व पता	:	
6.	सम्पादक का नाम	:	डॉ. हरिमोहन धवन
	राष्ट्रीयता	:	भारतीय
	व पता	:	मध्यप्रदेश दलित साहित्य अकादमी, बाणभट्ट मार्ग, सेन्ट्रल स्कूल के सामने उज्जैन (म.प्र.) 456 010
7.	स्वामी का नाम	:	''मध्यप्रदेश दलित साहित्य अकादमी''
	व पता	:	बाणभट्ट मार्ग, सेन्ट्रल स्कूल के सामने उज्जैन (म.प्र.) 456 010

मैं पूनमचन्द बैरवा एतद् द्वारा घोषित करता हूँ कि मेरी अधिकतम जानकारी एवं विश्वास के अनुसार ऊपर दिया गया विवरण सत्य है ।

हस्ताक्षर

पूनमचन्द बैरवा

प्रकाशक

उज्जैन

दिनांक : **31 मार्च, 2024**

पूर्वदेवा

मध्यप्रदेश दलित साहित्य अकादमी की सामाजिक विज्ञान शोध पत्रिका

'पूर्वदेवा' के प्रकाशन का उद्देश्य मुख्यतः भारतीय समाज व्यवस्था में व्याप्त मानवीय विषमताओं के उन्मूलन, दलितों में मानवीय-अस्मिताबोध एवं अधिकार-चेतना उत्पन्न करने और तद्जनित सामाजिक परिवर्तन की भूमिका तैयार कर मानवीय मूल्यों की स्थापना के निमित्त ऐतिहासिक एवं सामाजिक आधार पर विविधपक्षीय, तथ्यपूर्ण एवं शोधपरक अध्ययन एवं चिंतन को प्रवर्त्त करना है। जिससे कि दलित, सर्वहारा वर्ग का सामाजिक, सांस्कृतिक, धार्मिक, राजनीतिक, आर्थिक, शैक्षणिक आदि क्षेत्रों में समुचित विकास एवं मानवीय सम्मान का मार्ग प्रशस्त किया जा सके।

अतएव, इस हेतु विद्वान लेखकों, अनुसंधानकर्ताओं से मौलिक लेख, शोध आलेख एवं अनुभवजन्य, तथ्यपरक लेख, पुस्तक समीक्षाएँ प्रकाशनार्थ सादर आमंत्रित हैं।

- लेखको से आग्रह है कि अपने लेख सुवाच्य अक्षरों में टंकित **Word** एवं **Pdf** फार्मेट में ई-मेल द्वारा **E-mail : mpdsaujn@gmail.com** पर भेजें।
- लेख सामान्यतः हिन्दी में लिखे हों। विशेष स्थिति में अंग्रेजी भाषा में लिखे गये लेख भी स्वीकार किये जा सकेंगे। लेख अन्यत्र प्रकाशित नहीं होना चाहिये।
- सम्पादक मंडल कोकिसी भी लेख कोप्रकाशन हेतु स्वीकृत अथवा अस्वीकृत करनेका पूर्ण अधिकार है।

पूर्वदेवा का सतत् प्रकाशन सुधी पाठकों एवं लेखकों के उदार सहयोग पर निर्भर है।
अतएव विशेष अनुरोध है कि पूर्वदेवा के ग्राहक बनकर, अपना आत्मीय सहयोग प्रदान करें ।

ग्राहक शुल्क की दरें (**Rates of Subscription**) इस प्रकार हैं-

✲	आजीवन शुल्क	संस्थागत रू.7500/-	वैयक्तिक रू.6500/-
✲	वार्षिक शुल्क	संस्थागत रू.350/-	वैयक्तिक रू.300/-

Book Post

प्रति,

_____

_____

_____

क्रयादेश एवं शुल्क सहित सभी प्रकार के पत्र व्यवहार का पता :

मध्यप्रदेश दलित साहित्य अकादमी

बाणभट्ट मार्ग, सेंटल स्कूल के सामने, उज्जैन(म.प्र.) 456010

म.प्र.दलित साहित्य अकादमी के लिये पी.सी बैरवा द्वारा
न्यू गुलाब प्रिन्टर्स, उज्जैन-से मुद्रित एवं बाणभट्ट मार्ग, उज्जैन(म.प्र) से प्रकाशित
सम्पादन- डॉ.हरिमोहन धवन

आर.एन.आई.रजिस्टेशन नं. 61954/95 ISSN 0974-1100